॥ श्रीहरिः ॥

1136

वैशाख, कार्तिक, माघ-मास माहात्म्य

गीताप्रेस गोरखपुर
GITA PRESS, GORAKHPUR [SINCE 1923]

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

वैशाख-माहात्म्य (पद्मपुराणके अनुसार)

विषय	पृष्ठ-संख्या

कार्तिक-माहात्म्य (स्कन्दपुराणके अनुसार)

विषय	पृष्ठ-संख्या

कार्तिक-माहात्म्य (पद्मपुराणके अनुसार)

माघ-माहात्म्य (पद्मपुराणके अनुसार)

❑❑

॥श्रीहरिः॥

वैशाख-माहात्म्य

भगवद्भक्तिके लक्षण तथा वैशाख-स्नानकी महिमा

अम्बरीष बोले—मुनिश्रेष्ठ! आपने बड़ी अच्छी बात बतायी, इसके लिये आपको धन्यवाद है! आप सम्पूर्ण लोकोंपर अनुग्रह करनेवाले हैं। आपने भगवान् विष्णुके सगुण एवं निर्गुण ध्यानका वर्णन किया; अब आप भक्तिका लक्षण बतलाइये। साधुओंपर कृपा करनेवाले महर्षे! मुझे यह समझाइये कि किस मनुष्यको कब, कहाँ, कैसी और किस प्रकार भक्ति करनी चाहिये?

सूतजी कहते हैं—राजाओंमें श्रेष्ठ महाराज अम्बरीषके ये वचन सुनकर देवर्षि नारदजीको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे उनसे बोले—राजन्! सुनो, भगवान्‌की भक्ति समस्त पापोंका नाश करनेवाली है, मैं तुमसे उस भक्तिका भलीभाँति वर्णन करता हूँ। भक्ति अनेकों प्रकारकी बतायी गयी है—मानसी, वाचिकी, कायिकी, लौकिकी, वैदिकी तथा आध्यात्मिकी। ध्यान, धारणा, बुद्धि तथा वेदार्थके चिन्तनद्वारा जो विष्णुको प्रसन्न करनेवाली भक्ति की जाती है, उसे 'मानसी' भक्ति कहते हैं। दिन-रात अविश्रान्त भावसे वेदमन्त्रोंके उच्चारण, जप तथा आरण्यक आदिके पाठद्वारा जो भगवान्‌की प्रसन्नताका सम्पादन किया जाता है, उसका नाम 'वाचिकी' भक्ति है। व्रत, उपवास और नियमोंके पालन तथा पाँचों इन्द्रियोंके संयमद्वारा की जानेवाली आराधना [शरीरसे साध्य होनेके कारण] 'कायिकी' भक्ति कही गयी है; यह सब प्रकारकी सिद्धियोंका सम्पादन करनेवाली है। पाद्य, अर्घ्य आदि उपचार, नृत्य, वाद्य, गीत, जागरण तथा पूजन आदिके द्वारा जो भगवान्‌की सेवा की जाती है, उसे 'लौकिकी' भक्ति कहते हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदके जप, संहिताओंके अध्ययन आदि

तथा हविष्यकी आहुति—यज्ञ-यागादिके द्वारा की जानेवाली उपासनाका नाम 'वैदिकी' भक्ति है। विज्ञ पुरुषोंने अमावास्या, पूर्णिमा तथा विषुव* (तुला और मेषकी संक्रान्ति) आदिके दिन जो याग करनेका आदेश दिया है, वह वैदिकी भक्तिका साधक है।

अब मैं योगजन्य आध्यात्मिकी भक्तिका भी वर्णन करता हूँ, सुनो। योगज भक्तिका साधक सदा अपनी इन्द्रियोंको संयममें रखकर प्राणायामपूर्वक ध्यान किया करता है। विषयोंसे अलग रहता है। वह ध्यानमें देखता है—भगवान्‌का मुख अनन्त तेजसे उद्दीप्त हो रहा है, उनकी कटिके ऊपरी भागतक लटका हुआ यज्ञोपवीत शोभा पा रहा है। उनका शुक्ल वर्ण है, चार भुजाएँ हैं। उनके हाथोंमें वरद एवं अभयकी मुद्राएँ हैं। वे पीत वस्त्र धारण किये हुए हैं तथा उनके नेत्र अत्यन्त सुन्दर हैं। वे प्रसन्नतासे परिपूर्ण दिखायी देते हैं। राजन्! इस प्रकार योगयुक्त पुरुष अपने हृदयमें परमेश्वरका ध्यान करता है।

जैसे प्रज्वलित अग्नि काष्ठको भस्म कर डालती है, उसी प्रकार भगवान्‌की भक्ति मनुष्यके पापोंको तत्काल दग्ध कर देती है। भगवान् श्रीविष्णुकी भक्ति साक्षात् सुधाका रस है, सम्पूर्ण रसोंका एकमात्र सार है। इस पृथ्वीपर मनुष्य जबतक उस भक्तिका श्रवण नहीं करता—उसका आश्रय नहीं लेता, तभीतक उसे सैकड़ों बार जन्म, मृत्यु और जराके आघातसे होनेवाले नाना प्रकारके दैहिक दुःख प्राप्त होते हैं। यदि महान् प्रभावशाली भगवान् अनन्तका कीर्तन और स्मरण किया जाय तो वे समस्त पापोंका नाश कर देते हैं, ठीक उसी तरह, जैसे वायु मेघका तथा सूर्यदेव अन्धकारका विनाश कर डालते हैं। राजन्! देवपूजा, यज्ञ, तीर्थ-स्नान, व्रतानुष्ठान, तपस्या और नाना प्रकारके कर्मोंसे

* जब दिन और रात बराबर हों, उस दिन विषुवयोग होता है।

भी अन्तःकरणकी वैसी शुद्धि नहीं होती, जैसी भगवान् अनन्तका ध्यान करनेसे होती है।* नरनाथ! जिनमें पवित्र यशवाले तथा अपने भक्तोंको भक्ति प्रदान करनेवाले विशुद्धस्वरूप भगवान् श्रीविष्णुका कीर्तन होता है, वे ही कथाएँ शुद्ध हैं तथा वे ही यथार्थ, वे ही लाभ पहुँचानेवाली और वे ही हरिभक्तोंके कहने-सुनने योग्य होती हैं। भूमण्डलके राज्यका भार सँभालनेवाले धीरचित्त महाराज अम्बरीष! तुम धन्य हो; क्योंकि तुम्हारा हृदय पुरुषोत्तमके ध्यानमें एकतान हो रहा है तथा सौभाग्यलक्ष्मीसे सुशोभित होनेवाली तुम्हारी नैष्ठिक बुद्धि श्रीकृष्णचन्द्रकी पुण्यमयी लीलाओंके श्रवणमें प्रवृत्त हो रही है। भूपते! भक्तोंको वरदान देनेवाले अविनाशी भगवान् श्रीविष्णुकी भक्तिपूर्वक आराधना किये बिना अहंकारवश अपनेको ही बड़ा माननेवाले पुरुषका कल्याण कैसे होगा। भगवान् मायाके जन्मदाता हैं, उनपर मायाका प्रभाव नहीं पड़ता। साधु पुरुष उन्हें भक्तिके द्वारा ही प्राप्त करते हैं, इस बातको तुम भी जानते हो। राजन्! धर्मका कोई भी तत्त्व ऐसा नहीं है, जो तुम्हें ज्ञात न हो। फिर भी जिनके चरण ही तीर्थ हैं, उन भगवान्की चर्चाका प्रसंग उठाकर जो तुम उनकी सरस कथाको मुझसे विस्तारके साथ पूछ रहे हो—उसमें यही कारण है कि तुम वैष्णवोंका गौरव बढ़ाना चाहते हो—मुझ-जैसे लोगोंको आदर दे रहे हो। साधु-संत जो एक-दूसरेसे मिलनेपर अधिक श्रद्धाके साथ भगवान् अनन्तके कल्याणमय गुणोंका कीर्तन और श्रवण करते हैं, इससे बढ़कर परम संतोषकी बात तथा समुचित पुण्य मुझे और किसी कार्यमें नहीं दिखायी देता।

---

* न भूप देवार्चनयज्ञतीर्थस्नानव्रताचारक्रियातपोभिः।
तथा विशुद्धिं लभतेऽन्तरात्मा यथा हृदिस्थे भगवत्यनन्ते॥
(८५। २८)

ब्राह्मण, गौ, सत्य, श्रद्धा, यज्ञ, तपस्या, श्रुति, स्मृति, दया, दीक्षा और संतोष—ये सब श्रीहरिके स्वरूप हैं। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, पृथ्वी, जल, आकाश, दिशाएँ, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा सम्पूर्ण प्राणी उस परमेश्वरके ही स्वरूप हैं। इस चराचर जगत्को उत्पन्न करनेकी शक्ति रखनेवाले वे विश्वरूप भगवान् स्वयं ही ब्राह्मणके शरीरमें प्रवेश करके सदा उन्हें खिलाया जानेवाला अन्न भोजन करते हैं; इसलिये जिनकी चरण-रेणु तीर्थके समान है, भगवान् अनन्त ही जिनके आधार हैं, जो सम्पूर्ण प्राणियोंके आत्मा तथा पुण्यमयी लक्ष्मीके सर्वस्व हैं, उन ब्राह्मणोंका आदरपूर्वक पूजन करो। जो विद्वान् ब्राह्मणको विष्णुबुद्धिसे देखता है, वही सच्चा वैष्णव है तथा वही अपने धर्ममें भलीभाँति स्थित माना जाता है। तुमने भक्तिके लक्षण सुननेके लिये प्रार्थना की थी, सो सब मैंने तुम्हें सुना दिया। अब गंगा-स्नान करनेके लिये जा रहा हूँ।

यह वैशाखका महीना उपस्थित है, जो भगवान् लक्ष्मीपतिको अत्यन्त प्रिय है। इसकी भी आज शुक्ला सप्तमी है; इसमें गंगाका स्नान अत्यन्त दुर्लभ है। पूर्वकालमें राजा जह्नुने वैशाख शुक्ला सप्तमीको क्रोधमें आकर गंगाजीको पी लिया था और फिर अपने दाहिने कानके छिद्रसे उन्हें बाहर निकाला था; अतः जह्नुकी कन्या होनेके कारण गंगाको 'जाह्नवी' कहते हैं। इस तिथिको स्नान करके जो आकाशकी मेखलाभूत गंगादेवीका उत्तम विधानके साथ पूजन करता है, वह मनुष्य धन्य एवं पुण्यात्मा है। जो वैशाख शुक्ला सप्तमीको विधिपूर्वक गंगामें देवताओं और पितरोंका तर्पण करता है, उसे गंगादेवी कृपा-दृष्टिसे देखती हैं तथा वह स्नानके पश्चात् सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। वैशाखके समान कोई मास नहीं है तथा गंगाके सदृश दूसरी कोई नदी नहीं है। इन दोनोंका संयोग दुर्लभ है। भगवान्की भक्तिसे ही ऐसा सुयोग

प्राप्त होता है। गंगाजीका प्रादुर्भाव भगवान् श्रीविष्णुके चरणोंसे हुआ है। वे ब्रह्मलोकसे आकर भगवान् शंकरके जटा-जूटमें निवास करती हैं। गंगा समस्त दु:खोंका नाश करनेवाली हैं। वे अपने तीन स्रोतोंसे निरन्तर प्रवाहित होकर तीनों लोकोंको पवित्र करती रहती हैं। उन्हें स्वर्गपर चढ़नेके लिये सीढ़ी माना गया है। वे सदा आनन्द देनेवाली, नाना प्रकारके पापोंको हरनेवाली, संकटसे तारनेवाली, भक्तजनोंके अन्त:करणमें दिव्य प्रकाश फैलानेकी लीलासे सुशोभित होनेवाली, सगरके पुत्रोंको मोक्ष प्रदान करनेवाली, धर्म-मार्गमें लगानेवाली तथा तीन मार्गोंसे प्रवाहित होनेवाली हैं। गंगादेवी तीनों लोकोंका श्रृंगार हैं। वे अपने दर्शन, स्पर्श, स्नान, कीर्तन, ध्यान और सेवनसे हजारों पवित्र तथा अपवित्र पुरुषोंको पावन बनाती रहती हैं। जो लोग दूर रहकर भी तीनों समय 'गंगा, गंगा, गंगा' इस प्रकार उच्चारण करते हैं, उनके तीन जन्मोंका पाप गंगाजी नष्ट कर देती हैं। जो मनुष्य हजार योजन दूरसे भी गंगाका स्मरण करता है, वह पापी होनेपर भी उत्तम गतिको प्राप्त होता है।

राजन्! वैशाख शुक्ला सप्तमीको गंगाजीका दर्शन विशेष दुर्लभ है। भगवान् श्रीविष्णु और ब्राह्मणोंकी कृपासे ही उस दिन उनकी प्राप्ति होती है। माधव (वैशाख)-के समान महीना और माधव (विष्णु)-के समान कोई देवता नहीं है; क्योंकि पापके समुद्रमें डूबते हुए मनुष्यके लिये माधव ही जहाजका काम देते हैं। माधवमासमें जो भक्तिपूर्वक दान, जप, हवन और स्नान आदि शुभ कर्म किये जाते हैं, उनका पुण्य अक्षय तथा सौ करोड़गुना अधिक होता है। जिस प्रकार देवताओंमें विश्वात्मा भगवान् नारायणदेव श्रेष्ठ हैं, जैसे जप करनेयोग्य मन्त्रोंमें गायत्री सबसे उत्कृष्ट है, उसी प्रकार नदियोंमें गंगाजीका स्थान सबसे ऊँचा है। जैसे सम्पूर्ण स्त्रियोंमें पार्वती, तपनेवालोंमें सूर्य, लाभोंमें आरोग्यलाभ, मनुष्योंमें ब्राह्मण,

पुण्योंमें परोपकार, विद्याओंमें वेद, मन्त्रोंमें प्रणव, ध्यानोंमें आत्मचिन्तन, तपस्याओंमें सत्य और स्वधर्म-पालन, शुद्धियोंमें आत्मशुद्धि, दानोंमें अभयदान तथा गुणोंमें लोभका त्याग ही सबसे प्रधान माना गया है, उसी प्रकार सब मासोंमें वैशाखमास अत्यन्त श्रेष्ठ है। पापोंका अन्त वैशाखमासमें प्रातःस्नान करनेसे होता है। अन्धकारका अन्त सूर्यके उदयसे तथा पुण्योंका अन्त दूसरोंकी बुराई और चुगली करनेसे होता है। राजन्! कार्तिकमासमें जब सूर्य तुलाराशिपर स्थित हों, उस समय जो स्नान-दान आदि पुण्यकार्य किया जाता है, उसका पुण्य परार्धगुना* अधिक होता है। माघमासमें जब मकरराशिपर सूर्य हों तो कार्तिककी अपेक्षा भी हजारगुना उत्तम फल होता है और वैशाखमासमें मेषकी संक्रान्ति होनेपर माघसे भी सौगुना अधिक पुण्य होता है। वे ही मनुष्य पुण्यात्मा और धन्य हैं, जो वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके विधि-विधानसे भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा करते हैं। वैशाखमासमें सबेरेका स्नान, यज्ञ, दान, उपवास, हविष्य-भक्षण तथा ब्रह्मचर्यका पालन—ये महान् पातकोंका नाश करनेवाले हैं। राजन्! कलियुगमें वैशाखकी महिमा गुप्त नहीं रहने पायगी; क्योंकि उस समय वैशाख-स्नानका माहात्म्य अश्वमेध-यज्ञके अनुष्ठानसे भी बढ़कर है। कलियुगमें परमपावन अश्वमेध-यज्ञका अनुष्ठान नहीं हो सकता। उस समय वैशाखमासका स्नान ही अश्वमेध-यज्ञके समान विहित है। कलियुगके अधिकांश मनुष्य पापी होंगे। उनकी बुद्धि पापमें ही आसक्त होगी; अतः वे अश्वमेधके पुण्यको, जो स्वर्ग और मोक्षरूप फल प्रदान करनेवाला है, नहीं जान सकेंगे। उस समयके लोग अपने पापोंके कारण नरकमें पड़ेंगे। अतएव कलियुगके लिये अश्वमेधका प्रचार

* संख्याकी पराकाष्ठाका नाम 'परार्ध' है। आधुनिक गणनाके अनुसार यह संख्या 'शंख' या 'महाशंख' कहलाती है।

कम कर दिया गया [और उसके स्थानपर वैशाखमासके स्नानका विधान किया गया]।

❑❑

वैशाख-माहात्म्य

सूतजी कहते हैं—महात्मा नारदके ये वचन सुनकर राजर्षि अम्बरीषने विस्मित होकर कहा—'महामुने! आप मार्गशीर्ष (अगहन) आदि पवित्र महीनोंको छोड़कर वैशाखमासकी ही इतनी प्रशंसा क्यों करते हैं? उसीको सब मासोंमें श्रेष्ठ क्यों बतलाते हैं? यदि माधवमास सबसे श्रेष्ठ और भगवान् लक्ष्मीपतिको अधिक प्रिय है तो उस समय स्नान करनेकी क्या विधि है? वैशाखमासमें किस वस्तुका दान, कौन-सी तपस्या तथा किस देवताका पूजन करना चाहिये? कृपानिधे! उस समय किये जानेवाले पुण्यकर्मका आप मुझे उपदेश कीजिये। सद्गुरुके मुखसे उपदेशकी प्राप्ति दुर्लभ होती है। उत्तम देश और कालका मिलना भी बड़ा कठिन होता है। राज्य-प्राप्ति आदि दूसरे कोई भी भाव हमारे हृदयको इतनी शीतलता नहीं प्रदान करते, जितनी कि आपका यह समागम।

नारदजीने कहा—राजन्! सुनो, मैं संसारके हितके लिये तुमसे माधवमासकी विधिका वर्णन करता हूँ। जैसा कि पूर्वकालमें ब्रह्माजीने बतलाया था। पहले तो जीवका भारतवर्षमें जन्म होना ही दुर्लभ है, उससे भी अधिक दुर्लभ है—वहाँ मनुष्यकी योनिमें जन्म। मनुष्य होनेपर भी अपने-अपने धर्मके पालनमें प्रवृत्ति होनी तो और भी कठिन है। उससे भी अत्यन्त दुर्लभ है—भगवान् वासुदेवमें भक्ति और उसके होनेपर भी माधवमासमें स्नान आदिका सुयोग मिलना तो और भी कठिन है। माधवमास माधव (लक्ष्मीपति)-

को बहुत प्रिय है। माधव (वैशाख)-मासको पाकर जो विधिपूर्वक स्नान, दान तथा जप आदिका अनुष्ठान करते हैं, वे ही मनुष्य धन्य एवं कृतकृत्य हैं। उनके दर्शनमात्रसे पापियोंके भी पाप दूर हो जाते हैं और वे भगवद्भावसे भावित होकर धर्माचरणके अभिलाषी बन जाते हैं। वैशाखमासके जो एकादशीसे लेकर पूर्णिमातक अन्तिम पाँच दिन हैं, वे समूचे महीनेके समान महत्त्व रखते हैं। राजेन्द्र! जिन लोगोंने वैशाखमासमें भाँति-भाँतिके उपचारोंद्वारा मधु दैत्यके मारनेवाले भगवान् लक्ष्मीपतिका पूजन कर लिया, उन्होंने अपने जन्मका फल पा लिया। भला, कौन-सी ऐसी अत्यन्त दुर्लभ वस्तु है जो वैशाखके स्नान तथा विधिपूर्वक भगवान्के पूजनसे नहीं प्राप्त होती। जिन्होंने दान, होम, जप, तीर्थमें प्राणत्याग तथा सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाले भगवान् श्रीनारायणका ध्यान नहीं किया, उन मनुष्योंका जन्म इस संसारमें व्यर्थ ही समझना चाहिये। जो धनके रहते हुए भी कंजूसी करता है, दान आदि किये बिना ही मर जाता है, उसका धन व्यर्थ है।

राजन्! उत्तम कुलमें जन्म, अच्छी मृत्यु, श्रेष्ठ भोग, सुख, सदा दान करनेमें अधिक प्रसन्नता, उदारता तथा उत्तम धैर्य— ये सब कुछ भगवान् श्रीविष्णुकी कृपासे ही प्राप्त होते हैं। महात्मा नारायणके अनुग्रहसे ही मनोवांछित सिद्धियाँ मिलती हैं। जो कार्तिकमें, माघमें तथा माधवको प्रिय लगनेवाले वैशाखमासमें स्नान करके मधुहन्ता लक्ष्मीपति दामोदरकी विशेष विधिके साथ भक्तिपूर्वक पूजा करता है और अपनी शक्तिके अनुसार दान देता है, वह मनुष्य इस लोकका सुख भोगकर अन्तमें श्रीहरिके पदको प्राप्त होता है। भूप! जैसे सूर्योदय होनेपर अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार वैशाखमासमें प्रातःस्नान करनेसे अनेक जन्मोंकी उपार्जित पापराशि नष्ट हो जाती है। यह बात ब्रह्माजीने मुझे

बतायी थी। भगवान् श्रीविष्णुने माधवमासकी महिमाका विशेष प्रचार किया है। अतः इस महीनेके आनेपर मनुष्योंको पवित्र करनेवाले पुण्यजलसे परिपूर्ण गंगातीर्थ, नर्मदातीर्थ, यमुनातीर्थ अथवा सरस्वतीतीर्थमें सूर्योदयके पहले स्नान करके भगवान् मुकुन्दकी पूजा करनी चाहिये। इससे तपस्याका फल भोगनेके पश्चात् अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति होती है। भगवान् श्रीनारायण अनामय—रोग-व्याधिसे रहित हैं, उन गोविन्ददेवकी आराधना करके तुम भगवान्‌का पद प्राप्त कर लोगे। राजन्! देवाधिदेव लक्ष्मीपति पापोंका नाश करनेवाले हैं, उन्हें नमस्कार करके चैत्रकी पूर्णिमाको इस व्रतका आरम्भ करना चाहिये। व्रत लेनेवाला पुरुष यमनियमोंका पालन करे, शक्तिके अनुसार कुछ दान दे, हविष्यान्न भोजन करे, भूमिपर सोये, ब्रह्मचर्यव्रतमें दृढ़तापूर्वक स्थित रहे तथा हृदयमें भगवान् श्रीनारायणका ध्यान करते हुए कृच्छ्र आदि तपस्याओंके द्वारा शरीरको सुखाये। इस प्रकार नियमसे रहकर जब वैशाखकी पूर्णिमा आये, उस दिन मधु तथा तिल आदिका दान करे, श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भक्तिपूर्वक भोजन कराये, उन्हें दक्षिणासहित धेनु-दान दे तथा वैशाख-स्नानके व्रतमें जो कुछ त्रुटि हुई हो उसकी पूर्णताके लिये ब्राह्मणोंसे प्रार्थना करे। भूपाल! जिस प्रकार लक्ष्मीजी जगदीश्वर माधवकी प्रिया हैं, उसी प्रकार माधवमास भी मधुसूदनको बहुत प्रिय है। इस तरह उपर्युक्त नियमोंके पालनपूर्वक बारह वर्षोंतक वैशाख-स्नान करके अन्तमें मधुसूदनकी प्रसन्नताके लिये अपनी शक्तिके अनुसार व्रतका उद्यापन करे। अम्बरीष! पूर्वकालमें ब्रह्माजीके मुखसे मैंने जो कुछ सुना था, वह सब वैशाखमासका माहात्म्य तुम्हें बता दिया।

अम्बरीषने पूछा—मुने! स्नानमें परिश्रम तो बहुत थोड़ा है,

फिर भी उससे अत्यन्त दुर्लभ फलकी प्राप्ति होती है—मुझे इसपर विश्वास क्यों नहीं होता? मुझे मोह क्यों हो रहा है?

नारदजीने कहा—राजन्! तुम्हारा संदेह ठीक है। थोड़े-से परिश्रमके द्वारा महान् फलकी प्राप्ति असम्भव-सी बात है; तथापि इसपर विश्वास करो, क्योंकि यह ब्रह्माजीकी बतायी हुई बात है। धर्मकी गति सूक्ष्म होती है, उसे समझनेमें बड़े-बड़े पुरुषोंको भी कठिनाई होती है। श्रीहरिकी शक्ति अचिन्त्य है, उनकी कृतिमें विद्वानोंको भी मोह हो जाता है। विश्वामित्र आदि क्षत्रिय थे, किन्तु धर्मका अधिक अनुष्ठान करनेके कारण वे ब्राह्मणत्वको प्राप्त हो गये; अतः धर्मकी गति अत्यन्त सूक्ष्म है। भूपाल! तुमने सुना होगा, अजामिल अपनी धर्मपत्नीका परित्याग करके सदा पापके मार्गपर ही चलता था। तथापि मृत्युके समय उसने केवल पुत्रके स्नेहवश 'नारायण' कहकर पुकारा—पुत्रका चिन्तन करके 'नारायण' का नाम लिया; किन्तु इतनेसे ही उसको अत्यन्त दुर्लभ पदकी प्राप्ति हुई। जैसे अनिच्छापूर्वक भी यदि आगका स्पर्श किया जाय तो वह शरीरको जलाती ही है, उसी प्रकार किसी दूसरे निमित्तसे भी यदि श्रीगोविन्दका नामोच्चारण किया जाय तो वह पापराशिको भस्म कर डालता है।* जीव विचित्र हैं, जीवोंकी भावनाएँ विचित्र हैं, कर्म विचित्र है तथा कर्मोंकी शक्तियाँ भी विचित्र हैं। शास्त्रमें जिसका महान् फल बताया गया हो, वही कर्म महान् है [फिर वह अल्प परिश्रम-साध्य हो या अधिक परिश्रम-साध्य]। छोटी-सी वस्तुसे भी बड़ी-से-बड़ी वस्तुका नाश होता देखा जाता है। जरा-सी चिनगारीसे बोझ-के-बोझ तिनके स्वाहा हो जाते हैं। जो श्रीकृष्णके भक्त हैं,

* अनिच्छयापि दहति स्पृष्टो हुतवहो यथा। तथा दहति गोविन्दनाम व्याजादपीरितम्॥ (८७।८)

उनके अनजानमें किये हुए हजारों हत्याओंसे युक्त भयंकर पातक तथा चोरी आदि पाप भी नष्ट हो जाते हैं। वीर! जिसके हृदयमें भगवान् श्रीविष्णुकी भक्ति है वह विद्वान् पुरुष यदि थोड़ा-सा भी पुण्य-कार्य करता है तो वह अक्षय फल देनेवाला होता है। अतः माधवमासमें माधवकी भक्तिपूर्वक आराधना करके मनुष्य अपनी मनोवांछित कामनाओंको प्राप्त कर लेता है—इस विषयमें संदेह नहीं करना चाहिये। शास्त्रोक्त विधिसे किया जानेवाला छोटे-से-छोटा कर्म क्यों न हो, उसके द्वारा बड़े-से-बड़े पापका भी क्षय हो जाता है तथा उत्तम कर्मकी वृद्धि होने लगती है। राजन्! भाव तथा भक्ति दोनोंकी अधिकतासे फलमें अधिकता होती है। धर्मकी गति सूक्ष्म है, वह कई प्रकारोंसे जानी जाती है। महाराज! जो भावसे हीन है—जिसके हृदयमें उत्तम भाव एवं भगवान्‌की भक्ति नहीं है, वह अच्छे देश और कालमें जा-जाकर जीवनभर पवित्र गंगा-जलसे नहाता और दान देता रहे तो भी कभी शुद्ध नहीं हो सकता—ऐसा मेरा विचार है। अतः अपने हृदय-कमलमें शुद्धभावकी स्थापना करके वैशाखमासमें प्रातःस्नान करनेवाला जो विशुद्धचित्त पुरुष भक्तिपूर्वक भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा करता है, उसके पुण्यका वर्णन करनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। अतः भूपाल! तुम वैशाखमासके फलके विषयमें विश्वास करो। छोटा-सा शुभकर्म भी सैकड़ों पापकर्मोंका नाश करनेवाला होता है। जैसे हरिनामके भयसे राशि-राशि पाप नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार सूर्यके मेषराशिपर स्थित होनेके समय प्रातःस्नान करनेसे तथा तीर्थमें भगवान्‌की स्तुति करनेसे भी समस्त पापोंका नाश हो जाता है।* जिस प्रकार गरुड़के तेजसे साँप भाग जाते हैं, उसी

* यथा हरेर्नामभयेन भूप नश्यन्ति सर्वे दुरितस्य वृन्दाः।
नूनं रवौ मेषगते विभाते स्नानेन तीर्थे च हरिस्तवेन॥ (८।३४)

तरह प्रातःकाल वैशाख-स्नान करनेसे पाप पलायन कर जाते हैं—यह निश्चित बात है। जो मनुष्य मेषराशिके सूर्यमें गंगा या नर्मदाके जलमें नहाकर एक, दो या तीनों समय भक्तिभावके साथ पाप-प्रशमन नामक स्तोत्रका पाठ करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर परम पदको प्राप्त होता है। 'अम्बरीष! इस प्रकार मैंने थोड़ेमें यह वैशाख-स्नानका सारा माहात्म्य सुना दिया, अब और क्या सुनना चाहते हो?'

❑❑

वैशाख-स्नानसे पाँच प्रेतोंका उद्धार तथा 'पाप-प्रशमन' नामक स्तोत्रका वर्णन

अम्बरीषने कहा—मुने! जिसके चिन्तनमात्रसे पापराशिका लय हो जाता है, उस पाप-प्रशमन नामक स्तोत्रको मैं भी सुनना चाहता हूँ। आज मैं धन्य हूँ, अनुगृहीत हूँ; आपने मुझे उस शुभ विधिका श्रवण कराया, जिसके सुननेमात्रसे पापोंका क्षय हो जाता है। वैशाखमासमें जो भगवान् केशवके कल्याणमय नामोंका कीर्तन किया जाता है, उसीको मैं संसारमें सबसे बड़ा पुण्य, पवित्र, मनोरम तथा एकमात्र सुकृतसे ही सुलभ होनेवाला शुभ कर्म मानता हूँ। अहो! जो लोग माधवमासमें भगवान् मधुसूदनके नामोंका स्मरण करते हैं वे धन्य हैं। अतः यदि आप उचित समझें तो मुझे पुनः माधवमासकी ही पवित्र कथा सुनायें।

सूतजी कहते हैं—राजाओंमें श्रेष्ठ हरिभक्त अम्बरीषका वचन सुनकर नारद मुनिको बड़ी प्रसन्नता हुई। यद्यपि वे वैशाख-स्नानके लिये जानेको उत्कण्ठित थे, तथापि सत्संगमें आनन्द आनेके कारण रुक गये और राजासे बोले।

नारदजीने कहा—महीपाल! मुझे ऐसा जान पड़ता है कि

यदि दो व्यक्तियोंमें परस्पर भगवत्कथा-सम्बन्धी सरस वार्तालाप छिड़ जाय तो वह अत्यन्त विशुद्ध—अन्तःकरणको शुद्ध करनेवाला होता है। आज तुम्हारे साथ जो माधवमासके माहात्म्यकी चर्चा चल रही है, यह वैशाख-स्नानकी अपेक्षा अधिक पुण्य प्रदान करनेवाली है; क्योंकि माधवमासके देवता भगवान् श्रीविष्णु हैं [अतः उसका कीर्तन भगवान्का ही कीर्तन है]। जिसका जीवन धर्मके लिये और धर्म भगवान्की प्रसन्नताके लिये है तथा जो रातों-दिन पुण्योपार्जनमें ही लगा रहता है, उसीको इस पृथ्वीपर मैं वैष्णव मानता हूँ। राजन्! अब मैं वैशाख-स्नानसे होनेवाले पुण्य-फलका संक्षेपसे वर्णन करता हूँ; विस्तारके साथ सारा वर्णन तो मेरे पिता—ब्रह्माजी भी नहीं कर सकते। वैशाखमें डुबकी लगानेमात्रसे समस्त पाप छूट जाते हैं। पूर्वकालकी बात है, कोई मुनीश्वर तीर्थयात्राके प्रसंगसे सर्वत्र घूम रहे थे। उनका नाम था मुनिशर्मा। वे बड़े धर्मात्मा, सत्यवादी, पवित्र तथा शम, दम एवं शान्तिधर्मसे युक्त थे। वे प्रतिदिन पितरोंका तर्पण और श्राद्ध करते थे। उन्हें वेदों और स्मृतियोंके विधानोंका सम्यक् ज्ञान था। वे मधुर वाणी बोलते और भगवान्का पूजन करते रहते थे। वैष्णवोंके संसर्गमें ही उनका समय व्यतीत होता था। वे तीनों कालोंके ज्ञाता, मुनि, दयालु, अत्यन्त तेजस्वी, तत्त्वज्ञानी और ब्राह्मणभक्त थे। वैशाखका महीना था, मुनिशर्मा स्नानके लिये नर्मदाके किनारे जा रहे थे। उसी समय उन्होंने अपने सामने पाँच पुरुषोंको देखा, जो भारी दुर्गतिमें फँसे हुए थे। वे अभी-अभी एक-दूसरेसे मिले थे! उनके शरीरका रंग काला था। वे एक बरगदकी छायामें बैठे थे और पापोंके कारण उद्विग्न होकर चारों ओर दृष्टिपात कर रहे थे। उन्हें देखकर द्विजवर मुनिशर्मा बड़े विस्मयमें पड़े और सोचने लगे—इस भयानक वनमें ये मनुष्य

कहाँसे आये? इनकी चेष्टा बड़ी दयनीय है, किन्तु इनका आकार बड़ा भयंकर दिखायी देता है। ये पापभागी चोर तो नहीं हैं? विप्रवर मुनिशर्माकी बुद्धि बड़ी स्थिर थी, वे ज्यों ही इस प्रकार विचार करने लगे, उसी समय उपर्युक्त पाँचों पुरुष उनके पास आये और हाथ जोड़कर मुनिशर्मासे बोले।

उन पुरुषोंने कहा—विप्रवर! हमें आप कल्याणमय पुरुषोत्तम जान पड़ते हैं। हम दुःखी जीव हैं। अपना दुःख विचारकर आपको बताना चाहते हैं। द्विजराज! आप कृपा करके हमारी कष्ट-कथा सुनें। दैववश जिनके पाप प्रकट हो गये हैं, उन दीन-दुःखी प्राणियोंके आधार आप-जैसे संत-महात्मा ही हैं। साधु पुरुष अपनी दृष्टिमात्रसे पीड़ितोंकी पीड़ाएँ हर लेते हैं। [अब उनमेंसे एकने सबका परिचय देना आरम्भ किया—] मैं पंचाल देशका क्षत्रिय हूँ, मेरा नाम नरवाहन है। मैंने मार्गमें मोहवश बाणद्वारा एक ब्राह्मणकी हत्या कर डाली। मुझसे ब्रह्म-हत्याका पाप हो गया है। इसलिये शिखा, सूत्र और तिलकसे रहित होकर इस पृथ्वीपर घूमता हूँ और सबसे कहता फिरता हूँ कि 'मैं ब्रह्महत्यारा हूँ।' मुझ महापापी ब्रह्मघातीको आप कृपाकी भिक्षा दें। इस दशामें पड़े-पड़े मुझे एक वर्ष बीत गया। मैं पापसे जल रहा हूँ। मेरा चित्त शोकसे व्याकुल है। तथा ये जो सामने दिखायी देते हैं, इनका नाम चन्द्रशर्मा है। ये जातिके ब्राह्मण हैं। इन्होंने मोहसे मलिन होकर गुरुका वध किया है। मगधदेशके निवासी हैं। इनके स्वजनोंने इनका परित्याग कर दिया है। ये भी घूमते-घामते दैवात् यहाँ आ पहुँचे हैं। इनके भी न शिखा है न सूत्र। ब्राह्मणका कोई भी चिह्न इनके शरीरमें नहीं रह गया है। इनके सिवा जो ये तीसरे व्यक्ति हैं, इनका नाम देवशर्मा है। स्वामिन्! ये भी बड़े कष्टमें हैं। ये भी जातिके ब्राह्मण हैं, किन्तु मोहवश

वेश्याकी आसक्तिमें फँसकर शराबी हो गये थे। इन्होंने भी पूछनेपर अपना सारा हाल सच-सच कह सुनाया है। अपने प्रथम पापाचारको याद करके इनके हृदयमें बड़ा संताप होता है। ये सदा मनस्तापसे पीड़ित रहते हैं। इनको इनकी स्त्रीने, बन्धु-बान्धवोंने तथा गाँवके सब लोगोंने वहाँसे निकाल दिया है। ये अपने उसी पापके साथ भ्रमण करते हुए यहाँ आये हैं। ये चौथे महाशय जातिके वैश्य हैं। इनका नाम विधुर है। ये गुरुपत्नीके साथ समागम करनेवाले हैं। इनकी माता मिथिलामें जाकर वेश्या हो गयी थी। इन्होंने मोहवश तीन महीनोंतक उसीका उपभोग किया है। परन्तु जब असली बातका पता लगा है तो बहुत दुःखी होकर पृथ्वीपर विचरते हुए ये भी यहाँ आ पहुँचे हैं। हममेंसे ये जो पाँचवें दिखायी दे रहे हैं, ये भी वैश्य ही हैं। इनका नाम नन्द है। ये पापियोंका संसर्ग करनेवाले महापापी हैं। इन्होंने प्रतिदिन धनके लालचमें पड़कर बहुत चोरी की है। पातकोंसे आक्रान्त हो जानेपर इन्हें स्वजनोंने त्याग दिया है। तब ये स्वयं भी खिन्न होकर दैवात् यहाँ आ पहुँचे हैं। इस प्रकार हम पाँचों महापापी एक स्थानपर जुट गये हैं। हम सब-के-सब दुःखोंसे घिरे हुए हैं। अनेकों तीर्थोंमें घूम आये, मगर हमारा घोर पातक नहीं मिटता। आपको तेजसे उद्दीप्त देखकर हमलोगोंका मन प्रसन्न हो गया है। आप-जैसे साधु पुरुषके पुण्यमय दर्शनसे हमारे पातकोंके अन्त होनेकी सूचना मिल रही है। स्वामिन्! कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे हमलोगोंके पापोंका नाश हो जाय। प्रभो! आप वेदार्थके ज्ञाता और परम दयालु जान पड़ते हैं; आपसे हमें अपने उद्धारकी बड़ी आशा है।

मुनिशर्माने कहा—तुमलोगोंने अज्ञानवश पाप किया, किन्तु इसके लिये तुम्हारे हृदयमें अनुताप है तथा तुम सब-के-सब

सत्य बोल रहे हो; इस कारण तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करना मेरा कर्तव्य है। मैं अपनी भुजा ऊपर उठाकर कहता हूँ, मेरी सत्य बातें सुनो। पूर्वकालमें जब मुनियोंका समुदाय एकत्रित हुआ था, उस समय मैंने महर्षि अंगिराके मुखसे जो कुछ सुना था, वही वेद-शास्त्रोंमें भी देखा; वह सबके लिये विश्वास करनेयोग्य है। मेरी आराधनासे संतुष्ट हुए स्वयं भगवान् विष्णुने भी पहले ऐसी ही बात बतायी थी। वह इस प्रकार है। भोजनसे बढ़कर दूसरा कोई तृप्तिका साधन नहीं है। पितासे बढ़कर कोई गुरु नहीं है। ब्राह्मणोंसे उत्तम दूसरा कोई पात्र नहीं है तथा भगवान् विष्णुसे श्रेष्ठ दूसरा कोई देवता नहीं है। गंगाकी समानता करनेवाला कोई तीर्थ, गोदानकी तुलना करनेवाला कोई दान, गायत्रीके समान जप, एकादशीके तुल्य व्रत, भार्याके सदृश मित्र, दयाके समान धर्म तथा स्वतन्त्रताके समान सुख नहीं है। गार्हस्थ्यसे बढ़कर आश्रम और सत्यसे बढ़कर सदाचार नहीं है। इसी प्रकार संतोषके समान सुख तथा वैशाखमासके समान महान् पापोंका अपहरण करनेवाला दूसरा कोई मास नहीं है। वैशाखमास भगवान् मधुसूदनको बहुत ही प्रिय है। गंगा आदि तीर्थोंमें तो वैशाख-स्नानका सुयोग अत्यन्त दुर्लभ है। उस समय गंगा, यमुना तथा नर्मदाकी प्राप्ति कठिन होती है। जो शुद्ध हृदयवाला मनुष्य भगवान्‌के भजनमें तत्पर हो पूरे वैशाखभर प्रातःकाल गंगा-स्नान करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर परम गतिको प्राप्त होता है।

इसलिये पुण्यके सारभूत इस वैशाखमासमें तुम सभी पातकी मेरे साथ नर्मदा-तटपर चलो और उसमें गोते लगाओ। नर्मदाके जलका मुनिलोग भी सेवन करते हैं, वह समस्त पापोंके भयका नाश करनेवाला है। मुनिके यों कहनेपर वे सब पापी उनके साथ अद्भुत पुण्य प्रदान करनेवाली नर्मदाकी प्रशंसा करते हुए उसके

तटपर गये। किनारे पहुँचकर ब्राह्मणश्रेष्ठ मुनिशर्माका चित्त प्रसन्न हो गया। उन्होंने वेदोक्त विधिके अनुसार नर्मदाके जलमें प्रातःस्नान किया। उपर्युक्त पाँचों पापियोंने भी ब्राह्मणके कहनेसे ज्यों ही नर्मदामें डुबकी लगायी, त्यों ही उनके शरीरका रंग बदल गया; वे तत्काल सुवर्णके समान कान्तिमान् हो गये। फिर मुनिशर्माने सब लोगोंके सामने उन्हें पाप-प्रशमन नामक स्तोत्र सुनाया।

भूपाल! अब तुम पाप-प्रशमन नामक स्तोत्र सुनो। इसका भक्तिपूर्वक श्रवण करके भी मनुष्य पापराशिसे मुक्त हो जाता है। इसके चिन्तनमात्रसे बहुतेरे पापी शुद्ध हो चुके हैं। इसके सिवा, और भी बहुत-से मनुष्य इस स्तोत्रका सहारा लेकर अज्ञानजनित पापसे मुक्त हो गये हैं। जब मनुष्योंका चित्त परायी स्त्री, पराये धन तथा जीव-हिंसा आदिकी ओर जाय तो इस प्रायश्चित्तरूपा स्तुतिकी शरण लेनी चाहिये। यह स्तुति इस प्रकार है—

विष्णवे विष्णवे नित्यं विष्णवे विष्णवे नमः।
नमामि विष्णुं चित्तस्थमहंकारगतं हरिम्॥
चित्तस्थमीशमव्यक्तमनन्तमपराजितम्।
विष्णुमीड्यमशेषाणामनादिनिधनं हरिम्॥

सम्पूर्ण विश्वमें व्यापक भगवान् श्रीविष्णुको सर्वदा नमस्कार है। विष्णुको बारम्बार प्रणाम है। मैं अपने चित्तमें विराजमान विष्णुको नमस्कार करता हूँ। अपने अहंकारमें व्याप्त श्रीहरिको मस्तक झुकाता हूँ। श्रीविष्णु चित्तमें विराजमान ईश्वर (मन और इन्द्रियोंके शासक), अव्यक्त, अनन्त, अपराजित, सबके द्वारा स्तवन करनेयोग्य तथा आदि-अन्तसे रहित हैं; ऐसे श्रीहरिको मैं नित्य-निरन्तर प्रणाम करता हूँ।

विष्णुश्चित्तगतो यन्मे विष्णुर्बुद्धिगतश्च यत्।
योऽहंकारगतो विष्णुर्यो विष्णुर्मयि संस्थितः॥

करोति कर्तृभूतोऽसौ स्थावरस्य चरस्य च।
तत्पापं नाशमायाति तस्मिन् विष्णौ विचिन्तिते॥

जो विष्णु मेरे चित्तमें विराजमान हैं, जो विष्णु मेरी बुद्धिमें स्थित हैं, जो विष्णु मेरे अहंकारमें व्याप्त हैं तथा जो विष्णु सदा मेरे स्वरूपमें स्थित हैं, वे ही कर्ता होकर सब कुछ करते हैं। उन विष्णुभगवान्‌का चिन्तन करनेपर चराचर प्राणियोंका सारा पाप नष्ट हो जाता है।

ध्यातो हरति यः पापं स्वप्ने दृष्टश्च पापिनाम्।
तमुपेन्द्रमहं विष्णुं नमामि प्रणतप्रियम्॥

जो ध्यान करने और स्वप्नमें दीख जानेपर भी पापियोंके पाप हर लेते हैं तथा चरणोंमें पड़े हुए शरणागत भक्त जिन्हें अत्यन्त प्रिय हैं, उन वामनरूपधारी भगवान् श्रीविष्णुको नमस्कार करता हूँ।

जगत्यस्मिन्निरालम्बे ह्यजमक्षरमव्ययम्।
हस्तावलम्बनं स्तोत्रं विष्णुं वन्दे सनातनम्॥

जो अजन्मा, अक्षर और अविनाशी हैं तथा इस अवलम्बशून्य संसारमें हाथका सहारा देनेवाले हैं, स्तोत्रोंद्वारा जिनकी स्तुति की जाती है, उन सनातन श्रीविष्णुको मैं प्रणाम करता हूँ।

सर्वेश्वरेश्वर विभो परमात्मन्नधोक्षज।
हृषीकेश हृषीकेश हृषीकेश नमोऽस्तु ते॥

हे सर्वेश्वर! हे ईश्वर! हे व्यापक परमात्मन्! हे अधोक्षज! हे इन्द्रियोंका शासन करनेवाले अन्तर्यामी हृषीकेश! आपको बारम्बार नमस्कार है।

नृसिंहानन्त गोविन्द भूतभावन केशव।
दुरुक्तं दुष्कृतं ध्यातं शमयाशु जनार्दन॥

हे नृसिंह! हे अनन्त! हे गोविन्द! हे भूतभावन! हे केशव! हे जनार्दन! मेरे दुर्वचन, दुष्कर्म और दुश्चिन्तनको शीघ्र नष्ट कीजिये।

यन्मया चिन्तितं दुष्टं स्वचित्तवशवर्तिना।
आकर्णय महाबाहो तच्छमं नय केशव॥

महाबाहो! मेरी प्रार्थना सुनिये—अपने चित्तके वशमें होकर मैंने जो कुछ बुरा चिन्तन किया हो, उसको शान्त कर दीजिये।

ब्रह्मण्यदेव गोविन्द परमार्थपरायण।
जगन्नाथ जगद्धातः पापं शमय मेऽच्युत॥

ब्राह्मणोंका हित साधन करनेवाले देवता गोविन्द! परमार्थमें तत्पर रहनेवाले जगन्नाथ! जगत्को धारण करनेवाले अच्युत! मेरे पापोंका नाश कीजिये।

यच्चापराह्णे सायाह्ने मध्याह्ने च तथा निशि।
कायेन मनसा वाचा कृतं पापमजानता॥
जानता च हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष माधव।
नामत्रयोच्चारणतः सर्वं यातु मम क्षयम्॥

मैंने पूर्वाह्ण, सायाह्न, मध्याह्न तथा रात्रिके समय शरीर, मन और वाणीके द्वारा, जानकर या अनजानमें जो कुछ पाप किया हो, वह सब 'हृषीकेश, पुण्डरीकाक्ष और माधव'—इन तीन नामोंके उच्चारणसे नष्ट हो जाय।

शारीरं मे हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष मानसम्।
पापं प्रशममायातु वाक्कृतं मम माधव॥

हृषीकेश! आपके नामोच्चारणसे मेरा शारीरिक पाप नष्ट हो जाय, पुण्डरीकाक्ष! आपके स्मरणसे मेरा मानस पाप शान्त हो जाय तथा माधव! आपके नाम-कीर्तनसे मेरे वाचिक पापका नाश हो जाय।

यद् भुञ्जानः पिबंस्तिष्ठन् स्वपञ्जाग्रद् यदा स्थितः।
अकार्षं पापमर्थार्थं कायेन मनसा गिरा॥
महदल्पं च यत्पापं दुर्योनिनरकावहम्।
तत्सर्वं विलयं यातु वासुदेवस्य कीर्तनात्॥

मैंने खाते, पीते, खड़े होते, सोते, जागते तथा ठहरते समय मन, वाणी और शरीरसे, स्वार्थ या धनके लिये जो कुत्सित योनियों और नरकोंकी प्राप्ति करानेवाला महान् या थोड़ा पाप किया है, वह सब भगवान् वासुदेवका नामोच्चारण करनेसे नष्ट हो जाय।

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं च यत्।
अस्मिन् सङ्कीर्तिते विष्णौ यत् पापं तत् प्रणश्यतु॥

जिसे परब्रह्म, परम धाम और परम पवित्र कहते हैं, वह तत्त्व भगवान् विष्णु ही हैं; इन श्रीविष्णुभगवान्का कीर्तन करनेसे मेरे जो भी पाप हों, वे नष्ट हो जायँ।

यत्प्राप्य न निवर्तन्ते गन्धस्पर्शविवर्जितम्।
सूरयस्तत्पदं विष्णोस्तत्सर्वं मे भवत्वलम्॥

जो गन्ध और स्पर्शसे रहित है, ज्ञानी पुरुष जिसे पाकर पुनः इस संसारमें नहीं लौटते, वह श्रीविष्णुका ही परम पद है। वह सब मुझे पूर्णरूपसे प्राप्त हो जाय।

पापप्रशमनं स्तोत्रं यः पठेच्छृणुयान्नरः।
शारीरैर्मानसैर्वाचा कृतैः पापैः प्रमुच्यते॥
मुक्तः पापग्रहादिभ्यो याति विष्णोः परं पदम्।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्तोत्रं सर्वाघनाशनम्॥
प्रायश्चित्तमघौघानां पठितव्यं नरोत्तमैः।*

यह 'पाप-प्रशमन' नामक स्तोत्र है। जो मनुष्य इसे पढ़ता और सुनता है, वह शरीर, मन और वाणीद्वारा किये हुए पापोंसे मुक्त हो जाता है। इतना ही नहीं, वह पापग्रह आदिके भयसे भी मुक्त होकर विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। यह स्तोत्र सब पापोंका नाशक तथा पापराशिका प्रायश्चित्त है; इसलिये श्रेष्ठ मनुष्योंको पूर्ण प्रयत्न करके इस स्तोत्रका पाठ करना चाहिये।

* अध्याय ८८, श्लोक ७२ से ९१ तक।

राजन्! इस स्तोत्रके श्रवणमात्रसे पूर्वजन्म तथा इस जन्मके किये हुए पाप भी तत्काल नष्ट हो जाते हैं। यह स्तोत्र पापरूपी वृक्षके लिये कुठार और पापमय ईंधनके लिये दावानल है। पापराशिरूपी अन्धकार-समूहका नाश करनेके लिये यह स्तोत्र सूर्यके समान है। मैंने सम्पूर्ण जगत्पर अनुग्रह करनेके लिये इसे तुम्हारे सामने प्रकाशित किया है। इसके पुण्यमय माहात्म्यका वर्णन करनेमें स्वयं श्रीहरि भी समर्थ नहीं हैं।

❑❑

वैशाखमासमें स्नान, तर्पण और श्रीमाधव-पूजनकी विधि एवं महिमा

अम्बरीषने पूछा—मुने! वैशाखमासके व्रतका क्या विधान है? इसमें किस तपस्याका अनुष्ठान करना पड़ता है? क्या दान होता है? कैसे स्नान किया जाता है और किस प्रकार भगवान् केशवकी पूजा की जाती है? ब्रह्मर्षे! आप श्रीहरिके प्रिय भक्त तथा सर्वज्ञ हैं; अतः कृपा करके मुझे ये सब बातें बताइये।

नारदजीने कहा—साधुश्रेष्ठ! सुनो, वैशाखमासमें जब सूर्य मेषराशिपर चलें जायँ तो किसी बड़ी नदीमें, नदीरूप तीर्थमें, नदमें, सरोवरमें, झरनेमें, देवकुण्डमें, स्वतः प्राप्त हुए किसी भी जलाशयमें, बावड़ीमें अथवा कुएँ आदिपर जाकर नियमपूर्वक भगवान् श्रीविष्णुका स्मरण करते हुए स्नान करना चाहिये। स्नानके पहले निम्नांकित श्लोकका उच्चारण करना चाहिये—

यथा ते माधवो मासो वल्लभो मधुसूदन।
प्रातःस्नानेन मे तस्मिन् फलदः पापहा भव॥

(८९।११)

'मधुसूदन! माधव (वैशाख)-मास आपको विशेष प्रिय है, इसलिये इसमें प्रातःस्नान करनेसे आप शास्त्रोक्त फलके देनेवाले हों और मेरे पापोंका नाश कर दें।'

इस प्रकार कहकर मौनभावसे उस तीर्थके किनारे अपने दोनों पैर धो ले; फिर भगवान् नारायणका स्मरण करते हुए विधिपूर्वक स्नान करे। स्नानकी विधि इस प्रकार है—विद्वान् पुरुषको मूल-मन्त्र पढ़कर तीर्थकी कल्पना कर लेनी चाहिये। '**ॐ नमो नारायणाय**' यह मन्त्र ही मूल-मन्त्र कहा गया है। पहले हाथमें कुश लेकर विधिपूर्वक आचमन करे तथा मन और इन्द्रियोंको संयममें रखते हुए बाहर-भीतरसे पवित्र रहे। फिर चार हाथका चौकोर मण्डल बनाकर उसमें निम्नांकित मन्त्रोंद्वारा भगवती श्रीगंगाजीका आवाहन करे—

विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णुदेवता॥
त्राहि नस्त्वेनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात्।
तिस्रः कोट्योऽर्धकोटी च तीर्थानां वायुरब्रवीत्॥
दिवि भुव्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्ति जाह्नवि।
नन्दिनीति च ते नाम देवेषु नलिनीति च॥
दक्षा पृथ्वी वियद्गङ्गा विश्वकाया शिवामृता।
विद्याधरी महादेवी तथा लोकप्रसादिनी॥
क्षेमङ्करी जाह्नवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी।

(८९। १५—१९)

'गंगे! तुम भगवान् श्रीविष्णुके चरणोंसे प्रकट हुई हो। श्रीविष्णु ही तुम्हारे देवता हैं; इसीलिये तुम्हें वैष्णवी कहते हैं। देवि! तुम जन्मसे लेकर मृत्युतक समस्त पापोंसे मेरी रक्षा करो। स्वर्ग, पृथ्वी और अन्तरिक्षमें कुल साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हैं—ऐसा वायु देवताका कथन है। माता जाह्नवी! वे सभी तीर्थ तुम्हारे अंदर

मौजूद हैं। देवलोकमें तुम्हारा नाम नन्दिनी और नलिनी है। इनके सिवा दक्षा, पृथ्वी, वियद्गंगा, विश्वकाया, शिवा, अमृता, विद्याधरी, महादेवी, लोकप्रसादिनी क्षेमंकरी, जाह्नवी, शान्ता और शान्तिप्रदायिनी आदि तुम्हारे अनेकों नाम हैं।'

स्नानके समय इन पवित्र नामोंका कीर्तन करना चाहिये; इससे त्रिपथगामिनी भगवती गंगा उपस्थित हो जाती हैं। सात बार उपर्युक्त नामोंका जप करके संपुटके आकारमें दोनों हाथोंको जोड़कर उनमें जल ले और चार, छः या सात बार मस्तकपर डाले। इस प्रकार स्नान करके पूर्ववत् मृत्तिकाको भी विधिवत् अभिमन्त्रित करे और उसे शरीरमें लगाकर नहा ले। मृत्तिकाको अभिमन्त्रित करनेका मन्त्र इस प्रकार है—

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्॥
उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना।
नमस्ते सर्वलोकानां प्रभवारणि सुव्रते॥

(८९।२२-२३)

'वसुन्धरे! तुम्हारे ऊपर अश्व और रथ चला करते हैं। भगवान् श्रीविष्णुने भी वामन-अवतार धारण करके तुम्हें एक पैरसे नापा था। मृत्तिके! मैंने जो बुरे कर्म किये हों, मेरे उन सब पापोंको तुम हर लो। देवि! सैकड़ों भुजाओंवाले भगवान् श्रीविष्णुने वराहका रूप धारण करके तुम्हें जलसे बाहर निकाला था। तुम सम्पूर्ण लोकोंकी उत्पत्तिके लिये अरणीके समान हो—अर्थात् जैसे अरणी-काष्ठसे आग प्रकट होती है, उसी प्रकार तुमसे सम्पूर्ण लोक उत्पन्न होते हैं। सुव्रते! तुम्हें मेरा नमस्कार है।'

इस प्रकार स्नान करनेके पश्चात् विधिपूर्वक आचमन करके जलसे बाहर निकले और दो शुद्ध श्वेत वस्त्र—धोती-चादर

धारण करे। तदनन्तर त्रिलोकीको तृप्त करनेके लिये तर्पण करे। सबसे पहले श्रीब्रह्माका तर्पण करे; फिर श्रीविष्णु, श्रीरुद्र और प्रजापतिका। तत्पश्चात् 'देवता, यक्ष, नाग, गन्धर्व, अप्सरा, असुरगण, क्रूर सर्प, गरुड, वृक्ष, जीव-जन्तु, पक्षी, विद्याधर, मेघ, आकाशचारी जीव, निराधार जीव, पापी जीव तथा धर्मपरायण जीवोंको तृप्त करनेके लिये मैं उन्हें जल अर्पण करता हूँ।' यह कहकर उन सबको जलांजलि दे। देवताओंका तर्पण करते समय यज्ञोपवीतको बायें कंधेपर डाले रहे। तत्पश्चात् उसे गलेमें मालाकी भाँति कर ले और दिव्य मनुष्यों, ऋषि-पुत्रों तथा ऋषियोंका भक्तिपूर्वक तर्पण करे। सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार—ये दिव्य मनुष्य हैं। कपिल, आसुरि, बोढु तथा पंचशिख—ये प्रधान ऋषिपुत्र हैं। 'ये सभी मेरे दिये हुए जलसे तृप्त हों' ऐसा कहकर इन्हें जल दे। इसी प्रकार मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रचेता, वसिष्ठ, नारद तथा अन्यान्य देवर्षियों एवं ब्रह्मर्षियोंका अक्षतसहित जलके द्वारा तर्पण करे।

इस प्रकार ऋषि-तर्पण करनेके पश्चात् यज्ञोपवीतको दायें कंधेपर करके बायें घुटनेको पृथ्वीपर टेककर बैठे। फिर अग्निष्वात्त, सौम्य, हविष्मान्, उष्मप, कव्यवाट् अनल, बर्हिषद्, पिता-पितामह आदि तथा मातामह आदि सब लोगोंका विधिवत् तर्पण करके निम्नांकित मन्त्रका उच्चारण करे—

येऽबान्धवा बान्धवा ये येऽन्यजन्मनि बान्धवाः।
ते तृप्तिमखिला यान्तु येऽप्यस्मत्तोयकाङ्क्षिणः॥

(८९। ३५)

'जो लोग मेरे बान्धव न हों, जो मेरे बान्धव हों तथा जो दूसरे किसी जन्ममें मेरे बान्धव रहे हों, वे सब मेरे दिये हुए जलसे तृप्त हों। उनके सिवा और भी जो कोई प्राणी मुझसे जलकी अभिलाषा रखते हों, वे भी तृप्ति लाभ करें।'

यों कहकर उनकी तृप्तिके उद्देश्यसे जल गिराना चाहिये। तत्पश्चात् विधिपूर्वक आचमन करके अपने आगे कमलकी आकृति बनावे और सूर्यदेवके नामोंका उच्चारण करते हुए अक्षत, फूल, लाल चन्दन और जलके द्वारा उन्हें यत्नपूर्वक अर्घ्य दे। अर्घ्यदानका मन्त्र इस प्रकार है—

नमस्ते विश्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मरूपिणे॥
सहस्त्ररश्मये नित्यं नमस्ते सर्वतेजसे।
नमस्ते रुद्रवपुषे नमस्ते भक्तवत्सल॥
पद्मनाभ नमस्तेऽस्तु कुण्डलाङ्गदभूषित।
नमस्ते सर्वलोकानां सुप्तानामुपबोधन॥
सुकृतं दुष्कृतं चैव सर्वं पश्यसि सर्वदा।
सत्यदेव नमस्तेऽस्तु प्रसीद मम भास्कर॥
दिवाकर नमस्तेऽस्तु प्रभाकर नमोऽस्तु ते।

(८९। ३७—४१)

'भगवान् सूर्य! आप विश्वरूप और ब्रह्मस्वरूप हैं। इन दोनों रूपोंमें आपको नमस्कार है। आप सहस्त्रों किरणोंसे सुशोभित और सबके तेजरूप हैं, आपको सदा नमस्कार है। भक्तवत्सल! रुद्ररूपधारी आप परमेश्वरको बारम्बार नमस्कार है। कुण्डल और अंगद आदि आभूषणोंसे विभूषित पद्मनाभ! आपको नमस्कार है। भगवन्! आप सोये हुए सम्पूर्ण लोकोंको जगानेवाले हैं; आपको मेरा प्रणाम है। आप सदा सबके पाप-पुण्यको देखा करते हैं। सत्यदेव! आपको नमस्कार है। भास्कर! मुझपर प्रसन्न होइये। दिवाकर! आपको नमस्कार है। प्रभाकर! आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार सूर्यदेवको नमस्कार करके सात बार उनकी प्रदक्षिणा करे। फिर द्विज, गौ और सुवर्णका स्पर्श करके अपने

घरमें जाय। वहाँ आश्रमवासी अतिथियोंका सत्कार तथा भगवान्‌की प्रतिमाका पूजन करे। राजन्! घरमें पहले भक्तिपूर्वक जितेन्द्रियभावसे भगवान् गोविन्दकी विधिवत् पूजा करनी चाहिये। विशेषतः वैशाखके महीनेमें जो श्रीमधुसूदनका पूजन करता है, उसके द्वारा पूरे एक वर्षतक श्रीमाधवकी पूजा सम्पन्न हो जाती है। वैशाखमास आनेपर जब सूर्यदेव मेषराशिपर स्थित हों तो श्रीकेशवकी प्रसन्नताके लिये उनके व्रतोंका संचय करना चाहिये। अपने अभीष्टकी सिद्धिके लिये अन्न, जल, शक्कर, धेनु तथा तिलकी धेनु आदिका दान करना चाहिये; इस कार्यमें धनकी कंजूसी उचित नहीं है। जो समूचे वैशाखभर प्रतिदिन सबेरे स्नान करता, जितेन्द्रियभावसे रहता, भगवान्‌के नाम जपता और हविष्य भोजन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है।

जो वैशाखमासमें आलस्य त्यागकर एकभुक्त (चौबीस घंटेमें एक बार भोजन), नक्तव्रत (केवल रातमें एक बार भोजन) अथवा अयाचितव्रत (बिना माँगे मिले हुए अन्नका एक समय भोजन) करता है, वह अपनी सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्त कर लेता है। वैशाखमासमें प्रतिदिन दो बार गाँवसे बाहर नदीके जलमें स्नान करना, हविष्य खाकर रहना, ब्रह्मचर्यका पालन करना, पृथ्वीपर सोना, नियमपूर्वक रहना, व्रत, दान, जप, होम और भगवान् मधुसूदनकी पूजा करना—ये नियम हजारों जन्मोंके भयंकर पापको भी हर लेते हैं। जैसे भगवान् माधव ध्यान करनेपर सारे पाप नष्ट कर देते हैं, उसी प्रकार नियमपूर्वक किया हुआ माधवमासका स्नान भी समस्त पापोंको दूर कर देता है। प्रतिदिन तीर्थ-स्नान, तिलोंद्वारा पितरोंका तर्पण, धर्मघट आदिका दान और श्रीमधुसूदनका पूजन—ये भगवान्‌को संतोष प्रदान करनेवाले हैं; वैशाखमासमें इनका पालन अवश्य करना

चाहिये। वैशाखमें तिल, जल, सुवर्ण, अन्न, शक्कर, वस्त्र, गौ, जूता, छाता, कमल या शंख तथा घड़े—इन वस्तुओंका ब्राह्मणोंको दान करे। तीनों सन्ध्याओंके समय एकाग्रचित्त हो विमलस्वरूपा साक्षात् भगवती लक्ष्मीके साथ परमेश्वर श्रीविष्णुका भक्तिपूर्वक पूजन करना चाहिये। सामयिक फूलों और फलोंसे भक्तिपूर्वक श्रीहरिका पूजन करनेके पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंकी भी पूजा करनी चाहिये। पाखण्डियोंसे वार्तालाप नहीं करना चाहिये। जो फूलोंद्वारा विधिवत् अर्चन करके श्रीमधुसूदनकी आराधना करता है; वह सब पापोंसे मुक्त हो परम पदको प्राप्त होता है!

श्रीनारदजी कहते हैं—राजेन्द्र! सुनो, मैं संक्षेपसे माधवके पूजनकी विधि बतला रहा हूँ। महाराज! जिनका कहीं अन्त नहीं है, जो अनन्त और अपार हैं, उन भगवान् अनन्तकी पूजा-विधिका अन्त नहीं है। श्रीविष्णुका पूजन तीन प्रकारका होता है—वैदिक, तान्त्रिक तथा मिश्र। तीनोंके ही बताये हुए विधानसे श्रीहरिका पूजन करना चाहिये। वैदिक और मिश्र पूजनकी विधि ब्राह्मण आदि तीन वर्णोंके ही लिये बतायी गयी है, किन्तु तान्त्रिक पूजन विष्णुभक्त शूद्रके लिये भी विहित है। साधक पुरुषको उचित है कि शास्त्रोक्त विधिका ज्ञान प्राप्त करके एकाग्रचित्त हो ब्रह्मचर्य-पालन करते हुए श्रीविष्णुका विधिवत् पूजन करे। भगवान्‌की प्रतिमा आठ प्रकारकी मानी गयी है—शिलामयी, धातुमयी, लोहेकी बनी हुई, लीपनेयोग्य मिट्टीकी बनी हुई, चित्रमयी, बालूकी बनायी हुई, मनोमयी तथा मणिमयी। इन प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा (स्थापना) दो प्रकारकी होती है—एक चल प्रतिष्ठा और दूसरी अचल प्रतिष्ठा।

राजन्! भक्त पुरुषको चाहिये कि वह जो कुछ भी सामग्री प्राप्त हो, उसीसे भक्तिभावके साथ पूजन करे। प्रतिमा-पूजनमें

स्नान और अलंकार ही अभीष्ट हैं अर्थात् भगवद्विग्रहको स्नान कराकर पुष्प आदिसे शृंगार कर देना ही प्रधान सेवा है। श्रीकृष्णमें भक्ति रखनेवाला मनुष्य यदि केवल जल भी भगवान्को अर्पण करे तो वह उनकी दृष्टिमें श्रेष्ठ है; फिर गन्ध, धूप, पुष्प, दीप और अन्न आदिका नैवेद्य अर्पण करनेपर तो कहना ही क्या है। पवित्रतापूर्वक पूजनकी सारी सामग्री एकत्रित करके पूर्वाग्र कुशोंका आसन बिछाकर उसपर बैठे; पूजन करनेवालेका मुख उत्तर दिशाकी ओर या प्रतिमाके सामने हो। फिर पाद्य, अर्घ्य, स्नान तथा अर्हण आदि उपचारोंकी व्यवस्था करे। उसके बाद कर्णिका और केसरसे सुशोभित अष्टदल कमल बनावे और उसके ऊपर श्रीहरिके लिये आसन रखे। तदनन्तर चन्दन, उशीर (खस) कपूर, केसर तथा अरगजासे सुवासित जलके द्वारा मन्त्रपाठपूर्वक श्रीहरिको स्नान कराये। वैभव हो तो प्रतिदिन इस तरहकी व्यवस्था करनी चाहिये। 'स्वर्णधर्म' नामक अनुवाक, महापुरुष-विद्या, 'सहस्रशीर्षा' आदि पुरुषसूक्त तथा सामवेदोक्त नीराजना आदि मन्त्रोंद्वारा श्रीहरिको स्नान कराये। तत्पश्चात् विष्णुभक्त पुरुष वस्त्र, यज्ञोपवीत, आभूषण, हार, गन्ध तथा अनुलेपनके द्वारा प्रेमपूर्वक भगवान्का यथायोग्य शृंगार करे। पुजारीको उचित है कि वह श्रद्धापूर्वक पाद्य, आचमनीय, गन्ध, पुष्प, अक्षत तथा धूप आदि उपहार अर्पण करे। उसके बाद गुड़, खीर, घी, पूड़ी, मालपूआ, लड्डू, दूध और दही आदि नाना प्रकारके नैवेद्य निवेदन करे। पर्वके अवसरोंपर अंगराग लगाना, दर्पण दिखाना, दन्तधावन कराना, अभिषेक करना, अन्न आदिके बने हुए पदार्थ भोग लगाना, कीर्तन करते हुए नृत्य करना और गीत गाना आदि सेवाएँ भी करनी चाहिये। सम्भव हो तो प्रतिदिन ऐसी ही व्यवस्था रखनी चाहिये।

पूजनके पश्चात् इस प्रकार ध्यान करे—भगवान् श्रीविष्णुका श्रीविग्रह श्यामवर्ण एवं तपाये हुए जाम्बूनद नामक सुवर्णके समान तेजस्वी है; भगवान्‌के शंख, चक्र, गदा और पद्मसे सुशोभित चार भुजाएँ हैं; उनकी आकृति शान्त है, उनका वस्त्र, कमलके केसरके समान पीले रंगका है; वे मस्तकपर किरीट, दोनों हाथोंमें कड़े, गलेमें यज्ञोपवीत तथा अँगुलियोंमें अँगूठी धारण किये हुए हैं; उनके वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है, कौस्तुभमणि उनकी शोभा बढ़ाता है तथा वे वनमाला धारण किये हुए हैं।

इस प्रकार ध्यान करते हुए पूजन समाप्त करके घीमें डुबोयी हुई समिधाओं तथा हविष्यद्वारा अग्निमें हवन करे। 'आज्यभाग' तथा 'आघार' नामक आहुतियाँ देनेके पश्चात् घृतपूर्ण हविष्यका होम करे। तदनन्तर पुनः भगवान्‌का पूजन करके उन्हें प्रणाम करे और पार्षदोंको नैवेद्य अर्पण करे। उसके बाद मुख-शुद्धिके लिये सुगन्धित द्रव्योंसे युक्त ताम्बूल निवेदन करना चाहिये। फिर छोटे-बड़े पौराणिक तथा अर्वाचीन स्तोत्रोंद्वारा भगवान्‌की स्तुति करके '**भगवन्! प्रसीद**' (भगवन्! प्रसन्न होइये) यों कहकर प्रतिदिन दण्डवत् प्रणाम करे। अपना मस्तक भगवान्‌के चरणोंमें रखकर दोनों भुजाओंको फैलाकर परस्पर मिला दे और इस प्रकार कहे—'परमेश्वर! मैं मृत्युरूपी ग्रह तथा समुद्रसे भयभीत होकर आपकी शरणमें आया हूँ; आप मेरी रक्षा कीजिये।'

तदनन्तर भगवान्‌को अर्पण की हुई प्रसाद-माला आदिको आदरपूर्वक सिरपर चढ़ाये तथा यदि मूर्ति विसर्जन करनेयोग्य हो तो उसका विसर्जन भी करे। ईश्वरीय ज्योतिको आत्म-ज्योतिमें स्थापित कर ले। प्रतिमा आदिमें जहाँ भगवान्‌का चरण हो, वहीं श्रद्धापूर्वक पूजन करना चाहिये तथा मनमें यह विश्वास रखना चाहिये कि 'जो सम्पूर्ण भूतोंमें तथा मेरे आत्मामें भी रम रहे हैं, वे ही सर्वात्मा परमेश्वर इस मूर्तिमें विराजमान हैं।'

इस प्रकार वैदिक तथा तान्त्रिक क्रियायोगके मार्गसे जो भगवान्‌की पूजा करता है, वह सब ओरसे अभीष्ट सिद्धिको प्राप्त होता है। श्रीविष्णु-प्रतिमाकी स्थापना करके उसके लिये सुदृढ़ मन्दिर बनवाना चाहिये तथा पूजाकर्मकी सुव्यवस्थाके लिये सुन्दर फुलवाड़ी भी लगवानी चाहिये। बड़े-बड़े पर्वोंपर तथा प्रतिदिन पूजाकार्यका भलीभाँति निर्वाह होता रहे, इसके लिये भगवान्‌के नामसे खेत, बाजार, कसबा और गाँव आदि भी लगा देने चाहिये। यों करनेसे मनुष्य भगवान्‌के सायुज्यको प्राप्त होता है। भगवद्विग्रहकी स्थापना करनेसे सार्वभौम (सम्राट्)-के पदको, मन्दिर बनवानेसे तीनों लोकोंके राज्यको, पूजा आदिकी व्यवस्था करनेसे ब्रह्मलोकको तथा इन तीनों कार्योंके अनुष्ठानसे मनुष्य भगवत्सायुज्यको प्राप्त कर लेता है। केवल अश्वमेध-यज्ञ करनेसे किसीको भक्तियोगकी प्राप्ति नहीं होती; भक्तियोगको तो वही प्राप्त करता है, जो पूर्वोक्त रीतिसे प्रतिदिन श्रीहरिकी पूजा करता है।

राजन्! वही शरीर शुभ-कल्याणका साधक है, जो भगवान् श्रीकृष्णको साष्टांग प्रणाम करनेके कारण धूलि-धूसरित हो रहा है; नेत्र भी वे ही अत्यन्त सुन्दर और तपःशक्तिसे सम्पन्न हैं, जिनके द्वारा श्रीहरिका दर्शन होता है; वही बुद्धि निर्मल और चन्द्रमा तथा शंखके समान उज्ज्वल है, जो सदा श्रीलक्ष्मीपतिके चिन्तनमें संलग्न रहती है तथा वही जिह्वा मधुरभाषिणी है, जो बारम्बार भगवान् नारायणका स्तवन किया करती है।*

स्त्री और शूद्रोंको भी मूलमन्त्रके द्वारा श्रीहरिका पूजन करना चाहिये तथा अन्यान्य वैष्णवजनोंको भी गुरुकी बतायी हुई पद्धतिसे

---

* यत्कृष्णप्रणिपातधूलिधवलं तद्वर्ष्म तद्वच्छुभ्रं नेत्रे चेत्तपसोर्जिते सुरुचिरे याभ्यां हरिर्दृश्यते।
सा बुद्धिर्विमलेन्दुशंखधवला या माधवव्यापिनी सा जिह्वा मृदुभाषिणी नृप मुहुर्या स्तौति नारायणम्॥
(९०।४७)

श्रद्धापूर्वक भगवान्‌की पूजा करनी उचित है। राजन्! यह सब प्रसंग मैंने तुम्हें बता दिया। श्रीमाधवका पूजन परम पावन है। विशेषतः वैशाखमासमें तुम इस प्रकार पूजन अवश्य करना।

सूतजी कहते हैं—महर्षिगण! इस प्रकार पत्नीसहित मन्त्रवेत्ता महाराज अम्बरीषको उपदेश दे, उनसे पूजित हो, विदा लेकर देवर्षि नारदजी वैशाखमासमें गंगा-स्नान करनेके लिये चले गये। लोकमें जिनका पावन सुयश फैला हुआ था, उन राजा अम्बरीषने भी मुनिकी बतायी हुई वैशाखमासकी विधिका पुण्यबुद्धिसे पत्नीसहित पालन किया।

❑❑

यम-ब्राह्मण-संवाद—नरक तथा स्वर्गमें ले जानेवाले कर्मोंका वर्णन

ऋषियोंने कहा—सूतजी! इस विषयको पुनः विस्तारके साथ कहिये। आपके उत्तम वचनामृतोंका पान करते-करते हमें तृप्ति नहीं होती है।

सूतजी बोले—महर्षियो! इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास कहा करते हैं, जिसमें एक ब्राह्मण और महात्मा धर्मराजके संवादका वर्णन है।

ब्राह्मणने पूछा—धर्मराज! धर्म और अधर्मके निर्णयमें आप सबके लिये प्रमाणस्वरूप हैं; अतः बताइये, मनुष्य किस कर्मसे नरकमें पड़ते हैं? तथा किस कर्मके अनुष्ठानसे वे स्वर्गमें जाते हैं? कृपा करके इन सब बातोंका वर्णन कीजिये।

यमराज बोले—ब्रह्मन्! जो मनुष्य मन, वाणी तथा क्रियाद्वारा धर्मसे विमुख और श्रीविष्णुभक्तिसे रहित हैं; जो ब्रह्मा, शिव तथा विष्णुको भेदबुद्धिसे देखते हैं; जिनके हृदयमें विष्णु-विद्यासे

विरक्ति है; जो दूसरोंके खेत, जीविका, घर, प्रीति तथा आशाका उच्छेद करते हैं, वे नरकोंमें जाते हैं। जो मूर्ख जीविकाका कष्ट भोगनेवाले ब्राह्मणोंको भोजनकी इच्छासे दरवाजेपर आते देख उनकी परीक्षा करने लगता है—उन्हें तुरंत भोजन नहीं देता, उसे नरकका अतिथि समझना चाहिये। जो मूढ़ अनाथ, वैष्णव, दीन, रोगातुर तथा वृद्ध मनुष्यपर दया नहीं करता तथा जो पहले कोई नियम लेकर पीछे अजितेन्द्रियताके कारण उसे छोड़ देता है, वह निश्चय ही नरकका पात्र है।

जो सब पापोंको हरनेवाले दिव्यस्वरूप, व्यापक, विजयी, सनातन, अजन्मा, चतुर्भुज, अच्युत, विष्णुरूप, दिव्य पुरुष श्रीनारायणदेवका पूजन, ध्यान और स्मरण करते हैं, वे श्रीहरिके परम धामको प्राप्त होते हैं—यह सनातन श्रुति है। भगवान् दामोदरके गुणोंका कीर्तन ही मंगलमय है, वही धनका उपार्जन है तथा वही इस जीवनका फल है। अमिततेजस्वी देवाधिदेव श्रीविष्णुके कीर्तनसे सब पाप उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जैसे दिन निकलनेपर अन्धकार। जो प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक भगवान् श्रीविष्णुकी यशोगाथाका गान करते और सदा स्वाध्यायमें लगे रहते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। विप्रवर! भगवान् वासुदेवके नाम-जपमें लगे हुए मनुष्य पहलेके पापी रहे हों तो भी भयानक यमदूत उनके पास नहीं फटकने पाते। द्विजश्रेष्ठ! हरिकीर्तनको छोड़कर दूसरा कोई ऐसा साधन मैं नहीं देखता, जो जीवोंके सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाला प्रायश्चित्त हो।*

---

* येऽर्चयन्ति हरिं देवं विष्णुं जिष्णुं सनातनम्। नारायणमजं देवं विष्णुरूपं चतुर्भुजम्॥
ध्यायन्ति पुरुषं दिव्यमच्युतं ये स्मरन्ति च। लभन्ते ते हरिस्थानं श्रुतिरेषा सनातनी॥
इदमेव हि माङ्गल्यमिदमेव धनार्जनम्। जीवितस्य फलं चैतद् यद्दामोदरकीर्तनम्॥
कीर्तनाद् देवदेवस्य विष्णोरमिततेजसः। दुरितानि विलीयन्ते तमांसीव दिनोदये॥
गाथां गायन्ति ये नित्यं वैष्णवीं श्रद्धयान्विताः। स्वाध्यायनिरता नित्यं ते नराः स्वर्गगामिनः॥

जो माँगनेपर प्रसन्न होते हैं, देकर प्रिय वचन बोलते हैं तथा जिन्होंने दानके फलका परित्याग कर दिया है, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो दिनमें सोना छोड़ देते हैं, सब कुछ सहन करते हैं, पर्वके अवसरपर लोगोंको आश्रय देते हैं, अपनेसे द्वेष रखनेवालोंके प्रति भी कभी द्वेषवश अहितकारक वचन मुँहसे नहीं निकालते अपितु सबके गुणोंका ही बखान करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो परायी स्त्रियोंकी ओरसे उदासीन होते हैं और सत्त्वगुणमें स्थित होकर मन, वाणी अथवा क्रियाद्वारा कभी उनमें रमण नहीं करते, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं।

जिस-किसी कुलमें उत्पन्न होकर भी जो दयालु, यशस्वी, उपकारी और सदाचारी होते हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो व्रतको क्रोधसे, लक्ष्मीको डाहसे, विद्याको मान और अपमानसे, आत्माको प्रमादसे, बुद्धिको लोभसे, मनको कामसे तथा धर्मको कुसंगसे बचाये रखते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं।* विप्र! जो शुक्ल और कृष्णपक्षमें भी एकादशीको विधिपूर्वक उपवास करते हैं, वे मानव स्वर्गमें जाते हैं। समस्त बालकोंका पालन करनेके लिये जैसे माता बनायी गयी है तथा रोगियोंकी रक्षाके लिये जैसे औषधकी रचना हुई है, उसी प्रकार सम्पूर्ण लोकोंकी रक्षाके निमित्त एकादशी तिथिका निर्माण हुआ है। एकादशीके व्रतके समान पापसे रक्षा करनेवाला दूसरा कोई साधन नहीं है। अतः एकादशीको विधिपूर्वक उपवास करनेसे मनुष्य स्वर्गलोकमें जाते हैं।

वासुदेवजपासक्तानपि पापकृतो जनान्। नोपसर्पन्ति तान् विप्र यमदूताः सुदारुणाः॥
नान्यत्पश्यामि जन्तूनां विहायहरिकीर्तनम्। सर्वपापप्रशमनं प्रायश्चित्तं द्विजोत्तम॥
(९२। १०—१६)

* यस्मिन् कस्मिन् कुले जाता दयावन्तो यशस्विनः। सानुक्रोशः सदाचारास्ते नराः स्वर्गगामिनः॥
व्रतं रक्षन्ति ये कोपाच्छ्रियं रक्षन्ति मत्सरात्। विद्यां मानापमानाभ्यां ह्यात्मानं तु प्रमादतः॥
मतिं रक्षन्ति ये लोभान्मनो रक्षन्ति कामतः। धर्मं रक्षन्ति दुःसङ्गात्ते नराः स्वर्गगामिनः॥
(९२। २१—२३)

अखिल विश्वके नायक भगवान् श्रीनारायणमें जिनकी भक्ति है, वे सत्यसे हीन और रजोगुणसे युक्त होनेपर भी अनन्त पुण्यशाली हैं तथा अन्तमें वे वैकुण्ठधाममें पधारते हैं।[१] जो वेतसी, यमुना, सीता (गंगा) तथा पुण्यसलिला गोदावरीका सेवन और सदाचारका पालन करते हैं; जिनकी स्नान और दानमें सदा प्रवृत्ति है, वे मनुष्य कभी नरकके मार्गका दर्शन नहीं करते।[२] जो कल्याणदायिनी नर्मदा नदीमें गोते लगाते तथा उसके दर्शनसे प्रसन्न होते हैं, वे पापरहित हो महादेवजीके लोकमें जाते और चिरकालतक वहाँ आनन्द भोगते हैं। जो मनुष्य चर्मण्वती (चम्बल) नदीमें स्नान करके शौचसंतोषादि नियमोंका पालन करते हुए उसके तटपर—विशेषतः व्यासाश्रममें तीन रात निवास करते हैं, वे स्वर्गलोकके अधिकारी माने गये हैं। जो गंगाजीके जलमें अथवा प्रयाग, केदारखण्ड, पुष्कर, व्यासाश्रम या प्रभासक्षेत्रमें मृत्युको प्राप्त होते हैं, वे विष्णुलोकमें जाते हैं। जिनकी द्वारका या कुरुक्षेत्रमें मृत्यु हुई है अथवा जो योगाभ्याससे मृत्युको प्राप्त हुए हैं अथवा मृत्युकालमें जिनके मुखसे 'हरि' इन दो अक्षरोंका उच्चारण हुआ है, वे सभी भगवान् श्रीहरिके प्रिय हैं।

विप्र! जो द्वारकापुरीमें तीन रात भी ठहर जाता है, वह अपनी ग्यारह इन्द्रियोंद्वारा किये हुए सारे पापोंको नष्ट करके स्वर्गमें जाता है—ऐसी वहाँकी मर्यादा है। वैष्णवव्रत (एकादशी)-के पालनसे होनेवाला धर्म तथा यज्ञादिके अनुष्ठानसे उत्पन्न होनेवाला धर्म—इन दोनोंको विधाताने तराजूपर रखकर तोला था,

---

१- ये भक्तिमन्तो मधुसूदनस्य नारायणस्याखिलनायकस्य।
सत्येन हीना रजसापि युक्ता गच्छन्ति ते नाकमनन्तपुण्याः॥ (१२। २७)

२- वेत्सीं यमुनां सीतां पुण्यां गोदावरीनदीम्।
सेवन्ते ये शुभाचाराः स्नानदानपरायणाः॥
. . . . ।
न ते पश्यन्ति पन्थानं नरकस्य कदाचन॥ (१२। २८-२९)

उस समय इनमेंसे पहलेका ही पलड़ा भारी रहा। ब्रह्मन्! जो एकादशीका सेवन करते हैं तथा जो 'अच्युत-अच्युत' कहकर भगवन्नामका कीर्तन करते हैं, उनपर मेरा शासन नहीं चलता। मैं तो स्वयं ही उनसे बहुत डरता हूँ।

जो मनुष्य प्रत्येक मासमें एक दिन—अमावास्याको श्राद्धके नियमका पालन करते हैं और ऐसा करनेके कारण जिनके पितर सदा तृप्त रहते हैं, वे धन्य हैं। वे स्वर्गगामी होते हैं। भोजन तैयार होनेपर जो आदरपूर्वक उसे दूसरोंको परोसते हैं और भोजन देते समय जिनके चेहरेके रंगमें परिवर्तन नहीं होता, वे शिष्ट पुरुष स्वर्गलोकमें जाते हैं। जो मर्त्यलोकके भीतर भगवान् श्रीनर-नारायणके आवासस्थान बदरिकाश्रममें और नन्दा (सरस्वती)-के तटपर तीन रात निवास करते हैं, वे धन्यवादके पात्र और भगवान् श्रीविष्णुके प्रिय हैं। ब्रह्मन्! जो भगवान् पुरुषोत्तमके समीप (जगन्नाथपुरीमें) छः मासतक निवास कर चुके हैं, वे अच्युतस्वरूप हैं और दर्शनमात्रसे समस्त पापोंको हर लेनेवाले हैं।

जो अनेक जन्मोंमें उपार्जित पुण्यके प्रभावसे काशीपुरीमें जाकर मणिकर्णिकाके जलमें गोते लगाते और श्रीविश्वनाथजीके चरणोंमें मस्तक झुकाते हैं, वे भी इस लोकमें आनेपर मेरे वन्दनीय होते हैं। जो श्रीहरिकी पूजा करके पृथ्वीपर कुश और तिल बिछाकर चारों ओर तिल बिखेरते और लोहा तथा दूध देनेवाली गौ दान करके विधिपूर्वक मृत्युको प्राप्त होते हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो पुत्रोंको उत्पन्न करके उन्हें पिता-पितामहोंके पदपर बिठाकर ममता और अहंकारसे रहित होकर मरते हैं, वे भी स्वर्गलोकके अधिकारी होते हैं। जो चोरी-डकैतीसे दूर रहकर सदा अपने ही धनसे संतुष्ट रहते हैं अथवा अपने भाग्यपर ही निर्भर रहकर जीविका चलाते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो स्वागत करते हुए शुद्ध पीड़ारहित मधुर तथा पापरहित वाणीका प्रयोग करते

हैं, वे लोग स्वर्गमें जाते हैं। जो दान-धर्ममें प्रवृत्त तथा धर्ममार्गके अनुयायी पुरुषोंका उत्साह बढ़ाते हैं, वे चिरकालतक स्वर्गमें आनन्द भोगते हैं। जो हेमन्त-ऋतु (शीतकाल)-में सूखी लकड़ी, गर्मीमें शीतल जल तथा वर्षामें आश्रय प्रदान करता है, वह स्वर्गलोकमें सम्मानित होता है। जो नित्य-नैमित्तिक आदि समस्त पुण्यकालोंमें भक्तिपूर्वक श्राद्ध करता है, वह निश्चय ही देवलोकका भागी होता है। दरिद्रका दान, सामर्थ्यशालीकी क्षमा, नौजवानोंकी तपस्या, ज्ञानियोंका मौन, सुख भोगनेके योग्य पुरुषोंकी सुखेच्छा-निवृत्ति तथा सम्पूर्ण प्राणियोंपर दया—ये सद्गुण स्वर्गमें ले जाते हैं।[१]

ध्यानयुक्त तप भवसागरसे तारनेवाला है और पापको पतनका कारण बताया गया है; यह बिलकुल सत्य है, इसमें संदेहकी गुंजाइश नहीं है।[२] ब्रह्मन्! स्वर्गकी राहपर ले जानेवाले समस्त साधनोंका मैंने यहाँ संक्षेपसे वर्णन किया है; अब तुम और क्या सुनना चाहते हो?

❑❑

तुलसीदल और अश्वत्थकी महिमा तथा वैशाख-माहात्म्यके सम्बन्धमें तीन प्रेतोंके उद्धारकी कथा

ब्राह्मणने पूछा—धर्मराज! वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके एकाग्रचित्त हुआ पुरुष भगवान् माधवका पूजन किस प्रकार करे? आप इसकी विधिका वर्णन करें।

धर्मराजने कहा—ब्रह्मन्! पत्तोंकी जितनी जातियाँ हैं, उन

१- दानं दरिद्रस्य विभोः क्षमित्वं यूनां तपो ज्ञानवतां च मौनम्।
इच्छानिवृत्तिश्च सुखोचितानां दया च भूतेषु दिवं नयन्ति॥ (९२।५८)

२- तपो ध्यानसमायुक्तं तारणाय भवाम्बुधेः।
पापं तु पतनायोक्तं सत्यमेव न संशयः॥ (९२।६०)

सबमें तुलसी भगवान् श्रीविष्णुको अधिक प्रिय है। पुष्कर आदि जितने तीर्थ हैं, गंगा आदि जितनी नदियाँ हैं तथा वासुदेव आदि जो-जो देवता हैं, वे सभी तुलसीदलमें निवास करते हैं। अतः तुलसी सर्वदा और सब समय भगवान् श्रीविष्णुको प्रिय है। कमल और मालतीका फूल छोड़कर तुलसीका पत्ता ग्रहण करे और उसके द्वारा भक्तिपूर्वक माधवकी पूजा करे। उसके पुण्यफलका पूरा-पूरा वर्णन करनेमें शेष भी समर्थ नहीं हैं। जो बिना स्नान किये ही देवकार्य या पितृकार्यके लिये तुलसीका पत्ता तोड़ता है, उसका सारा कर्म निष्फल हो जाता है तथा वह पंचगव्य पान करनेसे शुद्ध होता है। जैसे हर्रे बहुतेरे रोगोंको तत्काल हर लेती है, उसी प्रकार तुलसी दरिद्रता और दुःखभोग आदिसे सम्बन्ध रखनेवाले अधिक-से-अधिक पापोंको भी शीघ्र ही दूर कर देती है।* तुलसी काले रंगके पत्तोंवाली हो या हरे रंगकी, उसके द्वारा श्रीमधुसूदनकी पूजन करनेसे प्रत्येक मनुष्य—विशेषतः भगवान्का भक्त नरसे नारायण हो जाता है। जो पूरे वैशाखभर तीनों सन्ध्याओंके समय तुलसीदलसे मधुहन्ता श्रीहरिका पूजन करता है, उसका पुनः इस संसारमें जन्म नहीं होता। फूल और पत्तोंके न मिलनेपर अन्न आदिके द्वारा—धान, गेहूँ, चावल अथवा जौके द्वारा भी सदा श्रीहरिका पूजन करे। तत्पश्चात् सर्वदेवमय भगवान् विष्णुकी प्रदक्षिणा करे। इसके बाद देवताओं, मनुष्यों, पितरों तथा चराचर जगत्का तर्पण करना चाहिये।

पीपलको जल देनेसे दरिद्रता, कालकर्णी (एक तरहका रोग), दुःस्वप्न, दुश्चिन्ता तथा सम्पूर्ण दुःख नष्ट हो जाते हैं। जो बुद्धिमान् पीपलके पेड़की पूजा करता है, उसने अपने पितरोंको तृप्त कर

---

* दारिद्र्यदुःखभोगादिपापानि सुबहून्यपि॥
तुलसी हरते क्षिप्रं रोगानिव हरीतकी। (९४।८-९)

दिया, भगवान् विष्णुकी आराधना कर ली तथा सम्पूर्ण ग्रहोंका भी पूजन कर लिया। अष्टांगयोगका साधन, स्नान करके पीपलके वृक्षका सिंचन तथा श्रीगोविन्दका पूजन करनेसे मनुष्य कभी दुर्गतिको नहीं प्राप्त होता। जो सब कुछ करनेमें असमर्थ हो, वह स्त्री या पुरुष यदि पूर्वोक्त नियमोंसे युक्त होकर वैशाखकी त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा—तीनों दिन भक्तिसे विधिपूर्वक प्रातःस्नान करे तो सब पातकोंसे मुक्त होकर अक्षय स्वर्गका उपभोग करता है। जो वैशाखमासमें प्रसन्नताके साथ भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराता है तथा तीन राततक प्रातःकाल एक बार भी स्नान करके संयम और शौचका पालन करते हुए श्वेत या काले तिलोंको मधुमें मिलाकर बारह ब्राह्मणोंको दान देता है और उन्हींके द्वारा स्वस्तिवाचन कराता है तथा 'मुझपर धर्मराज प्रसन्न हों' इस उद्देश्यसे देवताओं और पितरोंका तर्पण करता है, उसके जीवनभरके किये हुए पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं। जो वैशाखकी पूर्णिमाको मणिक (मटका), जलके घड़े, पकवान तथा सुवर्णमय दक्षिणा दान करता है, उसे अश्वमेध-यज्ञका फल मिलता है।

इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास कहा जाता है, जिसमें एक ब्राह्मणका महान् वनके भीतर प्रेतोंके साथ संवाद हुआ था। मध्यदेशमें एक धनशर्मा नामक ब्राह्मण रहता था; उसमें पापका लेशमात्र भी नहीं था। एक दिन वह कुश आदिके लिये वनमें गया। वहाँ उसने एक अद्भुत बात देखी। उसे तीन महाप्रेत दिखायी दिये, जो बड़े ही दुष्ट और भयंकर थे। धनशर्मा उन्हें देखकर डर गया। उन प्रेतोंके केश ऊपरको उठे हुए थे। लाल-लाल आँखें, काले-काले दाँत और सूखा हुआ उनका पेट था।

धनशर्माने पूछा—तुमलोग कौन हो? यह नारकी अवस्था तुम्हें कैसे प्राप्त हुई? मैं भयसे आतुर और दुःखी हूँ, दयाका

पात्र हूँ; मेरी रक्षा करो। मैं भगवान् विष्णुका दास हूँ, मेरी रक्षा करनेसे भगवान् तुमलोगोंका भी कल्याण करेंगे। भगवान् विष्णु ब्राह्मणोंके हितैषी हैं, मुझपर दया करनेसे वे तुम्हारे ऊपर संतुष्ट होंगे। श्रीविष्णुका अलसीके पुष्पके समान श्याम वर्ण है, वे पीताम्बरधारी हैं, उनका नाम श्रवण करनेमात्रसे सब पापोंका क्षय हो जाता है। भगवान् आदि और अन्तसे रहित, शंख, चक्र एवं गदा धारण करनेवाले, अविनाशी, कमलके समान नेत्रोंवाले तथा प्रेतोंको मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं।

यमराज कहते हैं—ब्रह्मन्! भगवान् विष्णुका नाम सुननेमात्रसे वे पिशाच संतुष्ट हो गये। उनका भाव पवित्र हो गया। वे दया और उदारताके वशीभूत हो गये। ब्राह्मणके कहे हुए वचनसे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई थी। उसके पूछनेपर वे प्रेत इस प्रकार बोले।

प्रेतोंने कहा—विप्र! तुम्हारे दर्शनमात्रसे तथा भगवान् श्रीहरिका नाम सुननेसे हम इस समय दूसरे ही भावको प्राप्त हो गये—हमारा भाव बदल गया, हम दयालु हो गये। वैष्णव पुरुषका समागम निश्चय ही पापोंको दूर भगाता, कल्याणसे संयोग कराता तथा शीघ्र ही यशका विस्तार करता है।* अब हमलोगोंका परिचय सुनो। यह पहला 'कृतघ्न' नामका प्रेत है, इस दूसरेका नाम 'विदैवत' है तथा तीसरा मैं हूँ, मेरा नाम 'अवैशाख' है, मैं तीनोंमें अधिक पापी हूँ। इस प्रथम पापीने सदा ही कृतघ्नता की है; अतः इसके कर्मके अनुसार ही इसका 'कृतघ्न' नाम पड़ा है। ब्रह्मन्! यह पूर्वजन्ममें 'सुदास' नामक द्रोही मनुष्य था, सदा कृतघ्नता किया करता था, उसी पापसे यह इस अवस्थाको पहुँचा

* दर्शनेनैव ते विप्र नामश्रवणतो हरेः। भावमन्यमनुप्राप्ता वयं जाता दयालवः॥
अपाकरोति दुरितं श्रेयः संयोजयत्यपि। यशो विस्तारयत्याशु नूनं वैष्णवसंगमः॥
(१४।५४-५५)

है। अत्यन्त पापी, धूर्त तथा गुरु और स्वामीका अहित करनेवाले मनुष्यके लिये भी पापोंसे छूटनेका उपाय है; परन्तु कृतघ्नके लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं है।*

इस दूसरे पापीने देवताओंका पूजन किये बिना ही सदा अन्न भोजन किया है, इसने गुरु और ब्राह्मणोंको कभी दान नहीं दिया है; इसीलिये इसका नाम 'विदैवत' हुआ है। यह पूर्वजन्ममें 'हरिवीर' नामसे विख्यात राजा था। दस हजार गाँवोंपर इसका अधिकार था। यह रोष, अहंकार तथा नास्तिकताके कारण गुरुजनोंकी आज्ञाका उल्लंघन करनेमें तत्पर रहता था। प्रतिदिन पंचमहायज्ञोंका अनुष्ठान किये बिना ही खाता और ब्राह्मणोंकी निन्दा किया करता था। उसी पापकर्मके कारण यह बड़े-बड़े नरकोंका कष्ट भोगकर इस समय 'विदैवत' नामक प्रेत हुआ है।

'अवैशाख' नामक तीसरा प्रेत मैं हूँ। मैं पूर्वजन्ममें ब्राह्मण था। मध्यदेशमें मेरा जन्म हुआ था। मेरा नाम भी गौतम था और गोत्र भी। मैं 'वासपुर' गाँवमें निवास करता था। मैंने वैशाखमासमें भगवान् माधवकी प्रसन्नताके उद्देश्यसे कभी स्नान नहीं किया। दान और हवन भी नहीं किया। विशेषतः वैशाखमाससे सम्बन्ध रखनेवाला कोई कर्म नहीं किया। वैशाखमें भगवान् मधुसूदनका पूजन नहीं किया तथा विद्वान् पुरुषोंको दान आदिसे संतुष्ट नहीं किया। वैशाखमासकी एक भी पूर्णिमाको, जो पूर्ण फल प्रदान करनेवाली है, मैंने स्नान, दान, शुभ कर्म, पूजा तथा पुण्यके द्वारा उसके व्रतका पालन नहीं किया। इससे मेरा सारा वैदिक कर्म निष्फल हो गया। मैं 'अवैशाख' नामक प्रेत होकर सब ओर विचरता हूँ।

हम तीनोंके प्रेतयोनिमें पड़नेका जो कारण है, वह सब मैंने

---

* अतिपापिनि धूर्ते च गुरुस्वाम्यहितेऽपि वा। निष्कृतिर्विद्यते विप्र कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः॥ (९४। ६०)

तुम्हें बता दिया। अब तुम हमलोगोंका पापसे उद्धार करो; क्योंकि तुम विप्र हो। ब्रह्मन्! पुण्यात्मा साधु पुरुष तीर्थोंसे भी बढ़कर हैं। वे शरणमें आये हुए महान् पापियोंको भी नरकसे तार देते हैं। जो मनुष्य सदा गंगा आदि सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करता है तथा जो केवल साधु पुरुषोंका संग करता है, उनमें साधु-संग करनेवाला पुरुष ही श्रेष्ठ है।* अतः तुम मेरा उद्धार करो अथवा मेरा एक पुत्र है, जो धनशर्मा नामसे विख्यात है; स्वामिन्! तुम उसीके पास जाकर ये सब बातें समझाओ। हमारे लिये इतना परिश्रम करो। जो दूसरोंका कार्य उपस्थित होनेपर उसके लिये उद्योग करता है, उसे उसका पूरा फल मिलता है; वह यज्ञ, दान और शुभ कर्मोंसे भी अधिक फलका भागी होता है।

यमराज कहते हैं—ब्रह्मन्! उस प्रेतका वचन सुनकर धनशर्माको बड़ा दुःख हुआ। उसने यह जान लिया कि ये मेरे पिता हैं, जो नरकमें पड़े हुए हैं। तब वह सर्वथा अपनी निन्दा करते हुए बोला।

धनशर्माने कहा—स्वामिन्! मैं ही गौतमका—आपका पुत्र धनशर्मा हूँ। मैं आपके किसी काम न आया, मेरा जन्म निरर्थक है। जो पुत्र आलस्य छोड़कर अपने पिताका उद्धार नहीं करता, वह अपनेको पवित्र नहीं कर पाता। जो इस लोक और परलोकमें भी सुखका संतान—विस्तार कर सके, वही संतान या तनय माना गया है। इस लोकमें धर्मकी दृष्टिसे पुरुषके दो ही गुरु हैं—पिता और माता। इनमें भी पिता ही श्रेष्ठ है; क्योंकि सर्वत्र बीजकी ही प्रधानता देखी जाती है। पिताजी! क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? कैसे आपकी गति होगी? मैं धर्मका तत्त्व नहीं जानता, केवल आपकी आज्ञाका पालन करूँगा।

प्रेत बोला—बेटा! घर जाओ और यमुनामें विधिपूर्वक स्नान

* गङ्गादिसर्वतीर्थेषु यो नरः स्नाति सर्वदा। यः करोति सतां सङ्गं तयोः सत्संगमो वरः॥ (९४। ७६)

करो। आजसे पाँचवें दिन वैशाखकी पूर्णिमा आनेवाली है, जो सब प्रकारकी उत्तम गति प्रदान करनेवाली तथा देवता और पितरोंके पूजनके लिये उपयुक्त है। उस दिन पितरोंके निमित्त भक्तिपूर्वक तिलमिश्रित जल, जलका घड़ा, अन्न और फल दान करना चाहिये। उस दिन जो श्राद्ध किया जाता है, वह पितरोंको हजार वर्षोंतक आनन्द प्रदान करनेवाला होता है। जो वैशाखकी पूर्णिमाको विधिपूर्वक स्नान करके दस ब्राह्मणोंको खीर भोजन कराता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो धर्मराजकी प्रसन्नताके लिये जलसे भरे हुए सात घड़े दान करता है, वह अपनी सात पीढ़ियोंको तार देता है। बेटा! त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा पूर्णिमाको भक्तिपरायण होकर स्नान, जप, दान, होम और श्रीमाधवका पूजन करो और उससे जो फल हो, वह हमलोगोंको समर्पित कर दो। ये दोनों प्रेत भी मेरे परिचित हो गये हैं; अतः इनको इसी अवस्थामें छोड़कर मैं स्वर्गमें नहीं जा सकता। इन दोनोंके पापका भी अन्त आ गया है।

यमराज कहते हैं—ब्रह्मन्! 'बहुत अच्छा' कहकर वह श्रेष्ठ ब्राह्मण अपने घर गया और वहाँ जाकर उसने सब कुछ उसी तरह किया। वह प्रसन्नतापूर्वक परम भक्तिके साथ वैशाख-स्नान और दान करने लगा। वैशाखकी पूर्णिमा आनेपर उसने आनन्दपूर्वक भक्तिसे स्नान किया और बहुत-से दान करके उन सबको पृथक्-पृथक् पुण्य प्रदान किया। उस पवित्र दानके संयोगसे वे सब आनन्दमग्न हो विमानपर बैठकर तत्क्षण ही स्वर्गको चले गये।

ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ धनशर्मा भी श्रुति, स्मृति और पुराणोंका ज्ञाता था। वह चिरकालतक उत्तम भोग भोगकर अन्तमें ब्रह्मलोकको प्राप्त हुआ। अतः यह वैशाखकी पूर्णिमा परम पुण्यमयी और समस्त विश्वको पवित्र करनेवाली है। इसका माहात्म्य बहुत

बड़ा है, अतएव मैंने संक्षेपसे तुम्हें इसका महत्त्व बतला दिया है। जो वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके नियमोंके पालनसे विशुद्धचित्त हो भगवान् मधुसूदनकी पूजा करते हैं, वे ही पुरुष धन्य हैं, वे ही पुण्यात्मा हैं तथा वे ही संसारमें पुरुषार्थके भागी हैं। जो मनुष्य वैशाखमासमें सबेरे स्नान करके सम्पूर्ण यम-नियमोंसे युक्त हो भगवान् लक्ष्मीपतिकी आराधना करता है, वह निश्चय ही अपने पापोंका नाश कर डालता है। जो प्रातःकाल उठकर श्रीविष्णुकी पूजाके लिये गंगाजीके जलमें डुबकी लगाते हैं, उन्हीं पुरुषोंने समयका सदुपयोग किया है, वे ही मनुष्योंमें धन्य तथा पापरहित हैं। वैशाखमासमें प्रातःकाल नियमयुक्त हो मनुष्य जब तीर्थमें स्नान करनेके लिये पैर बढ़ाता है, उस समय श्रीमाधवके स्मरण और नामकीर्तनसे उसका एक-एक पग अश्वमेध-यज्ञके समान पुण्य देनेवाला होता है। श्रीहरिके प्रियतम वैशाखमासके व्रतका यदि पालन किया जाय तो यह मेरुपर्वतके समान बड़े उग्र पापोंको भी जलाकर भस्म कर डालता है। विप्रवर! तुमपर अनुग्रह होनेके कारण मैंने यह प्रसंग संक्षेपसे तुम्हें बता दिया है। जो मेरे कहे हुए इस इतिहासको भक्तिपूर्वक सुनेगा, वह भी सब पापोंसे मुक्त हो जायगा तथा उसे मेरे लोक—यमलोकमें नहीं आना पड़ेगा। वैशाखमासके व्रतका विधिपूर्वक पालन करनेसे अनेकों बारके किये हुए ब्रह्महत्यादि पाप भी नष्ट हो जाते हैं—यह निश्चित बात है। वह पुरुष अपने तीस पीढ़ी पहलेके पूर्वजों और तीस पीढ़ी बादकी संतानोंको भी तार देता है; क्योंकि अनायास ही नाना प्रकारके कर्म करनेवाले भगवान् श्रीहरिको वैशाखमास बहुत ही प्रिय है; अतएव वह सब मासोंमें श्रेष्ठ है।

❑❑

वैशाख-माहात्म्यके प्रसंगमें राजा महीरथकी कथा और यम-ब्राह्मण-संवादका उपसंहार

यमराज कहते हैं—ब्रह्मन्! पूर्वकालकी बात है, महीरथ नामसे विख्यात एक राजा थे। उन्हें अपने पूर्वजन्मके पुण्योंके फलस्वरूप प्रचुर ऐश्वर्य और सम्पत्ति प्राप्त हुई थी। परन्तु राजा राज्यलक्ष्मीका सारा भार मन्त्रीपर रखकर स्वयं विषयभोगमें आसक्त हो रहे थे। वे न प्रजाकी ओर दृष्टि डालते थे, न धनकी ओर। धर्म और अर्थका काम भी कभी नहीं देखते थे। उनकी वाणी तथा उनका मन कामिनियोंकी क्रीड़ामें ही आसक्त था। राजाके पुरोहितका नाम कश्यप था; जब राजाको विषयोंमें रमते हुए बहुत दिन व्यतीत हो गये, तब पुरोहितने मनमें विचार किया—'जो गुरु मोहवश राजाको अधर्मसे नहीं रोकता, वह भी उसके पापका भागी होता है; यदि समझानेपर भी राजा अपने पुरोहितके वचनोंकी अवहेलना करता है तो पुरोहित निर्दोष हो जाता है। उस दशामें राजा ही सारे दोषोंका भागी होता है।' यह सोचकर उन्होंने राजासे धर्मानुकूल वचन कहा।

कश्यप बोले—राजन्! मैं तुम्हारा गुरु हूँ, अतः धर्म और अर्थसे युक्त मेरे वचनोंको सुनो। राजाके लिये यही सबसे बड़ा धर्म है कि वह गुरुकी आज्ञामें रहे। गुरुकी आज्ञाका आंशिक पालन भी राजाओंकी आयु, लक्ष्मी तथा सौख्यको बढ़ानेवाला है। तुमने दानके द्वारा कभी ब्राह्मणोंको तृप्त नहीं किया; भगवान् श्रीविष्णुकी आराधना नहीं की; कोई व्रत, तपस्या तथा तीर्थ भी नहीं किया। महाराज! कितने खेदकी बात है कि तुमने कामके अधीन होकर कभी भगवान्के नामका स्मरण नहीं किया। अबलाओंकी संगतिमें पड़कर विद्वानोंकी संगति नहीं की। जिसका मन स्त्रियोंने हर लिया, उसे अपनी विद्या, तपस्या, त्याग, नीति तथा विवेकशील

वित्तसे क्या लाभ हुआ।[१] एकमात्र धर्म ही सबसे महान् और श्रेष्ठ है, जो मृत्युके बाद भी साथ जाता है। शरीरके उपभोगमें आनेवाली अन्य जितनी वस्तुएँ हैं, वे सब यहीं नष्ट हो जाती हैं। धर्मकी सहायतासे ही मनुष्य दुर्गतिसे पार होता है। राजेन्द्र! क्या तुम नहीं जानते, मनुष्योंके जीवनका विलास जलकी उत्ताल तरंगोंके समान चंचल एवं अनित्य है। जिनके लिये विनय ही पगड़ी और मुकुट हैं, सत्य और धर्म ही कुण्डल हैं तथा त्याग ही कंगन हैं, उन्हें जड आभूषणोंकी क्या आवश्यकता है। मनुष्यके निर्जीव शरीरको ढेले और काठके समान पृथ्वीपर फेंक, उसके बन्धु-बान्धव मुँह फेरकर चल देते हैं; केवल धर्म ही उसके पीछे-पीछे जाता है। सब कुछ जा रहा है, आयु प्रतिदिन क्षीण हो रही है तथा यह जीवन भी लुप्त होता जा रहा है; ऐसी अवस्थामें भी तुम उठकर भागते क्यों नहीं? स्त्री-पुत्र आदि कुटुम्ब, शरीर तथा द्रव्य-संग्रह—ये सब पराये हैं, अनित्य हैं; किन्तु पुण्य और पाप अपने हैं। जब एक दिन सब कुछ छोड़कर तुम्हें विवशतापूर्वक जाना ही है तो तुम अनर्थमें फँसकर अपने धर्मका अनुष्ठान क्यों नहीं करते? मरनेके बाद उस दुर्गम पथपर अकेले कैसे जा सकोगे,जहाँ न ठहरनेके लिये स्थान, न खानेयोग्य अन्न, न पानी, न राहखर्च और न राह बतानेवाला कोई गुरु ही है। यहाँसे प्रस्थान करनेके बाद तुम्हारे पीछे कुछ भी नहीं जायगा, केवल पाप और पुण्य जाते समय तुम्हारे पीछे-पीछे जायँगे।[२]

१- किं विद्यया किं तपसा किं त्यागेन नयेन वा।
किं विविक्तेन मनसा स्त्रीभिर्यस्य मनो हतम्॥ (९५।१४)

२-मृतं शरीरमुत्सृज्य लोष्टकाष्ठसमं भुवि। विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति॥
गम्यमानेषु सर्वेषु क्षीयमाणे तथायुषि। जीविते लुप्यमाने च किमुत्थाय न धावसि॥
कुटुम्बं पुत्रदारादि शरीरं द्रव्यसञ्चयः। पारक्यमध्रुवं किन्तु स्वीये सुकृतदुष्कृते॥
यदा सर्वं परित्यज्य गन्तव्यमवशेन ते। अनर्थे किं प्रसक्तस्त्वं स्वधर्मं नानुतिष्ठसि॥
अविश्राममभक्ष्याम्बुमपाथेयमदेशिकम्। मृतः कान्तारमध्वानं कथमेको गमिष्यसि॥
न हि त्वां प्रस्थितं किञ्चित् पृष्ठतोऽनुगमिष्यति। दुष्कृतं सुकृतं च त्वां यास्यन्तमनुयास्यति॥
(९५।१९—२४)

अतः अब तुम आलस्य छोड़कर वेदों तथा स्मृतियोंमें बताये हुए देश और कुलके अनुरूप हितकारक कर्मका अनुष्ठान करो, धर्ममूलक सदाचारका सेवन करो। अर्थ और काम भी यदि धर्मसे रहित हों तो उनका परित्याग कर देना चाहिये। दिन-रात इन्द्रियविजयरूपी योगका अनुष्ठान करना चाहिये; क्योंकि जितेन्द्रिय राजा ही प्रजाको अपने वशमें रख सकता है। लक्ष्मी अत्यन्त प्रगल्भ रमणीके कटाक्षके समान चंचल होती है, विनयरूपी गुण धारण करनेसे ही वह राजाओंके पास दीर्घकालतक ठहरती है। जो अत्यन्त कामी और घमण्डी हैं, जिनका सारा कार्य बिना विचारे ही होता है, उन मूढ़चेता राजाओंकी सम्पत्ति उनकी आयुके साथ ही नष्ट हो जाती है। व्यसन और मृत्यु—इनमें व्यसनको ही कष्टदायक बताया गया है। व्यसनमें पड़े हुए राजाकी अधोगति होती है और जो व्यसनसे दूर रहता है, वह स्वर्गलोकमें जाता है।* व्यसन और दुःख विशेषतः कामसे ही उत्पन्न होते हैं; अतः कामका परित्याग करो। पापोंमें फँस जानेपर वैभव एवं भोग स्थिर नहीं रहते; वे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। चलते, रुकते, जागते और सोते समय भी जिसका चित्त विचारमें संलग्न नहीं रहता वह जीते-जी भी मरे हुएके ही तुल्य है। विद्वान् पुरुष विषय-चिन्ता छोड़कर समतापूर्ण, स्थिर एवं व्यावहारिक युक्तिसे परमार्थका साधन करते हैं। जीवका चित्त बालककी भाँति चपल होता है; अतः उससे बलपूर्वक काम लेना चाहिये। राजन्! धर्मके तत्त्वदर्शी वृद्ध पुरुषोंकी बुद्धिका सहारा ले पराबुद्धिके द्वारा अपने कुपथगामी चित्तको वशमें करना चाहिये। लौकिक धर्म, मित्र, भाई-बन्धु, हाथ-पैरोंका चलाना, देशान्तरमें जाना, शरीरसे क्लेश

* व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं कष्टमुच्यते। व्यसन्यधोऽधो व्रजति स्वर्यात्यव्यसनी नृपः॥ (९५। ३१)

उठाना तथा तीर्थके लिये यत्न करना आदि कोई भी परमपदकी प्राप्तिमें सहायता नहीं कर सकते; केवल परमात्मामें मन लगाकर उनका नाम-जप करनेसे ही उस पदकी प्राप्ति होती है।

इसलिये राजन्! विद्वान् पुरुषको उचित है कि वह विषयोंमें प्रवृत्त हुए चित्तको रोकनेके लिये यत्न करे। यत्नसे वह अवश्य ही वशमें हो जाता है। यदि मनुष्य मोहमें पड़ जाय—स्वयं विचार करनेमें असमर्थ हो जाय तो उसे विद्वान् सुहृदोंके पास जाकर प्रश्न करना चाहिये। वे पूछनेपर यथोचित कर्तव्यका उपदेश देते हैं। कल्याणकी इच्छा रखनेवालेको हर एक उपायसे काम और क्रोधका निग्रह करना चाहिये; क्योंकि वे दोनों कल्याणका विघात करनेके लिये उद्यत रहते हैं। राजन्! काम बड़ा बलवान् है; वह शरीरके भीतर रहनेवाला महान् शत्रु है। श्रेयकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुषको उसके अधीन नहीं होना चाहिये। अतः विधिपूर्वक पालन किया हुआ धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। इसलिये तुम धैर्य धारण करके धर्मका ही आचरण करो। यह श्वास बड़ा चंचल है, जीवन उसीके अधीन है। ऐसी स्थितिमें भी कौन मनुष्य धर्मके आचरणमें विलम्ब करेगा। राजन्! जो वृद्धावस्थाको प्राप्त हो चुका है, उसका चित्त भी इन निषिद्ध विषयोंकी ओरसे नहीं हटता; हाय! यह कितने शोककी बात है। पृथ्वीनाथ! इस कामके मोहमें पड़कर तुम्हारी सारी उम्र व्यर्थ बीत गयी, अब भी तो अपने हित-साधनमें लगो। राजन्! तुम्हारे लिये सर्वोत्तम हितकी बात कहता हूँ; क्योंकि मैं तुम्हारा पुरोहित और तुम्हारे भले-बुरे कर्मोंका भागी हूँ। मुनीश्वरोंने ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरुपत्नीगमन आदि महापातक बताये हैं; उनमेंसे मनुष्योंद्वारा मन, वाणी और शरीरसे भी किये हुए जो पाप हैं, उन्हें वैशाखमास नष्ट कर देता है। जैसे सूर्य अन्धकारका नाश करता है, उसी प्रकार वैशाखमास

पापरूपी महान् अन्धकारको सर्वथा नष्ट कर डालता है। इसलिये तुम विधिपूर्वक वैशाखव्रतका पालन करो। राजन्! मनुष्य वैशाखमासकी विधिके अनुष्ठानद्वारा होनेवाले पुण्यके प्रभावसे जन्मभरके किये हुए घोर पापोंका परित्याग करके परमधामको प्राप्त होता है। इसलिये महाराज! तुम भी इस वैशाखमासमें प्रातःस्नान करके विधिपूर्वक भगवान् मधुसूदनकी पूजा करो। जिस प्रकार कूटने-छाँटनेकी क्रियासे चावलकी भूसी छूट जाती है, माँजनेसे ताँबेकी कालिख मिट जाती है, उसी प्रकार शुभ कर्मका अनुष्ठान करनेसे पुरुषके अन्तःकरणका मल धुल जाता है।

राजाने कहा—सौम्य स्वभाववाले गुरुदेव! आपने मुझे वह अमृत पिलाया, जिसका आविर्भाव समुद्रसे नहीं हुआ है। आपका वचन संसाररूपी रोगका निवारण तथा दुर्व्यसनोंसे मुक्त करनेवाला द्रव्यभिन्न औषध है। आपने कृपा करके मुझे आज इस औषधका पान कराया है। विप्रवर! सत्पुरुषोंका समागम मनुष्योंको हर्ष प्रदान करनेवाली, उनके पापको दूर भगानेवाली तथा जरा-मृत्युका अपहरण करनेवाली संजीवनी बूटी है। इस पृथ्वीपर जो-जो मनोरथ दुर्लभ माने गये हैं, वे सब यहाँ साधु पुरुषोंके संगसे प्राप्त हो जाते हैं। जो पापोंका अपहरण करनेवाली सत्संगकी गंगामें स्नान कर चुका है, उसे दान, तीर्थसेवन, तपस्या तथा यज्ञ करनेकी क्या आवश्यकता है।* प्रभो! आजके पहले मेरे मनमें जो-जो भाव उठते थे, वे सब केवल काम-सुखके प्रति लोभ उत्पन्न करनेवाले थे; परन्तु आज आपके दर्शनसे तथा वचन सुननेसे उनमें विपरीत भाव आ गया। मूर्ख मनुष्य एक जन्मके

---

* हर्षप्रदो नृणां पापहानिकृज्जीवनौषधम्। जरामृत्युहरो विप्र सद्भिः सह समागमः॥
यानि यानि दुरापानि वाञ्छितानि महीतले। प्राप्यन्ते तानि तान्येव साधुनापीह संगमात्॥
यः स्नातः पापहरया साधुसंगमगङ्गया। किं तस्य दानैः किं तीर्थैः किं तपोभिः किमध्वरैः॥
(९६।३—५)

सुखके लिये हजारों जन्मोंका सुख नष्ट करता है और विद्वान् पुरुष एक जन्मसे हजारों जन्म बना लेते हैं। हाय! हाय! कितने खेदकी बात है कि मुझ मूर्खने अपने मनको सदा कामजनित रसके आस्वादन-सुखमें ही फँसाये रखनेके कारण कभी कुछ भी आत्म-कल्याणका कार्य नहीं किया। अहो! मेरे मनका कैसा मोह है, जिससे मैंने स्त्रियोंके फेरमें पड़कर अपने आत्माको घोर विपत्तिमें डाल दिया, जिसका भविष्य अत्यन्त दुःखमय है तथा जिससे पार पाना बहुत कठिन है। भगवन्! आपने स्वतः सन्तुष्ट होकर अपनी वाणीसे आज मुझे मेरी स्थितिका बोध करा दिया। अब उपदेश देकर मेरा उद्धार कीजिये। पूर्वजन्ममें मैंने कोई पुण्य किया था, जिससे आपने मुझे बोध कराया है। विशेषतः आपके चरणोंकी धूलिसे आज मैं पवित्र हो गया। वक्ताओंमें श्रेष्ठ! अब आप मुझे वैशाखमासकी विधि बताइये।

कश्यपजी बोले—राजन्! बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि वह बिना पूछे अथवा अन्यायपूर्वक पूछनेपर किसीको उपदेश न दे। लोकमें जानते हुए भी जडवत्—अनजानकी भाँति आचरण करे।[१] परन्तु विद्वानों, शिष्यों, पुत्रों तथा श्रद्धालु पुरुषोंको उनके हितकी बात कृपापूर्वक बिना पूछे भी बतानी चाहिये।[२] राजन्! इस समय तुम्हारा मन धर्ममें स्थित हुआ है, अतः तुम्हें वैशाख-स्नानके उत्तम व्रतका पालन कराऊँगा।

तदनन्तर पुरोहित कश्यपने राजा महीरथसे वैशाखमासमें स्नान, दान और पूजन कराया। शास्त्रमें वैशाख-स्नानकी जैसी विधि

१-नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयान्न चान्यायेन पृच्छतः। जानन्नपि हि मेधावी जडवल्लोक आचरेत्॥ (९६।१७)

२-विदुषामथ शिष्याणां पुत्राणां च कृपावता। अपृष्टमपि वक्तव्यं श्रेयः श्रद्धावतां हितम्॥ (९६।१८)

उन्होंने देखी थी, उसका पूरा-पूरा पालन कराया। राजा महीरथने भी गुरुकी प्रेरणासे उस समय विधिपूर्वक सब नियमोंका पालन किया तथा माधवमासका जो-जो विधान उन्होंने बताया, वह सब आदरपूर्वक सुना। उन नृपश्रेष्ठने प्रातःकाल स्नान करके भक्तिभावके साथ पाद्य और अर्घ्य आदि देकर श्रीहरिका पूजन किया तथा नैवेद्य भोग लगाया।

यमराज कहते हैं—ब्रह्मन्! तत्पश्चात् राजाके ऊपर कालकी दृष्टि पड़ी। अधिक मात्रामें रतिका सेवन करनेसे उन्हें क्षयका रोग हो गया था, जिससे उनका शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया; अन्ततोगत्वा उनकी मृत्यु हो गयी। उस समय मेरे तथा भगवान् विष्णुके दूत भी उन्हें लेने पहुँचे। विष्णुदूतोंने 'ये राजा धर्मात्मा हैं' यों कहकर मेरे सेवकोंको डाँटा और स्वयं राजाको विमानपर बिठाकर वे वैकुण्ठलोकमें ले गये। वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करनेसे राजाका पातक नष्ट हो चुका था। भगवान् विष्णुके दूत अत्यन्त चतुर होते हैं; वे भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार राजा महीरथको नरकमार्गके निकटसे ले चले। जाते-जाते राजाने नरकमें पकाये जानेके कारण घोर चीत्कार करनेवाले नारकीय जीवोंका आर्तनाद सुना। कड़ाहमें डालकर औंटाये जानेवाले पापियोंका क्रन्दन बड़ा भयंकर था। सुनकर राजाको बड़ा विस्मय हुआ। वे अत्यन्त दुःखी होकर दूतोंसे बोले—'जीवोंके कराहनेकी यह भयंकर आवाज क्यों सुनायी दे रही है? इसमें क्या कारण है? आप लोग सब बातें बतानेकी कृपा करें।'

विष्णुदूत बोले—जिन प्राणियोंने धर्मकी मर्यादाका परित्याग किया है, जो पापाचारी एवं पुण्यहीन हैं, वे तामिस्त्र आदि भयंकर नरकोंमें डाले गये हैं। पापी मनुष्य प्राण-त्यागके पश्चात् यमलोकके मार्गमें आकर भयानक दुःख भोगते हैं। यमराजके भयंकर दूत

उन्हें इधर-उधर घसीटते हैं और वे अन्धकारमें गिर पड़ते हैं। उन्हें आगमें जलाया जाता है। उनके शरीरमें काँटे चुभाये जाते हैं। उनको आरीसे चीरा जाता है तथा वे भूख-प्याससे पीड़ित रहते हैं। पीब और रक्तकी दुर्गन्धके कारण उन्हें बार-बार मूर्च्छा आ जाती है। कहीं वे खौलते हुए तेलमें औंटाये जाते हैं; कहीं उनपर मूसलोंकी मार पड़ती है और कहीं तपाये हुए लोहेकी शिलाओंपर डालकर उन्हें पकाया जाता है। कहीं वमन, कहीं पीब और कहीं रक्त उन्हें खानेको मिलता है। मुर्दोंकी दुर्गन्धसे भरे हुए करोड़ों नरक हैं, जहाँ 'शरपत्र' वन है, 'शिलापात' के स्थान हैं (जहाँ पापी शिलाओंपर पटके जाते हैं) तथा वहाँकी समतल भूमि भी आगसे तपी होती है। इसके सिवा गरम लोहेके, खौलते हुए तेलके, मेदाके, तपे हुए स्तम्भके तथा कूट-शाल्मलि नामके भी नरक हैं। छूरे, काँटे, कील और उग्र ज्वालाके कारण क्षोभ एवं भय उत्पन्न करनेवाले बहुत-से नरक हैं। कहीं तपी हुई वैतरणी नदी है। कहीं पीबसे भरे हुए अनेकों कुण्ड हैं। इन सबमें पृथक्-पृथक् पापियोंको डाला जाता है। कुछ नरक ऐसे हैं, जो जंगलके रूपमें हैं; वहाँके पत्ते तलवारकी धारके समान तीखे हैं। इसीसे उन्हें 'असिपत्रवन' कहते हैं; वहाँ प्रवेश करते ही नर-नारियोंके शरीर कटने और छिलने लगते हैं। कितने ही नरक घोर अन्धकार तथा आगकी लपटोंके कारण अत्यन्त दारुण प्रतीत होते हैं। इनमें बार-बार यातना भोगनेके कारण पापी जीव नाना प्रकारके स्वरोंमें रोते और विलाप करते हैं। राजन्! इस प्रकार ये शास्त्रविरुद्ध कर्म करनेवाले पापी जीव कराहते हुए नरकयातनाका कष्ट भोग रहे हैं। उन्हींका यह क्रन्दन हो रहा है। सभी प्राणियोंको अपने पूर्वकृत कर्मोंका भोग भोगना पड़ता है। परायी स्त्रियोंका संग प्रसन्नताके लिये किया जाता है, किन्तु

वास्तवमें वह दुःख ही देनेवाला होता है। दो घड़ीतक किया हुआ विषय-सुखका आस्वादन अनेक कल्पोंतक दुःख देनेवाला होता है। राजेन्द्र! तुमने वैशाखमासमें प्रातःस्नान किया है, उसकी विधिका पालन करनेसे तुम्हारा शरीर पावन बन गया है। उससे छूकर बहनेवाली वायुका स्पर्श पाकर ये क्षणभरके लिये सुखी हो गये हैं। तुम्हारे तेजसे इन्हें बड़ी तृप्ति मिल रही है। इसीसे अब ये नरकवर्ती जीव कराहना छोड़कर चुप हो गये हैं। पुण्यवानोंका नाम भी यदि सुना या उच्चारण किया जाय तो वह सुखका साधक होता है तथा उसे छूकर चलनेवाली वायु भी शरीरमें लगनेपर बड़ा सुख देती है।*

यमराज कहते हैं—करुणाके सागर राजा महीरथ अद्भुत कर्म करनेवाले भगवान् श्रीविष्णुके दूतोंकी उपर्युक्त बात सुनकर द्रवित हो उठे। निश्चय ही साधु पुरुषोंका हृदय मक्खनके समान होता है। जैसे नवनीत आगकी आँच पाकर पिघल जाता है, उसी प्रकार साधु पुरुषोंका हृदय भी दूसरोंके संतापसे संतप्त होकर द्रवित हो उठता है। उस समय राजाने दूतोंसे कहा।

राजा बोले—इन्हें देखकर मुझे बड़ी व्यथा हो रही है। मैं इन व्यथित प्राणियोंको छोड़कर जाना नहीं चाहता। मेरी समझमें सबसे बड़ा पापी वही है, जो समर्थ होते हुए भी वेदनाग्रस्त जीवोंका शोक दूर न कर सके। यदि मेरे शरीरको छूकर बहनेवाली वायुके स्पर्शसे ये जीव सुखी हुए हैं तो आप लोग मुझे उसी स्थानपर ले चलिये; क्योंकि जो चन्दनवृक्षकी भाँति दूसरोंके ताप दूर करके उन्हें आह्लादित करते हैं तथा जो परोपकारके लिये स्वयं कष्ट उठाते हैं, वे ही पुण्यात्मा हैं। संसारमें वे ही संत हैं,

---

* नामापि पुण्यशीलानां श्रुतं सौख्याय कीर्तितम्। जायते तद्वपुःस्पर्शवायुः स्पर्शसुखावहः॥ (१७। २७)

जो दूसरोंके दुःखोंका नाश करते हैं तथा पीड़ित जीवोंकी पीड़ा दूर करनेके लिये जिन्होंने अपने प्राणोंको तिनकेके समान निछावर कर दिया है। जो मनुष्य सदा दूसरोंकी भलाईके लिये उद्यत रहते हैं, उन्होंने ही इस पृथ्वीको धारण कर रखा है। जहाँ सदा अपने मनको ही सुख मिलता है, वह स्वर्ग भी नरकके ही समान है; अतः साधु पुरुष सदा दूसरोंके सुखसे ही सुखी होते हैं। यहाँ नरकमें गिरना अच्छा, प्राणोंसे वियोग हो जाना भी अच्छा; किन्तु पीड़ित जीवोंकी पीड़ा दूर किये बिना एक क्षण भी सुख भोगना अच्छा नहीं है।*

दूत बोले—राजन्! पापी पुरुष अपने कर्मोंका ही फल भोगते हुए भयंकर नरकमें पकाये जाते हैं। जिन्होंने दान, होम अथवा पुण्यतीर्थमें स्नान नहीं किया है; मनुष्योंका उपकार तथा कोई उत्तम पुण्य नहीं किया है; यज्ञ, तपस्या और प्रसन्नतापूर्वक भगवन्नामोंका जप नहीं किया है, वे ही परलोकमें आनेपर घोर नरकोंमें पकाये जाते हैं। जिनका शील-स्वभाव दूषित है, जो दुराचारी, व्यवहारमें निन्दित, दूसरोंकी बुराई करनेवाले एवं पापी हैं, वे ही नरकोंमें पड़ते हैं। जो पापी अपने मर्मभेदी वचनोंसे दूसरोंका हृदय विदीर्ण कर डालते हैं तथा जो परायी स्त्रियोंके साथ विहार करते हैं, वे नरकोंमें पकाये जाते हैं। महाभाग भूपाल! आओ, अब भगवान्के धामको चलें। तुम पुण्यवान् हो, अतः अब तुम्हारा यहाँ ठहरना उचित नहीं है।

---

* परतापच्छिदो ये तु चन्दना इव चन्दनाः। परोपकृतये ये तु पीड्यन्ते कृतिनो हि ते॥
सन्त्रस्त एव ये लोकेपरदुःखविदारणाः। आर्तानामार्तिनाशार्थं प्राणा येषां तृणोपमाः॥
तैरियं धार्यते भूमिर्नरैः परहितोद्यतैः। मनसो यत्सुखं नित्यं स स्वर्गो नरकोपमः॥
तस्मात्परसुखेनैव साधवः सुखिनः सदा। वरं निरयपातोऽत्र वरं प्राणवियोजनम्॥
न पुनः क्षणमार्तानामार्तिनाशमृते सुखम्॥
(९७। ३२—३५)

राजाने कहा—विष्णुदूतगण! यदि मैं पुण्यात्मा हूँ तो इस महाभयंकर यातनामार्गमें कैसे लाया गया? मैंने कौन-सा पाप किया है तथा किस पुण्यके प्रभावसे मैं विष्णुधामको जाऊँगा? आप लोग मेरे इस संशयका निवारण करें।

दूत बोले—राजन्! तुम्हारा मन कामके अधीन हो रहा था; इसलिये तुमने कोई पुण्य, यज्ञानुष्ठान अथवा यज्ञावशिष्ट अन्नका भोजन नहीं किया है। इसीलिये तुम्हें इस मार्गसे लाया गया है। किन्तु लगातार तीन वर्षोंतक तुमने अपने गुरुकी प्रेरणासे वैशाखमासमें विधिपूर्वक प्रातःस्नान किया है तथा महापापों और अतिपापोंकी राशिका विनाश करनेवाले भक्तवत्सल, विश्वेश्वर भगवान् मधुसूदनकी भक्तिपूर्वक पूजा की है। यह सब पुण्योंका सार है। केवल इस एक ही पुण्यसे तुम देवताओंद्वारा पूजित होकर श्रीविष्णुधामको ले जाये जा रहे हो। नरेश्वर! जैसे एक ही चिनगारी पड़ जानेसे तिनकोंकी राशि भस्म हो जाती है, उसी प्रकार वैशाखमें प्रातःस्नान करनेसे पापराशिका विनाश हो जाता है। जो वैशाखमें शास्त्रोक्त नियमोंसे युक्त होकर स्नान करता है, वह हरिभक्त पुरुष अतिपापोंके समूहसे छुटकारा पाकर विष्णुपदको प्राप्त होता है।*

यमराज कहते हैं—ब्रह्मन्! तब दयासागर राजाने उन जीवोंके शोकसे पीड़ित हो भगवान् श्रीविष्णुके दूतोंसे विनयपूर्वक कहा—'साधु पुरुष प्राप्त हुए ऐश्वर्यका, गुणोंका तथा पुण्यका यही फल मानते हैं कि इनके द्वारा कष्टमें पड़े हुए जीवोंकी रक्षा की जाय। यदि मेरा कुछ पुण्य है तो उसीके प्रभावसे ये नरकमें पड़े हुए

* भक्त्या सम्पूजितो विष्णुर्विश्वेशो मधुसूदनः। महापापातिपापौघनिहन्ता मधुसूदनः॥
सर्वैकसारेण पुनस्तेनैकेन नरेश्वर। नीयसे विष्णुभवनं पूज्यमानो मरुद्गणैः॥
यथैव विस्फुलिङ्गेन ज्वाल्यते तृणसञ्चयः। प्रातःस्नानेन वैशाखे तथाघौघो नरेश्वर॥
वैशाखे मासि यो युक्तो यथोक्तनियमैर्नरः। हरिभक्तोऽतिपापौघैर्मुक्तोऽच्युतपदं व्रजेत्॥
(१७। ४६—४८, ५०)

जीव निष्पाप होकर स्वर्गको चले जायँ और मैं इनकी जगह नरकमें निवास करूँगा।' राजाके ऐसे वचन सुनकर श्रीविष्णुके मनोहर दूत उनके सत्य और उदारतापर विचार करते हुए इस प्रकार बोले—'राजन्! इस दयारूप धर्मके अनुष्ठानसे तुम्हारे संचित धर्मकी विशेष वृद्धि हुई है। तुमने वैशाखमासमें जो स्नान, दान, जप, होम, तप तथा देवपूजन आदि कर्म किये हैं, वे अक्षय फल देनेवाले हो गये। जो वैशाखमासमें स्नान-दान करके भगवान्का पूजन करता है, वह सब कामनाओंको प्राप्त होकर श्रीविष्णुधामको जाता है। एक ओर तप, दान और यज्ञ आदिकी शुभ क्रियाएँ और एक ओर विधिपूर्वक आचरणमें लाया हुआ वैशाखमासका व्रत हो तो यह वैशाखमास ही महान् है। राजन्! वैशाखमासके एक दिनका भी जो पुण्य है, वह तुम्हारे लिये सब दानोंसे बढ़कर है। दयाके समान धर्म, दयाके समान तप, दयाके समान दान और दयाके समान कोई मित्र नहीं है।* पुण्यका दान करनेवाला मनुष्य सदा लाखगुना पुण्य प्राप्त करता है। विशेषतः तुम्हारी दयाके कारण धर्मकी अधिक वृद्धि हुई है। जो मनुष्य दुःखित प्राणियोंका दुःखसे उद्धार करता है, वही संसारमें पुण्यात्मा है। उसे भगवान् नारायणके अंशसे उत्पन्न समझना चाहिये। वीर! वैशाखमासकी पूर्णिमाको तीर्थमें जाकर जो तुमने सब पापोंका नाश करनेवाला स्नान-दान आदि पुण्य किया है, उसे विधिवत् भगवान् श्रीहरिको साक्षी बनाकर तीन बार प्रतिज्ञा करके इन पापियोंके लिये दान कर दो, जिससे ये नरकसे निकलकर स्वर्गको चले जायँ। हमारा तो ऐसा विश्वास है कि पीड़ित जन्तुओंको शान्ति प्रदान करनेसे जो आनन्द मिलता है, उसे मनुष्य स्वर्ग और

---

* न दयासदृशो धर्मो न दयासदृशं तपः। न दयासदृशं दानं न दयासदृशः सखा॥ (१८।१५)

मोक्षमें भी नहीं पा सकता। सौम्य! तुम्हारी बुद्धि दया एवं दानमें दृढ़ है, इसे देखकर हम लोगोंको भी उत्साह होता है। राजन्! यदि तुम्हें अच्छा जान पड़े तो अब बिना विलम्ब किये इन्हें वह पुण्य प्रदान करो, जो नरकयातनाके दुःखको दग्ध करनेवाला है।'

विष्णुदूतोंके यों कहनेपर दयालु राजा महीरथने भगवान् गदाधरको साक्षी बनाकर तीन बार प्रतिज्ञापूर्वक संकल्प करके उन पापियोंके लिये अपना पुण्य अर्पण किया। वैशाखमासके एक दिनके ही पुण्यका दान करनेपर वे सभी जीव यम-यातनाके दुःखसे मुक्त हो गये। फिर अत्यन्त हर्षमें भरकर वे श्रेष्ठ विमानपर आरूढ़ हुए और राजाकी प्रशंसा करते हुए उन्हें प्रणाम करके स्वर्गको चले गये। इस दानसे राजाको विशेष पुण्यकी प्राप्ति हुई। मुनियों और देवताओंका समुदाय उनकी स्तुति करने लगा तथा वे जगदीश्वर श्रीविष्णुके पार्षदोंद्वारा अभिवन्दित होकर उस परमपदको प्राप्त हुए, जो बड़े-बड़े योगियोंके लिये भी दुर्लभ है।

द्विजश्रेष्ठ! यह वैशाखमास और पूर्णिमाका कुछ माहात्म्य यहाँ थोड़ेमें बतलाया गया। यह धन, यश, आयु तथा परम कल्याण प्रदान करनेवाला है। इतना ही नहीं, इससे स्वर्ग तथा लक्ष्मीकी भी प्राप्ति होती है। यह प्रशंसनीय माहात्म्य अन्तःकरणको शुद्ध करनेवाला और पापोंको धो डालनेवाला है। माधवमासका यह माहात्म्य भगवान् माधवको अत्यन्त प्रिय है। राजा महीरथका चरित्र और हम दोनोंका मनोरम संवाद सुनने, पढ़ने तथा विधिपूर्वक अनुमोदन करनेसे मनुष्यको भगवान्‌की भक्ति प्राप्त होती है, जिससे समस्त क्लेशोंका नाश हो जाता है।

सूतजी कहते हैं—धर्मराजकी यह बात सुनकर वह ब्राह्मण उन्हें प्रणाम करके चला गया। उसने भूतलपर प्रतिवर्ष स्वयं तो वैशाख-स्नानकी विधिका पालन किया ही, दूसरोंसे भी कराया।

यह ब्राह्मण और यमका संवाद मैंने आप लोगोंसे वैशाखमासके पुण्यमय स्नानके प्रसंगमें सुनाया है। जो एकचित्त होकर वैशाखमासके माहात्म्यका श्रवण करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर श्रीविष्णुके परमपदको प्राप्त होता है।

पद्मपुराणान्तर्गत वैशाख-माहात्म्य सम्पूर्ण

□□

वैशाखमास-माहात्म्य

वैशाखमासकी श्रेष्ठता; उसमें जल, व्यजन, छत्र, पादुका और अन्न आदि दानोंकी महिमा

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

'भगवान् नारायण, नरश्रेष्ठ नर, देवी सरस्वती तथा महर्षि वेदव्यासको नमस्कार करके भगवान्‌की विजय-कथासे परिपूर्ण इतिहास-पुराण आदिका पाठ करना चाहिये।'

सूतजी कहते हैं—राजा अम्बरीषने परमेष्ठी ब्रह्माके पुत्र देवर्षि नारदसे पुण्यमय वैशाखमासका माहात्म्य इस प्रकार पूछा—'ब्रह्मन्! मैंने आपसे सभी महीनोंका माहात्म्य सुना। उस समय आपने यह कहा था कि सब महीनोंमें वैशाखमास श्रेष्ठ है। इसलिये यह बतानेकी कृपा करें कि वैशाखमास क्यों भगवान् विष्णुको प्रिय है और उस समय कौन-कौन-से धर्म भगवान् विष्णुके लिये प्रीतिकारक हैं?'

नारदजीने कहा—वैशाखमासको ब्रह्माजीने सब मासोंमें उत्तम सिद्ध किया है। वह माताकी भाँति सब जीवोंको सदा अभीष्ट वस्तु प्रदान करनेवाला है। धर्म, यज्ञ, क्रिया और तपस्याका सार

है। सम्पूर्ण देवताओंद्वारा पूजित है। जैसे विद्याओंमें वेद-विद्या, मन्त्रोंमें प्रणव, वृक्षोंमें कल्पवृक्ष, धेनुओंमें कामधेनु, देवताओंमें विष्णु, वर्णोंमें ब्राह्मण, प्रिय वस्तुओंमें प्राण, नदियोंमें गंगाजी, तेजोंमें सूर्य, अस्त्र-शस्त्रोंमें चक्र, धातुओंमें सुवर्ण, वैष्णवोंमें शिव तथा रत्नोंमें कौस्तुभमणि है, उसी प्रकार धर्मके साधनभूत महीनोंमें वैशाखमास सबसे उत्तम है। संसारमें इसके समान भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला दूसरा कोई मास नहीं है। जो वैशाखमासमें सूर्योदयसे पहले स्नान करता है, उससे भगवान् विष्णु निरन्तर प्रीति करते हैं। पाप तभीतक गर्जते हैं, जबतक जीव वैशाखमासमें प्रातःकाल जलमें स्नान नहीं करता। राजन्! वैशाखके महीनेमें सब तीर्थ आदि देवता (तीर्थके अतिरिक्त) बाहरके जलमें भी सदैव स्थित रहते हैं। भगवान् विष्णुकी आज्ञासे मनुष्योंका कल्याण करनेके लिये वे सूर्योदयसे लेकर छः दण्डके भीतरतक वहाँ मौजूद रहते हैं।

वैशाखके समान कोई मास नहीं है, सत्ययुगके समान कोई युग नहीं है, वेदके समान कोई शास्त्र नहीं है और गंगाजीके समान कोई तीर्थ नहीं है।* जलके समान दान नहीं है, खेतीके समान धन नहीं है और जीवनसे बढ़कर कोई लाभ नहीं है। उपवासके समान कोई तप नहीं, दानसे बढ़कर कोई सुख नहीं, दयाके समान धर्म नहीं, धर्मके समान मित्र नहीं, सत्यके समान यश नहीं, आरोग्यके समान उन्नति नहीं, भगवान् विष्णुसे बढ़कर कोई रक्षक नहीं और वैशाखमासके समान संसारमें कोई पवित्र मास नहीं है। ऐसा विद्वान् पुरुषोंका मत है। वैशाख श्रेष्ठ मास है और शेषशायी भगवान् विष्णुको सदा प्रिय है। सब दानोंसे जो

---

* न माधवसमो मासो न कृतेन युगं समम्।
न च वेदसमं शास्त्रं न तीर्थं गङ्गया समम्॥ (स्क० पु०, वै० वै० मा० २।१)

पुण्य होता है और सब तीर्थोंमें जो फल होता है, उसीको मनुष्य वैशाखमासमें केवल जलदान करके प्राप्त कर लेता है। जो जलदानमें असमर्थ है, ऐसे ऐश्वर्यकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुषको उचित है कि वह दूसरेको प्रबोध करे, दूसरेको जलदानका महत्त्व समझावे। यह सब दानोंसे बढ़कर हितकारी है। जो मनुष्य वैशाखमें सड़कपर यात्रियोंके लिये प्याऊ लगाता है, वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। नृपश्रेष्ठ! प्रपादान (पौंसला या प्याऊ) देवताओं, पितरों तथा ऋषियोंको अत्यन्त प्रीति देनेवाला है। जिसने प्याऊ लगाकर रास्तेके थके-माँदे मनुष्योंको सन्तुष्ट किया है, उसने ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवताओंको सन्तुष्ट कर लिया है। राजन्! वैशाखमासमें जलकी इच्छा रखनेवालेको जल, छाया चाहनेवालेको छाता और पंखेकी इच्छा रखनेवालेको पंखा देना चाहिये। राजेन्द्र! जो प्याससे पीड़ित महात्मा पुरुषके लिये शीतल जल प्रदान करता है, वह उतने ही मात्रसे दस हजार राजसूय यज्ञोंका फल पाता है। धूप और परिश्रमसे पीड़ित ब्राह्मणको जो पंखा डुलाकर हवा करता है, वह उतने ही मात्रसे निष्पाप होकर भगवान्‌का पार्षद हो जाता है। जो मार्गसे थके हुए श्रेष्ठ द्विजको वस्त्रसे भी हवा करता है, वह उतनेसे ही मुक्त हो भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। जो शुद्ध चित्तसे ताड़का पंखा देता है, वह सब पापोंका नाश करके ब्रह्मलोकको जाता है। जो विष्णुप्रिय वैशाखमासमें पादुका दान करता है, वह यमदूतोंका तिरस्कार करके विष्णुलोकमें जाता है। जो मार्गमें अनाथोंके ठहरनेके लिये विश्रामशाला बनवाता है, उसके पुण्य-फलका वर्णन किया नहीं जा सकता। मध्याह्नमें आये हुए ब्राह्मण अतिथिको यदि कोई भोजन दे, तो उसके फलका अन्त नहीं है। राजन्! अन्नदान मनुष्योंको तत्काल तृप्त करनेवाला है, इसलिये संसारमें अन्नके समान कोई दान नहीं है।

जो मनुष्य मार्गके थके हुए ब्राह्मणके लिये आश्रय देता है, उसके पुण्यफलका वर्णन किया नहीं जा सकता। भूपाल! जो अन्नदाता है, वह माता-पिता आदिका भी विस्मरण करा देता है। इसलिये तीनों लोकोंके निवासी अन्नदानकी ही प्रशंसा करते हैं। माता और पिता केवल जन्मके हेतु हैं, पर जो अन्न देकर पालन करता है, मनीषी पुरुष इस लोकमें उसीको पिता कहते हैं।

❑❑

वैशाखमासमें विविध वस्तुओंके दानका महत्त्व तथा वैशाखस्नानके नियम

नारदजी कहते हैं—वैशाखमासमें धूपसे तपे और थके-माँदे ब्राह्मणोंको श्रमनाशक सुखद पलंग देकर मनुष्य कभी जन्म-मृत्यु आदिके क्लेशोंसे कष्ट नहीं पाता। जो वैशाखमासमें पहननेके लिये कपड़े और बिछावन देता है, वह उसी जन्ममें सब भोगोंसे सम्पन्न हो जाता है और समस्त पापोंसे रहित हो ब्रह्मनिर्वाण (मोक्ष)-को प्राप्त होता है। जो तिनकेकी बनी हुई या अन्य खजूर आदिके पत्तोंकी बनी हुई चटाई दान करता है, उसकी उस चटाईपर साक्षात् भगवान् विष्णु शयन करते हैं। चटाई देनेवाला बैठने और बिछाने आदिमें सब ओरसे सुखी रहता है। जो सोनेके लिये चटाई और कम्बल देता है, वह उतने ही मात्रसे मुक्त हो जाता है। निद्रासे दुःखका नाश होता है, निद्रासे थकावट दूर होती है और वह निद्रा चटाईपर सोनेवालेको सुखपूर्वक आ जाती है। धूपसे कष्ट पाये हुए श्रेष्ठ ब्राह्मणको जो सूक्ष्मतर वस्त्र दान करता है, वह पूर्ण आयु और परलोकमें उत्तम गतिको पाता है। जो पुरुष ब्राह्मणको फूल और रोली देता है, वह लौकिक भोगोंका भोग करके मोक्षको प्राप्त होता है। जो खस, कुश और जलसे

वासित चन्दन देता है, वह सब भोगोंमें देवताओंकी सहायता पाता है तथा उसके पाप और दुःखकी हानि होकर परमानन्दकी प्राप्ति होती है। वैशाखके धर्मको जाननेवाला जो पुरुष गोरोचन और कस्तूरीका दान करता है, वह तीनों तापोंसे मुक्त होकर परम शान्तिको प्राप्त होता है। जो विश्रामशाला बनवाकर प्याऊसहित ब्राह्मणको दान करता है, वह लोकोंका अधिपति होता है। जो सड़कके किनारे बगीचा, पोखरा, कुआँ और मण्डप बनवाता है, वह धर्मात्मा है, उसे पुत्रोंकी क्या आवश्यकता है। उत्तम शास्त्रका श्रवण, तीर्थयात्रा, सत्संग, जलदान, अन्नदान, पीपलका वृक्ष लगाना तथा पुत्र—इन सातको विज्ञ पुरुष सन्तान मानते हैं। जो वैशाखमासमें तापनाशक तक्र दान करता है, वह इस पृथ्वीपर विद्वान् और धनवान् होता है। धूपके समय मट्ठेके समान कोई दान नहीं, इसलिये रास्तेके थके-माँदे ब्राह्मणको मट्ठा देना चाहिये। जो वैशाखमासमें धूपकी शान्तिके लिये दही और खाँड़ दान करता है तथा विष्णुप्रिय वैशाखमासमें जो स्वच्छ चावल देता है, वह पूर्ण आयु और सम्पूर्ण यज्ञोंका फल पाता है। जो पुरुष ब्राह्मणके लिये गोघृत अर्पण करता है, वह अश्वमेध यज्ञका फल पाकर विष्णुलोकमें आनन्दका अनुभव करता है। जो दिनके तापकी शान्तिके लिये सायंकालमें ब्राह्मणको ऊख दान करता है, उसको अक्षय पुण्य प्राप्त होता है। जो वैशाखमासमें शामको ब्राह्मणके लिये फल और शर्बत देता है, उससे उसके पितरोंको निश्चय ही अमृतपानका अवसर मिलता है। जो वैशाखके महीनेमें पके हुए आमके फलके साथ शर्बत देता है, उसके सारे पाप निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। जो वैशाखकी अमावास्याको पितरोंके उद्देश्यसे कस्तूरी, कपूर, बेला और खसकी सुगन्धसे वासित शर्बतसे भरा हुआ घड़ा दान करता है, वह छियानबे घड़ा दान करनेका पुण्य पाता है।

वैशाखमें तेल लगाना, दिनमें सोना, कांस्यके पात्रमें भोजन करना, खाटपर सोना, घरमें नहाना, निषिद्ध पदार्थ खाना, दुबारा भोजन करना तथा रातमें खाना—ये आठ बातें त्याग देनी चाहिये[१]। जो वैशाखमें व्रतका पालन करनेवाला पुरुष पद्म-पत्तेमें भोजन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो विष्णुलोकमें जाता है। जो विष्णुभक्त पुरुष वैशाखमासमें नदी-स्नान करता है, वह तीन जन्मोंके पापसे निश्चय ही मुक्त हो जाता है। जो प्रातःकाल सूर्योदयके समय किसी समुद्रगामिनी नदीमें वैशाख-स्नान करता है, वह सात जन्मोंके पापसे तत्काल छूट जाता है। जो मनुष्य सात गंगाओंमेंसे किसीमें भी उषःकालमें स्नान करता है, वह करोड़ों जन्मोंमें उपार्जित किये हुए पापसे निस्सन्देह मुक्त हो जाता है। जाह्नवी (गंगा), वृद्ध गंगा (गोदावरी), कालिन्दी (यमुना), सरस्वती, कावेरी, नर्मदा और वेणी—ये सात गंगाएँ कही गयी हैं।[२] वैशाखमास आनेपर जो प्रातःकाल बावलियोंमें स्नान करता है, उसके महापातकोंका नाश हो जाता है। कन्द, मूल, फल, शाक, नमक, गुड़, बेर, पत्र, जल और तक्र—जो भी वैशाखमें दिया जाय, वह सब अक्षय होता है। ब्रह्मा आदि देवता भी बिना दिये हुए कोई वस्तु नहीं पाते। जो दानसे हीन है, वह निर्धन होता है। अतः सुखकी इच्छा रखनेवाले पुरुषको वैशाख मासमें अवश्य दान करना चाहिये। सूर्यदेवके मेषराशिमें स्थित होनेपर भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे अवश्य प्रातःकाल स्नान करके भगवान् विष्णुकी पूजा करनी चाहिये। कोई महीरथ नामक एक राजा था, जो कामनाओंमें आसक्त और अजितेन्द्रिय था। वह

१-तैलाभ्यङ्गं दिवास्वापं तथा वै कांस्यभोजनम्। खट्वानिद्रां गृहे स्नानं निषिद्धस्य च भक्षणम्॥
वैशाखे वर्जयेदष्टौ द्विभुक्तं नक्तभोजनम्। (स्क० पु०, वै० वै० मा० ४। १-२)

२-जाह्नवी वृद्धगङ्गा च कालिन्दी च सरस्वती। कावेरी नर्मदा वेणी सप्तगङ्गा प्रकीर्तिता॥
(स्क० पु०, वै० वै० मा० ४। १५)

केवल वैशाख-स्नानके सुयोगसे स्वतः वैकुण्ठधामको चला गया। वैशाखमासके देवता भगवान् मधुसूदन हैं। अतएव वह सफल मास है। वैशाखमासमें भगवान्की प्रार्थनाका मन्त्र इस प्रकार है—

मधुसूदन देवेश वैशाखे मेषगे रवौ।
प्रातःस्नानं करिष्यामि निर्विघ्नं कुरु माधव॥

'हे मधुसूदन! हे देवेश्वर माधव! मैं मेषराशिमें सूर्यके स्थित होनेपर वैशाखमासमें प्रातःस्नान करूँगा, आप इसे निर्विघ्न पूर्ण कीजिये।'

तत्पश्चात् निम्नांकित मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करे—

वैशाखे मेषगे भानौ प्रातःस्नानपरायणः।
अर्घ्यं तेऽहं प्रदास्यामि गृहाण मधुसूदन॥

'सूर्यके मेषराशिपर स्थित रहते हुए वैशाखमासमें प्रातःस्नानके नियममें संलग्न होकर मैं आपको अर्घ्य देता हूँ। मधुसूदन! इसे ग्रहण कीजिये।'

इस प्रकार अर्घ्य समर्पण करके स्नान करे। फिर वस्त्रोंको पहनकर सन्ध्या-तर्पण आदि सब कर्मोंको पूरा करके वैशाखमासमें विकसित होनेवाले पुष्पोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करे। उसके बाद वैशाखमासके माहात्म्यको सूचित करनेवाली भगवान् विष्णुकी कथा सुने। ऐसा करनेसे कोटि जन्मोंके पापोंसे मुक्त होकर मनुष्य मोक्षको प्राप्त होता है। यह शरीर अपने अधीन है, जल भी अपने अधीन ही है, साथ ही अपनी जिह्वा भी अपने वशमें है। अतः इस स्वाधीन शरीरसे स्वाधीन जलमें स्नान करके स्वाधीन जिह्वासे 'हरि' इन दो अक्षरोंका उच्चारण करे। जो वैशाखमासमें तुलसीदलसे भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, वह विष्णुकी सायुज्य मुक्तिको पाता है। अतः अनेक प्रकारके भक्तिमार्गसे तथा भाँति-भाँतिके व्रतोंद्वारा भगवान् विष्णुकी सेवा तथा उनके सगुण या निर्गुण स्वरूपका अनन्य चित्तसे ध्यान करना चाहिये।

□□

वैशाखमासमें छत्रदानसे हेमकान्तका उद्धार

नारदजी कहते हैं—एक समय विदेहराज जनकके घर दोपहरके समय श्रुतदेव नामसे विख्यात एक श्रेष्ठ मुनि पधारे, जो वेदोंके ज्ञाता थे। उन्हें देखकर राजा बड़े उल्लासके साथ उठकर खड़े हो गये और मधुपर्क आदि सामग्रियोंसे उनकी विधिपूर्वक पूजा करके राजाने उनके चरणोदकको अपने मस्तकपर धारण किया। इस प्रकार स्वागत-सत्कारके पश्चात् जब वे आसनपर विराजमान हुए, तब विदेहराजके प्रश्नके अनुसार वैशाखमासके माहात्म्यका वर्णन करते हुए वे इस प्रकार बोले।

श्रुतदेवने कहा—राजन्! जो लोग वैशाखमासमें धूपसे सन्तप्त होनेवाले महात्मा पुरुषोंके ऊपर छाता लगाते हैं, उन्हें अनन्त पुण्यकी प्राप्ति होती है। इस विषयमें एक प्राचीन इतिहासका उदाहरण दिया करते हैं। पहले वंगदेशमें हेमकान्त नामसे विख्यात एक राजा हो गये हैं। वे कुशकेतुके पुत्र परम बुद्धिमान् और शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ थे। एक दिन वे शिकार खेलनेमें आसक्त होकर एक गहन वनमें जा घुसे। वहाँ अनेक प्रकारके मृग और वराह आदि जन्तुओंको मारकर जब वे बहुत थक गये, तब दोपहरके समय मुनियोंके आश्रमपर आये। उस समय आश्रमपर उत्तम व्रतका पालन करनेवाले शतर्चि नामवाले ऋषि समाधि लगाये बैठे थे, जिन्हें बाहरके कार्योंका कुछ भी भान नहीं होता था। उन्हें निश्चल बैठे देख राजाको बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने उन महात्माओंको मार डालनेका निश्चय किया। तब उन ऋषियोंके दस हजार शिष्योंने राजाको मना करते हुए कहा—'ओ खोटी बुद्धिवाले नरेश! हमारे गुरुलोग इस समय समाधिमें स्थित हैं, बाहर कहाँ क्या हो रहा है—इसको ये नहीं जानते। इसलिये इनपर तुम्हें क्रोध नहीं करना चाहिये।'

तब राजाने क्रोधसे विह्वल होकर शिष्योंसे कहा—द्विजकुमारो!

मैं मार्गसे थका-माँदा यहाँ आया हूँ। अतः तुम्हीं लोग मेरा आतिथ्य करो। राजाके ऐसा कहनेपर वे शिष्य बोले—'हम लोग भिक्षा माँगकर खानेवाले हैं। गुरुजनोंने हमें किसीके आतिथ्यके लिये आज्ञा नहीं दी है। हम सर्वथा गुरुके अधीन हैं। अतः तुम्हारा आतिथ्य कैसे कर सकते हैं।' शिष्योंका यह कोरा उत्तर पाकर राजाने उन्हें मारनेके लिये धनुष उठाया और इस प्रकार कहा—'मैंने हिंसक जीवों और लुटेरोंके भय आदिसे जिनकी अनेकों बार रक्षा की है, जो मेरे दिये हुए दानोंपर ही पलते हैं, वे आज मुझे ही सिखलाने चले हैं। ये मुझे नहीं जानते, ये सभी कृतघ्न और बड़े अभिमानी हैं। इन आततायियोंको मार डालनेपर भी मुझे कोई दोष नहीं लगेगा।' ऐसा कहकर वे कुपित हो धनुषसे बाण छोड़ने लगे। बेचारे शिष्य आश्रम छोड़कर भयसे भाग चले। भागनेपर भी हेमकान्तने उनका पीछा किया और तीन सौ शिष्योंको मार गिराया। शिष्योंके भाग जानेपर आश्रमपर जो कुछ सामग्री थी, उसे राजाके पापात्मा सैनिकोंने लूट लिया। राजाके अनुमोदनसे ही उन्होंने वहाँ इच्छानुसार भोजन किया। तत्पश्चात् दिन बीतते-बीतते राजा सेनाके साथ अपनी पुरीमें आ गये। राजा कुशकेतुने जब अपने पुत्रका यह अन्यायपूर्ण कार्य सुना, तब उसे राज्य करनेके अयोग्य जानकर उसकी निन्दा करते हुए उसे देशनिकाला दे दिया। पिताके त्याग देनेपर हेमकान्त घने वनमें चला गया। वहाँ उसने बहुत वर्षोंतक निवास किया। ब्रह्महत्या उसका सदा पीछा करती रहती थी, इसलिये वह कहीं भी स्थिरतापूर्वक रह नहीं पाता था। इस प्रकार उस दुष्टात्माके अट्ठाईस वर्ष व्यतीत हो गये। एक दिन वैशाखमासमें जब दोपहरका समय हो रहा था, महामुनि त्रित तीर्थयात्राके प्रसंगसे उस वनमें आये। वे धूपसे अत्यन्त संतप्त और तृषासे बहुत पीड़ित थे, इसलिये किसी वृक्षहीन प्रदेशमें

मूर्च्छित होकर गिर पड़े। दैवयोगसे हेमकान्त उधर आ निकला; उसने मुनिको प्याससे पीड़ित, मूर्च्छित और थका-माँदा देख उनपर बड़ी दया की। उसने पलाशके पत्तोंसे छत्र बनाकर उनके ऊपर आती हुई धूपका निवारण किया। वह स्वयं मुनिके मस्तकपर छाता लगाये खड़ा हुआ और तूँबीमें रखा हुआ जल उनके मुँहमें डाला। इस उपचारसे मुनिको चेत हो आया और उन्होंने क्षत्रियके दिये हुए पत्तेके छातेको लेकर अपनी व्याकुलता दूर की। उनकी इन्द्रियोंमें कुछ शक्ति आयी और वे धीरे-धीरे किसी गाँवमें पहुँच गये। उस पुण्यके प्रभावसे हेमकान्तकी तीन सौ ब्रह्महत्याएँ नष्ट हो गयीं। इसी समय यमराजके दूत हेमकान्तको लेनेके लिये वनमें आये। उन्होंने उसके प्राण लेनेके लिये संग्रहणी रोग पैदा किया। उस समय प्राण छूटनेकी पीड़ासे छटपटाते हुए हेमकान्तने तीन अत्यन्त भयंकर यमदूतोंको देखा, जिनके बाल ऊपरकी ओर उठे हुए थे। उस समय अपने कर्मोंको याद करके वह चुप हो गया। छत्र-दानके प्रभावसे उसको भगवान् विष्णुका स्मरण हुआ। उसके स्मरण करनेपर भगवान् महाविष्णुने विष्वक्सेनसे कहा—'तुम शीघ्र जाओ, यमदूतोंको रोको, हेमकान्तकी रक्षा करो। अब वह निष्पाप एवं मेरा भक्त हो गया है। उसे नगरमें ले जाकर उसके पिताको सौंप दो। साथ ही मेरे कहनेसे कुशकेतुको यह समझाओ कि तुम्हारे पुत्रने अपराधी होनेपर भी वैशाखमासमें छत्र-दान करके एक मुनिकी रक्षा की है। अतः वह पापरहित हो गया है। इस पुण्यके प्रभावसे वह मन और इन्द्रियोंको अपने वशमें रखनेवाला दीर्घायु, शूरता और उदारता आदि गुणोंसे युक्त तथा तुम्हारे समान गुणवान् हो गया है। इसलिये अपने इस महाबली पुत्रको तुम राज्यका भार सँभालनेके लिये नियुक्त करो। भगवान् विष्णुने तुम्हें ऐसी ही आज्ञा दी है। इस प्रकार राजाको आदेश देकर हेमकान्तको उनके अधीन करके यहाँ लौट आओ।'

भगवान् विष्णुका यह आदेश पाकर महाबली विष्वक्सेनने हेमकान्तके पास आकर यमदूतोंको रोका और अपने कल्याणमय हाथोंसे उसके सब अंगोंमें स्पर्श किया। भगवद्भक्तके स्पर्शसे हेमकान्तकी सारी व्याधि क्षणभरमें दूर हो गयी। तदनन्तर विष्वक्सेन उसके साथ राजाकी पुरीमें गये। उन्हें देखकर महाराज कुशकेतुने आश्चर्ययुक्त हो भक्तिपूर्वक मस्तक झुकाकर पृथ्वीपर साष्टांग प्रणाम किया और भगवान्‌के पार्षदका अपने घरमें प्रवेश कराया। वहाँ नाना प्रकारके स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति तथा वैभवोंसे उनका पूजन किया। तत्पश्चात् महाबली विष्वक्सेनने अत्यन्त प्रसन्न होकर राजाको हेमकान्तके विषयमें भगवान् विष्णुने जो सन्देश दिया था, वह सब कह सुनाया। उसे सुनकर कुशकेतुने पुत्रको राज्यपर बिठा दिया और स्वयं विष्वक्सेनकी आज्ञा लेकर उन्होंने पत्नीसहित वनको प्रस्थान किया। तदनन्तर महामना विष्वक्सेन हेमकान्तसे पूछकर और उसकी प्रशंसा करके श्वेतद्वीपमें भगवान् विष्णुके समीप चले गये। तबसे राजा हेमकान्त वैशाखमासमें बताये हुए भगवान्‌की प्रसन्नताको बढ़ानेवाले शुभ धर्मोंका प्रतिवर्ष पालन करने लगे। वे ब्राह्मणभक्त, धर्मनिष्ठ, शान्त, जितेन्द्रिय, सब प्राणियोंके प्रति दयालु और सम्पूर्ण यज्ञोंकी दीक्षामें स्थित रहकर सब प्रकारकी सम्पदाओंसे सम्पन्न हो गये। उन्होंने पुत्र-पौत्र आदिके साथ समस्त भोगोंका उपभोग करके भगवान् विष्णुका लोक प्राप्त किया। वैशाख सुखसे साध्य, अतिशय पुण्य प्रदान करनेवाला है। पापरूपी इन्धनको अग्निकी भाँति जलानेवाला, परम सुलभ तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला है।

❑❑

महर्षि वसिष्ठके उपदेशसे राजा कीर्तिमान्‌का अपने राज्यमें वैशाखमासके धर्मका पालन कराना और यमराजका ब्रह्माजीसे राजाके लिये शिकायत करना

मिथिलापतिने पूछा—ब्रह्मन्! जब वैशाखमासके धर्म अतिशय सुलभ, पुण्यराशि प्रदान करनेवाले, भगवान् विष्णुके लिये प्रीतिकारक, चारों पुरुषार्थोंकी तत्काल सिद्धि करनेवाले, सनातन और वेदोक्त हैं, तब संसारमें उनकी प्रसिद्धि कैसे नहीं हुई?

श्रुतदेवजीने कहा—राजन्! इस पृथ्वीपर लौकिक कामना रखनेवाले ही मनुष्य अधिक हैं। उनमेंसे कुछ राजस और कुछ तामस हैं। वे लोग इस संसारके भोगों तथा पुत्र-पौत्रादि सम्पदाओंकी ही अभिलाषा रखते हैं। कहीं किसी प्रकार कभी बड़ी कठिनाईसे कोई एक मनुष्य ऐसा मिलता है, जो स्वर्गलोकके लिये प्रयत्न करता है और इसीलिये वह यज्ञ आदि पुण्यकर्मोंका अनुष्ठान बड़े प्रयत्नसे करता है; परंतु मोक्षकी उपासना प्रायः कोई नहीं करता। तुच्छ आशाएँ लेकर बहुत-से कर्मोंका आयोजन करनेवाले लोग प्रायः काम्य-कर्मोंके ही उपासक हैं। यही कारण है कि संसारमें राजस और तामस धर्म अधिक विख्यात हो गये, परंतु सात्त्विक धर्मोंकी प्रसिद्धि नहीं हुई। ये सात्त्विक धर्म भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाले हैं, निष्कामभावसे किये जाते हैं और इहलोक तथा परलोकमें सुख प्रदान करते हैं। देवमायासे मोहित होनेके कारण मूढ़ मनुष्य इन धर्मोंको जानते ही नहीं हैं।

पूर्वकालकी बात है, काशीपुरीमें कीर्तिमान् नामसे विख्यात एक चक्रवर्ती राजा थे। वे इक्ष्वाकुवंशके भूषण तथा महाराज नृगके पुत्र थे। संसारमें उनका बड़ा यश था। वे अपनी इन्द्रियोंपर और क्रोधपर विजय पा चुके थे। ब्राह्मणोंके प्रति उनके मनमें बड़ी भक्ति थी। राजाओंमें उनका स्थान बहुत ऊँचा था। एक दिन वे मृगयामें आसक्त होकर महर्षि वसिष्ठके आश्रमपर आये।

वैशाखकी चिलचिलाती हुई धूपमें यात्रा करते हुए राजाने मार्गमें देखा, महात्मा वसिष्ठके शिष्य जगह-जगह अनेक प्रकारके कार्योंमें विशेष तत्परताके साथ संलग्न थे। वे कहीं पौंसला बनाते थे और कहीं छायामण्डप। किनारेपर झरनोंके जलको रोककर स्वच्छ बावली बनाते थे। कहीं वृक्षोंके नीचे बैठे हुए लोगोंको वे पंखा डुलाकर हवा करते थे, कहीं ऊख देते, कहीं सुगन्धित पदार्थ भेंट करते और कहीं फल देते थे। दोपहरीमें लोगोंको छाता देते और सन्ध्याके समय शर्बत। कोई शिष्य घनी छायावाले वनमें झाड़-बुहारकर साफ किये हुए आश्रमके प्रांगणोंमें हितकारक बालुका बिछाते थे और कुछ लोग वृक्षोंकी शाखामें झूला लटकाते थे।

उन्हें देखकर राजाने पूछा—'आपलोग कौन हैं?' उन्होंने उत्तर दिया—'हम लोग महर्षि वसिष्ठके शिष्य हैं।' राजाने पूछा—'यह सब क्या हो रहा है?' वे बोले—'ये वैशाखमासमें कर्तव्यरूपसे बताये गये धर्म हैं, जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंके साधक हैं। हम लोग गुरुदेव वसिष्ठकी आज्ञासे इन धर्मोंका पालन करते हैं।' राजाने पुनः पूछा—'इनके अनुष्ठानसे मनुष्योंको कौन-सा फल मिलता है? किस देवताकी प्रसन्नता होती है?' उन्होंने उत्तर दिया—'हमें इस समय यह बतानेके लिये अवकाश नहीं है, आप गुरुजीसे ही यथोचित प्रश्न कीजिये। वे महायशस्वी महर्षि इन धर्मोंको यथार्थरूपसे जानते हैं।'

शिष्योंसे ऐसा उत्तर पाकर राजा शीघ्र ही महर्षि वसिष्ठके पवित्र आश्रमपर, जो विद्या और योगशक्तिसे सम्पन्न था, गये। राजाको आते देख महर्षि वसिष्ठ मन-ही-मन बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सेवकोंसहित महात्मा राजाका विधिपूर्वक आतिथ्य-सत्कार किया। जब वे आरामसे बैठ गये, तब गुरु वसिष्ठसे प्रसन्नतापूर्वक बोले—'भगवन्! मैंने मार्गमें आपके शिष्योंद्वारा परम आश्चर्यमय शुभ कर्मोंका अनुष्ठान होते देखा है; किंतु उसके सम्बन्धमें जब

प्रश्न किया, तब उन्होंने दूसरी कोई बात न बताकर आपके पास जानेकी आज्ञा दी। उनकी आज्ञाके अनुसार मैं इस समय आपके समीप आया हूँ। मेरे मनमें उन धर्मोंको सुननेकी बड़ी इच्छा है। अतः आप मुझसे उनका वर्णन करें।'

तब महायशस्वी वसिष्ठजीने प्रसन्नतापूर्वक कहा—राजन्! तुम्हारी बुद्धिको उत्तम शिक्षा मिली है। अतः उसने यह उत्तम निश्चय किया है। भगवान् विष्णुकी कथाके श्रवण और भगवद्धर्मोंके अनुष्ठानमें जो तुम्हारी बुद्धिकी आत्यन्तिक प्रवृत्ति हुई है, यह तुम्हारे किसी पुण्यका ही फल है। जिसने वैशाखमासमें बताये हुए महाधर्मोंके द्वारा भगवान् श्रीहरिकी आराधना की है, उसके उन धर्मोंसे भगवान् बहुत सन्तुष्ट होते और उसे मनोवांछित वस्तु प्रदान करते हैं। सम्पूर्ण जगत्के स्वामी भगवान् लक्ष्मीपति समस्त पापराशिका विनाश करनेवाले हैं। वे सूक्ष्म धर्मोंसे प्रसन्न होते हैं, केवल परिश्रम और धनसे नहीं। भगवान् विष्णु भक्तिसे पूजित होनेपर अभीष्ट वस्तु प्रदान करते हैं; इसलिये सदा भगवान् विष्णुकी भक्ति करनी चाहिये। जगदीश्वर श्रीहरि जलसे भी पूजा करनेपर अशेष क्लेशका नाश करते और शीघ्र प्रसन्न होते हैं। वैशाखमासमें बताये हुए ये धर्म थोड़े-से परिश्रमद्वारा साध्य होनेपर भी भगवान् विष्णुके लिये प्रीतिकारक एवं शुभ होनेके कारण अधिक व्ययसे सिद्ध होनेवाले बड़े-बड़े यज्ञादि कर्मोंका भी तिरस्कार करनेवाले हैं। अतः भूपाल! तुम भी वैशाखमासमें बताये हुए धर्मोंका पालन करो और तुम्हारे राज्यमें निवास करनेवाले अन्य सब लोगोंसे भी उन कल्याणकारी धर्मोंका पालन कराओ।

इस प्रकारसे वैशाख-धर्मके पालनकी आवश्यकताको शास्त्रों और युक्तियोंसे भलीभाँति सिद्ध करके वसिष्ठजीने वैशाखमासके सब धर्मोंका राजाके समक्ष वर्णन किया। उन सब धर्मोंको सुनकर राजाने गुरुका भक्तिभावसे पूजन किया और घर आकर वे सब

धर्मोंका विधिपूर्वक पालन करने लगे। देवाधिदेव भगवान् विष्णुमें भक्ति रखते हुए राजा कीर्तिमान् देवेश्वर पद्मनाभके अतिरिक्त और किसी देवताको नहीं देखते थे। उन्होंने हाथीकी पीठपर नगाड़ा रखकर सिपाहियोंसे अपने राज्यभरमें डंकेकी चोट यह घोषणा करा दी कि 'मेरे राज्यमें जो आठ वर्षसे अधिककी आयुवाला मनुष्य है, उसकी आयु जबतक अस्सी वर्षकी न हो जाय, तबतक मेषराशिमें सूर्यके स्थित होनेपर यदि वह प्रातःकाल स्नान नहीं करेगा तो मेरे द्वारा दण्डनीय, वध्य तथा राज्यसे निकाल देने योग्य समझा जायगा—यह मेरा निश्चित आदेश है। पिता, पुत्र, पत्नी अथवा सुहृद्—जो कोई भी वैशाख-धर्मका पालन नहीं करेगा, वह चोरकी भाँति दण्डका पात्र समझा जायगा। प्रातःकाल शुभ जलमें स्नान करके श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको दान करना चाहिये। तुम सब लोग अपनी शक्तिके अनुसार पौंसला और दान आदि धर्मोंका आचरण करो।'

राजा कीर्तिमान्ने प्रत्येक ग्राममें धर्मका उपदेश करनेवाले एक-एक ब्राह्मणको बसाया। पाँच-पाँच गाँवोंपर एक-एक ऐसे अधिकारीकी नियुक्ति की, जो धर्मका त्याग करनेवाले लोगोंको दण्ड दे सके। उस अधिकारीकी सेवामें दस-दस घुड़सवार रहते थे। इस प्रकार चक्रवर्ती नरेशके शासनसे सर्वत्र और सब देशोंमें यह धर्मका पौधा प्रारम्भ हुआ और आगे चलकर खूब बढ़े हुए वृक्षके रूपमें परिणत हो गया। उस राजाके राज्यमें जो लोग मर जाते थे, वे भगवान् विष्णुके धाममें जाते थे। वहाँके मनुष्योंको विष्णुलोककी प्राप्ति निश्चित थी। एक बार भी वैशाख-स्नान कर लेनेसे मनुष्य यमराजके पास नहीं जाता। अपने धर्मानुकूल कर्ममें स्थित हुए सब लोगोंके विष्णुलोकमें चले जानेसे यमपुरीके सब नरक खाली हो गये। वहाँ एक भी पापी प्राणी नहीं रह गया। वैशाखमासके प्रभावसे यमपुरीके मार्गकी यात्रा ही बंद हो गयी। सब मनुष्य दिव्य आकृति धारण करके भगवान्के धाममें जाने

लगे। देवताओंके जो लोक हैं, वे सब भी शून्य हो गये। स्वर्ग और नरक दोनोंके शून्य हो जानेपर एक दिन नारदजीने धर्मराजके पास जाकर कहा—'धर्मराज! आपके इस नरकमें अब पहले-जैसा कोलाहल नहीं सुनायी पड़ता, पहलेकी भाँति पाप-कर्मोंका लेखा भी नहीं लिखा जा रहा है। चित्रगुप्तजी तो ऐसे मौनभावसे बैठे हुए हैं, जैसे कोई मुनि हों। महाराज! इसका कारण तो बताइये?'

महात्मा नारदके ऐसा कहनेपर राजा यमने कुछ दीनताके स्वरमें कहा—नारद! इस समय पृथ्वीपर जो यह राजा राज्य करता है, वह पुराणपुरुषोत्तम भगवान् विष्णुका बड़ा भक्त है। उसके भयसे कोई भी मनुष्य कभी वैशाखमासका उल्लंघन नहीं करता। उस पुण्यकर्मके प्रभावसे सभी भगवान् विष्णुके परम धाममें चले जाते हैं। मुनिश्रेष्ठ! उस राजाने इस समय मेरे लोकका मार्ग लुप्त-सा कर रखा है। स्वर्ग और नरक दोनोंको शून्य बना दिया है। अतः ब्रह्माजीके समीप जाकर यह सब समाचार उनसे निवेदन करके तभी मैं स्वस्थ होऊँगा। ऐसा निश्चय करके यमराज ब्रह्माजीके लोकमें गये और वहाँ बैठे हुए उन ब्रह्माजीका दर्शन किया, जिनका आश्रय ध्रुव है, जो इस जगत्के बीज तथा सब लोकोंके पितामह हैं और समस्त लोकपाल, दिक्पाल तथा देवता जिनकी उपासना करते हैं।

ब्रह्माजीने यमराजको देखा और यमराज ब्रह्माजीके आगे पृथ्वीपर गिर पड़े। फिर यमराजने कहा—'कमलासन! काममें लगाया हुआ जो पुरुष स्वामीकी आज्ञाका ठीक-ठीक पालन नहीं करता और उसका धन लेकर भोगता है, वह काठका कीड़ा होता है। जो बुद्धिमान् मनुष्य लोभवश स्वामीके धनका उपभोग करता है, वह तीन सौ कल्पोंतक तिर्यग् योनिरूप नरकमें जाता है। जो कार्यमें नियुक्त हुआ पुरुष कार्य करनेमें समर्थ होकर भी अपने घरमें ही बैठा रहता है, वह बिलाव होता है। देव! मैं आपकी

आज्ञासे धर्मपूर्वक प्रजाका शासन करता आ रहा हूँ। मैं अबतक मुनियों और धर्मशास्त्रोंके कथनानुसार पुण्यात्माको पुण्यके फलसे और पापात्माको पापके फलसे संयुक्त किया करता था, परंतु अब आपकी आज्ञाका पालन करनेमें असमर्थ हो गया हूँ। कीर्तिमान्के राज्यमें सब लोग वैशाख मासोक्त पुण्यकर्मोंका अनुष्ठान करके पितरों और पितामहोंके साथ वैकुण्ठधाममें चले जाते हैं। उनके मरे हुए पितर और मातामह आदि भी विष्णुलोकमें चले जाते हैं। इतना ही नहीं, पत्नीके पिता—श्वशुर आदि भी मेरे लेखको मिटाकर विष्णुलोकमें चले जाते हैं। देव! बड़े-बड़े यज्ञोंद्वारा भी मनुष्य वैसी गति नहीं पाता है, जैसी वैशाखमाससे मिल रही है। सम्पूर्ण तीर्थोंसे, दान आदिसे, तपस्याओंसे, व्रतोंसे अथवा सम्पूर्ण धर्मोंसे युक्त मनुष्य भी उस गतिको नहीं पाता, जो वैशाख-धर्ममें तत्पर हुए मनुष्यको प्राप्त हो रही है। वैशाखमें प्रातःकाल स्नान करके देवपूजन, मास-माहात्म्यकी कथाका श्रवण तथा भगवान् विष्णुको प्रिय लगनेवाले तदनुकूल धर्मोंका पालन करनेवाला मनुष्य एकमात्र विष्णुलोकका स्वामी होता है और जगत्पति भगवान् विष्णुके लोककी तो मेरी समझमें कोई सीमा ही नहीं है; क्योंकि सब ओरसे कोटि-कोटि प्राणियोंका समुदाय वहाँ पहुँच रहा है तो भी वह भरता नहीं है। इस संसारमें पवित्र और अपवित्र सभी लोग राजाकी आज्ञासे वैशाखमासके धर्मका पालन करके विष्णुलोकको जा रहे हैं। लोकनाथ! उसकी प्रेरणासे संस्कारहीन मनुष्य भी वैशाख-स्नानमात्रसे वैकुण्ठधाममें चले जाते हैं। वह केवल भगवान् विष्णुके चरणोंकी शरण लेनेवाला है। जान पड़ता है, वह समस्त संसारको विष्णुलोकमें पहुँचा देगा। जो पुत्र धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके प्रतिकूल चलता हो, वह पृथ्वीपर माताके पेटसे पैदा हुआ रोग है। वह अधम पुरुष अपनी माताका घात करनेवाला कहा जाता है; किंतु राजा कीर्तिमान्की माता और उसकी पत्नीका

पुण्य संसारमें विख्यात है। उसकी माता एकमात्र वीरजननी है और वह राजा निश्चय ही संसारमें बहुत बड़ा वीर है। जिस प्रकार कीर्तिमान् मेरी लिपिको मिटानेमें उद्यत हुआ है, ऐसा उद्योग पुराणोंमें और किसीका नहीं सुना गया है। भगवान् विष्णुकी भक्तिमें तत्पर हुए राजा कीर्तिमान्‌के सिवा दूसरे ऐसे किसीको मैं नहीं जानता, जो डंका बजाकर घोषणा करते हुए लोगोंको ऐसी प्रेरणा देता हो और मेरे लोकके मार्गको विलुप्त करनेकी चेष्टा करता रहा हो।'

❑❑

ब्रह्माजीका यमराजको समझाना और भगवान् विष्णुका उन्हें वैशाखमासमें भाग दिलाना

ब्रह्माजीने कहा—यमराज! तुमने क्या आश्चर्य देखा है? क्यों तुम्हें खेद हो रहा है? भगवान् गोविन्दको एक बार भी प्रणाम कर लिया जाय तो वह सौ अश्वमेध यज्ञोंके अवभृथ-स्नानके समान होता है। यज्ञ करनेवाला तो पुनः इस संसारमें जन्म लेता है, परंतु भगवान्‌को किया हुआ प्रणाम पुनर्जन्मका हेतु नहीं बनता—मुक्तिकी प्राप्ति करा देता है।* जिसकी जिह्वाके अग्रभागपर 'हरि' ये दो अक्षर विद्यमान हैं, उसको कुरुक्षेत्र तीर्थके सेवन अथवा सरस्वती नदीके जलमें स्नान करनेसे क्या लेना है? जो मृत्युकालमें भगवान् विष्णुका स्मरण करता है, वह अभक्ष्य-भक्षण आदिसे प्राप्त हुई पाप-राशिका परित्याग करके भगवान् विष्णुके सायुज्यको पाता है; क्योंकि भगवान् विष्णुको

---

* एकोऽपि गोविन्दकृतः प्रणामः
शताश्वमेधावभृथेन तुल्यः।
यज्ञस्य कर्ता पुनरेति जन्म
हरेः प्रणामो न पुनर्भवाय॥ (स्क० पु०, वै० वै० मा० १३। ३)

अपना स्मरण बहुत ही प्रिय है। यमराज! इसी प्रकार वैशाख नामक मास भी भगवान् विष्णुको प्रिय है। जिसके धर्मको श्रवण करनेमात्रसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है, उसके अनुष्ठानमें तत्पर रहनेवाला मनुष्य यदि मुक्तिको प्राप्त हो तो उसके लिये क्या कहना है? वैशाखमासमें भगवान् पुरुषोत्तमके नाम और यशका गान किया जाता है, जिससे भगवान् बहुत प्रसन्न होते हैं। पुरुषोत्तम श्रीहरि सम्पूर्ण जगत्के स्वामी और हमारे जनक हैं। यह राजा कीर्तिमान् वैशाखमासमें उन्हीं भगवान्के प्रिय धर्मोंका अनुष्ठान करता है, जिससे प्रसन्नचित्त होकर भगवान् विष्णु सदा उसकी सहायतामें स्थित रहते हैं। भगवान् वासुदेवके भक्तोंका कभी अमंगल नहीं होता; उन्हें जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधिका भय भी नहीं प्राप्त होता। कार्यमें नियुक्त किया हुआ पुरुष यदि अपनी पूरी शक्ति लगाकर स्वामीके कार्यसाधनकी चेष्टा करता है तो उतनेसे ही वह कृतार्थ हो जाता है। यदि शक्तिके बाहरका कार्य उपस्थित हो जाय तो स्वामीको उसकी सूचना दे दे। उतना कर देनेसे वह उऋण हो जाता है और सुखका भागी होता है। जिसने उस प्रयोजनको स्वामीसे निवेदित कर दिया है, उसके ऊपर न तो कोई ऋण है और न पातक ही लगता है। अपने कर्तव्यपालनके लिये पूरा यत्न कर लेनेपर प्राणीका कोई अपराध नहीं रहता। यह कार्य तुम्हारे लिये असम्भव है। अतः इसके विषयमें तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये।

ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर यमराजने दीन वाणीमें कहा, 'तात! मैंने आपके चरणोंकी सेवासे सब कुछ पा लिया।' तब ब्रह्माजीने पुनः समझाते हुए कहा—'धर्मराज! राजा कीर्तिमान् विष्णुधर्मके पालनमें तत्पर है। चलो, हम लोग भगवान् विष्णुके समीप चलें और उन्हें सब बात बताकर पीछे उनके कथनानुसार कार्य किया जायगा। वे ही इस जगत्के कर्ता, धर्मके रक्षक और नियामक हैं।'

इस प्रकार यमराजको आश्वासन देकर ब्रह्माजी उनके साथ क्षीरसागरके तटपर गये। वहाँ उन्होंने सच्चिदानन्दस्वरूप गुणातीत परमेश्वर विष्णुका स्तवन किया। ब्रह्माजीकी स्तुतिसे सन्तुष्ट होकर भगवान् विष्णु वहाँ प्रकट हुए। यमराज और ब्रह्माजीने तुरंत ही उनके चरणोंमें मस्तक झुकाया। तब भगवान् महाविष्णुने मेघके समान गम्भीर वाणीमें उन दोनोंसे कहा—'तुम लोग यहाँ क्यों आये हो?' ब्रह्माजीने कहा—'प्रभो! आपके श्रेष्ठ भक्त राजा कीर्तिमान्के शासनकालमें सब मनुष्य वैशाख-धर्मके पालनमें संलग्न हो आपके अविनाशी पदको प्राप्त हो रहे हैं। इससे यमपुरी सूनी हो गयी है।'

उनके ऐसा कहनेपर भगवान् विष्णु हँसते हुए बोले—मैं लक्ष्मीको त्याग दूँगा। अपने प्राण, शरीर, श्रीवत्स, कौस्तुभमणि, वैजयन्ती माला, श्वेतद्वीप, वैकुण्ठधाम, क्षीरसागर, शेषनाग तथा गरुड़जीको भी छोड़ दूँगा, परंतु अपने भक्तका त्याग नहीं कर सकूँगा। जिन्होंने मेरे लिये सब भोगोंका त्याग करके अपना जीवनतक मुझे सौंप दिया है, जो मुझमें मन लगाकर मेरे स्वरूप हो गये हैं, उन महाभाग भक्तोंको मैं कैसे त्याग सकता हूँ?* राजा कीर्तिमान्को इस पृथ्वीपर मैंने दस हजार वर्षोंकी आयु दी है। उसमेंसे आठ हजार वर्ष तो बीत गये। शेष आयु और बीत जानेपर उसे मेरा सायुज्य प्राप्त होगा। उसके बाद पृथ्वीपर बेन नामक दुष्टात्मा राजा होगा, जो सम्पूर्ण वेदोक्त महाधर्मोंका लोप कर देगा। उस समय वैशाखमासके धर्म भी छिन्न-भिन्न हो जायँगे। बेन अपने ही पापसे भस्म हो जायगा। तत्पश्चात् मैं पृथु होकर पुनः सब

---

* लक्ष्मीं वापि परित्यक्ष्ये प्राणान्देहमथापि वा। श्रीवत्सं कौस्तुभं मालां वैजयन्तीमथापि वा॥
श्वेतद्वीपं च वैकुण्ठं क्षीरसागरमेव च। शेषं च गरुडं चैव न भक्तं त्यक्तुमुत्सहे॥
विसृज्य सकलान् भोगान् मदर्थेत्यक्तजीवितान्। मदात्मकान् महाभागान् कथं तांस्त्यक्तुमुत्सहे॥
(स्क० पु०, वै० वै० मा० १३। ३४—३६)

धर्मोंका प्रचार करूँगा। उस समय लोगोंमें वैशाखमासके धर्मको भी प्रसिद्ध करूँगा। सहस्रों मनुष्योंमें कोई एक ऐसा होता है, जो मुझमें अपने मन-प्राण अर्पित करके अपना सर्वस्व मुझे समर्पित कर दे और मेरा भक्त हो जाय। जो ऐसा होता है, वही मेरे धर्मोंका प्रचार करता है। इस वैशाखमासमेंसे भी मैं वैशाख-धर्ममें तत्पर रहनेवाले महात्मा पुरुषों तथा राजाके द्वारा समयानुसार तुम्हारे लिये भाग दिलाऊँगा। लोकमें जो कोई भी वैशाखमासका व्रत करेंगे, वे तुम्हें भाग देनेवाले होंगे। उनके वैशाखमासमें बताये हुए महाधर्मके पालनमें तुम कभी विघ्न न उपस्थित करना।

यमराजको इस प्रकार आश्वासन देकर भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्धान हो गये। ब्रह्माजी भी अपने सेवकोंके साथ सत्यलोकको चले गये। उनके बाद यमराज भी अपनी पुरीको पधारे। वैशाखमासकी पूर्णिमाको पहले धर्मराजके उद्देश्यसे जलसे भरा हुआ घड़ा, दही और अन्न देना चाहिये। उसके बाद पितरों, गुरुओं और भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे शीतल जल, दही, अन्न, पान और दक्षिणा फलके साथ काँसीके पात्रमें रखकर ब्राह्मणको देना चाहिये। भगवान् विष्णुकी दिव्य प्रतिमा वैशाखमासकी माहात्म्यकथा सुनानेवाले दीन ब्राह्मणको देनी चाहिये। उस धर्मवक्ता ब्राह्मणको अपने धनसे भी पूजित करना चाहिये। राजा कीर्तिमान्‌ने सब कुछ उसी प्रकार किया। उन्होंने पृथ्वीपर मनोवांछित भोग भोगकर शेष आयु पूर्ण होनेके पश्चात् पुत्र-पौत्र आदिके साथ श्रीविष्णुधामको प्रस्थान किया।

मिथिलापतिने कहा—महामते! दुरात्मा राजा बेन प्रथम (स्वायम्भुव) मन्वन्तरमें हुआ था और ये राजा इक्ष्वाकुकुलभूषण कीर्तिमान् वैवस्वत मन्वन्तरके व्यक्ति हैं। यह बात पहले मैंने आपके मुखसे सुन रखी है। परंतु इस समय आपने और ही बात

कही है कि यह राजा जब वैकुण्ठवासी हो जायँगे, उसके बाद राजा बेन उत्पन्न होगा। मेरे इस संशयको आप निवृत्त कीजिये।

श्रुतदेवने कहा—राजन्! पुराणोंमें जो विषमता प्रतीत होती है, वह युगभेद और कल्पभेदकी व्यवस्थाके अनुसार है। (किसी कल्पमें ऐसा ही हुआ होगा कि पहले राजा कीर्तिमान् और पीछे बेन हुआ होगा) इसलिये कहीं कथामें समयकी विपरीतता देखकर उसके अप्रामाणिक होनेकी आशंका नहीं करनी चाहिये।

❑❑

भगवत्कथाके श्रवण और कीर्तनका महत्त्व तथा वैशाखमासके धर्मोंके अनुष्ठानसे राजा पुरुयशाका संकटसे उद्धार

श्रुतदेव बोले—मेषराशिमें सूर्यके स्थित रहनेपर जो वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करता है और भगवान् विष्णुकी पूजा करके इस कथाको सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके परम धामको प्राप्त होता है। इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास कहते हैं, जो सब पापोंका नाशक, पवित्रकारक, धर्मानुकूल, वन्दनीय और पुरातन है।

गोदावरीके तटपर शुभ ब्रह्मेश्वर क्षेत्रमें महर्षि दुर्वासाके दो शिष्य रहते थे, जो परमहंस, ब्रह्मनिष्ठ, उपनिषद्विद्यामें परिनिष्ठित और इच्छारहित थे। वे भिक्षामात्र भोजन करते और पुण्यमय जीवन बिताते हुए गुफामें निवास करते थे। उनमेंसे एकका नाम था सत्यनिष्ठ और दूसरेका तपोनिष्ठ। वे इन्हीं नामोंसे तीनों लोकोंमें विख्यात थे। सत्यनिष्ठ सदा भगवान् विष्णुकी कथामें तत्पर रहते थे। जब कोई श्रोता अथवा वक्ता न होता, तब वे अपने नित्यकर्म किया करते थे। यदि कोई श्रोता

उपस्थित होता तो उसे निरन्तर वे भगवत्कथा सुनाते और यदि कोई कथावाचक भगवान् विष्णुकी कल्याणमयी पवित्र कथा कहता तो वे अपने सब कर्मोंको समेटकर श्रवणमें तत्पर हो उस कथाको सुनने लगते थे। वे अत्यन्त दूरके तीर्थों और देवमन्दिरोंको छोड़कर तथा कथाविरोधी कर्मोंका परित्याग करके भगवान्‌की दिव्य कथा सुनते और श्रोताओंको स्वयं भी सुनाते थे। कथा समाप्त होनेपर सत्यनिष्ठ अपना शेष कार्य पूरा करते थे। कथा सुननेवाले पुरुषको जन्म-मृत्युमय संसारबन्धनकी प्राप्ति नहीं होती। उसके अन्तःकरणकी शुद्धि होती है, भगवान् विष्णुमें जो अनुरागकी कमी है, वह दूर हो जाती है और उनके प्रति गाढ़ अनुराग होता है। साथ ही साधुपुरुषोंके प्रति सौहार्द बढ़ता है। रजोगुणरहित गुणातीत परमात्मा शीघ्र ही हृदयमें स्थित हो जाते हैं। श्रवणसे ज्ञान पाकर मनुष्य भगवच्चिन्तनमें समर्थ होता है। श्रवण, ध्यान और मनन—यह वेदोंमें अनेक प्रकारसे बताया गया है। जहाँ भगवान् विष्णुकी कथा न होती हो और जहाँ साधुपुरुष न रहते हों, वह स्थान साक्षात् गंगातट ही क्यों न हो, निःसन्देह त्याग देने योग्य है। जिस देशमें तुलसी नहीं हैं अथवा भगवान् विष्णुका मन्दिर नहीं है, ऐसा स्थान निवास करने योग्य नहीं है। यह निश्चय करके मुनिवर सत्यनिष्ठ सदा भगवान् विष्णुकी कथा और चिन्तनमें संलग्न रहते थे।

दुर्वासाका दूसरा शिष्य तपोनिष्ठ दुराग्रहपूर्वक कर्ममें तत्पर रहता था। वह भगवान्‌की कथा छोड़कर अपना कर्म पूरा करनेके लिये इधर-उधर हट जाता था। कथाकी अवहेलनासे उसे बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। अन्ततोगत्वा कथापरायण सत्यनिष्ठने ही उसका संकटसे उद्धार किया।

जहाँ लोगोंके पापका नाश करनेवाली भगवान् विष्णुकी पवित्र कथा होती है, वहाँ सब तीर्थ और अनेक प्रकारके क्षेत्र स्थित

रहते हैं। जहाँ विष्णु-कथारूपी पुण्यमयी नदी बहती रहती है, उस देशमें निवास करनेवालोंकी मुक्ति उनके हाथमें ही है।

पूर्वकालमें पांचाल देशमें पुरुयशा नामक एक राजा थे, जो पुण्यशील एवं बुद्धिमान् राजा भूरियशाके पुत्र थे। पिताके मरनेपर पुरुयशा राज्यसिंहासनपर बैठे। वे धर्मकी अभिलाषा रखनेवाले, शूरता, उदारता आदि गुणोंसे सम्पन्न और धनुर्वेदमें प्रवीण थे। उन महामति नरेशने अपने धर्मके अनुसार पृथ्वीका पालन किया। कुछ कालके पश्चात् राजाका धन नष्ट हो गया। हाथी और घोड़े बड़े-बड़े रोगोंसे पीड़ित होकर मर गये। उनके राज्यमें ऐसा भारी अकाल पड़ा, जो मनुष्योंका अत्यन्त विनाश करनेवाला था। पांचालनरेश राजा पुरुयशाको निर्बल जानकर उनके शत्रुओंने आक्रमण किया और युद्धमें उनको जीत लिया। तदनन्तर पराजित हुए राजाने अपनी पत्नी शिखिणीके साथ पर्वतकी कन्दरामें प्रवेश किया। साथमें दासी आदि सेवकगण भी थे। इस प्रकार छिपे रहकर राजा मन-ही-मन विचार करने लगे कि मेरी यह क्या अवस्था हो गयी। मैं जन्म और कर्मसे शुद्ध हूँ, माता और पिताके हितमें तत्पर रहा हूँ, गुरुभक्त, उदार, ब्राह्मणोंका सेवक, धर्मपरायण, सब प्राणियोंके प्रति दयालु, देवपूजक और जितेन्द्रिय भी हूँ; फिर किस कर्मसे मुझे यह विशेष दुःख देनेवाली दरिद्रता प्राप्त हुई है? किस कर्मसे मेरी पराजय हुई और किस कर्मके फलस्वरूप मुझे यह वनवास मिला है?

इस प्रकार चिन्तासे व्याकुल होकर राजाने खिन्न चित्तसे अपने सर्वज्ञ गुरु मुनिश्रेष्ठ याज और उपयाजका स्मरण किया। राजाके आवाहन करनेपर दोनों बुद्धिमान् मुनीश्वर वहाँ आये। उन्हें देखकर पांचालप्रिय नरेश सहसा उठकर खड़े हो गये और बड़ी भक्तिके साथ गुरुके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रणाम किया। फिर वनमें पैदा होनेवाली शुभ सामग्रियोंके द्वारा उन्होंने उन दोनोंका पूजन

किया और विनीतभावसे पूछा—'विप्रवरो! मैं गुरुचरणोंमें भक्ति रखनेवाला हूँ। मुझे किस कर्मसे यह दरिद्रता, कोषहानि और शत्रुओंसे पराजय प्राप्त हुई है? किस कारणसे मेरा वनवास हुआ और मुझे अकेले रहना पड़ा? मेरे न कोई पुत्र है, न भाई है और न हितकारी मित्र ही हैं। मेरे द्वारा सुरक्षित राज्यमें यह बड़ा भारी अकाल कैसे पड़ गया? ये सब बातें विस्तारपूर्वक मुझे बताइये।'

राजाके इस प्रकार पूछनेपर वे दोनों मुनिश्रेष्ठ कुछ देर ध्यानमग्न हो इस प्रकार बोले—राजन्! तुम पहलेके दस जन्मोंतक महापापी व्याध रहे हो। तुम सब लोगोंके प्रति क्रूर और हिंसापरायण थे। तुमने कभी लेशमात्र भी धर्मका अनुष्ठान नहीं किया। इन्द्रियसंयम तथा मनोनिग्रहका तुममें सर्वथा अभाव था। तुम्हारी जिह्वा किसी प्रकार भगवान् विष्णुके नाम नहीं लेती थी। तुम्हारा चित्त गोविन्दके चारु चरणारविन्दोंका चिन्तन नहीं करता था और तुमने कभी मस्तक नवाकर परमात्माको प्रणाम नहीं किया। इस प्रकार दुरात्मा व्याधका जीवन व्यतीत करते हुए तुम्हारे नौ जन्म पूरे हो गये। दसवाँ जन्म प्राप्त होनेपर तुम सह्य पर्वतपर पुनः व्याध हुए। वहाँ सब लोगोंके प्रति क्रूरता करना ही तुम्हारा स्वभाव था। तुम मनुष्योंके लिये यमके समान थे। दयाहीन, शस्त्रजीवी और हिंसापरायण थे। अपनी स्त्रीके साथ रहते हुए राह चलनेवाले पथिकोंको तुम बड़ा कष्ट दिया करते थे। बड़े भारी शठ थे। इस प्रकार अपने हितको न जानते हुए तुमने बहुत वर्ष व्यतीत किये। जिनके छोटे-छोटे बच्चे हैं, ऐसे मृगों और पक्षियोंके वध करनेके कारण तुम दयाहीन दुर्बुद्धिको इस जन्ममें कोई पुत्र नहीं प्राप्त हुआ। तुमने सबके साथ विश्वासघात किया, इसलिये तुम्हारे कोई सहोदर भाई नहीं हुआ। मार्गमें सबको पीड़ा देते रहे, इसलिये इस जन्ममें तुम मित्ररहित हो। साधुपुरुषोंके तिरस्कारसे शत्रुओंद्वारा तुम्हारी पराजय हुई है। कभी दान न देनेके दोषसे तुम्हारे घरमें दरिद्रता

प्राप्त हुई है। तुमने दूसरोंको सदा उद्वेगमें डाला, इसलिये तुम्हें दु:सह वनवास मिला। सबके अप्रिय होनेके कारण तुम्हें असह्य दु:ख मिला है। तुम्हारे क्रूर कर्मोंके फलसे ही इस जन्ममें मिला हुआ राज्य भी छिन गया है। वैशाखमासकी गरमीमें तुमने स्वार्थवश एक दिन एक ऋषिको दूरसे तालाब बता दिया था और हवाके लिये पलाशका एक सूखा पत्ता दे दिया था। बस, जीवनमें इस एक ही पुण्यके कारण तुम्हारा यह जन्म परम पवित्र राजवंशमें हुआ है। अब यदि तुम सुख, राज्य, धन-धान्यादि सम्पत्ति, स्वर्ग और मोक्ष चाहते हो अथवा सायुज्य एवं श्रीहरिके पदकी अभिलाषा रखते हो तो वैशाखमासके धर्मोंका पालन करो। इससे सब प्रकारके सुख पाओगे। इस समय वैशाखमास चल रहा है। आज अक्षय तृतीया है। आज तुम विधिपूर्वक स्नान और भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा करो। यदि अपने समान ही गुणवान् पुत्रोंकी अभिलाषा करते हो तो सब प्राणियोंके हितके लिये प्याऊ लगाओ। इस पवित्र वैशाखमासमें भगवान् मधुसूदनकी प्रसन्नताके लिये यदि तुम निष्कामभावसे धर्मोंका अनुष्ठान करोगे, तो अन्त:करण शुद्ध होनेपर तुम्हें भगवान् विष्णुका प्रत्यक्ष दर्शन होगा।

यों कहकर राजाकी अनुमति ले उनके दोनों ब्राह्मण पुरोहित याज और उपयाज जैसे आये थे, वैसे ही चले गये। उनसे उपदेश पाकर महाराज पुरुयशाने वैशाखमासके सम्पूर्ण धर्मोंका श्रद्धापूर्वक पालन किया और भगवान् मधुसूदनकी आराधना की। इससे उनका प्रभाव बढ़ गया तथा बन्धु-बान्धव उनसे आकर मिल गये। तत्पश्चात् वे मरनेसे बची हुई सेनाको साथ ले बन्धुओंसहित पांचाल नगरीके समीप आये। उस समय पांचाल राजाके साथ राजाओंका पुन: संग्राम हुआ। महारथी पुरुयशाने अकेले ही समस्त महाबाहु राजाओंपर विजय पायी। विरोधी राजाओंने भागकर विभिन्न देशोंके मार्गोंका आश्रय

लिया। विजयी पांचालराजने भागे हुए राजाओंके कोष, दस करोड़ घोड़े, तीन करोड़ हाथी, एक अरब रथ, दस हजार ऊँट और तीन लाख खच्चरोंको अपने अधिकारमें करके अपनी पुरीमें पहुँचा दिया। वैशाख-धर्मके माहात्म्यसे सब राजा भग्नमनोरथ हो पुरुयशाको कर देनेवाले हो गये और पांचालदेशमें अनुपम सुकाल आ गया। भगवान् विष्णुकी प्रसन्नतासे इस वसुधापर उनका एकछत्र राज्य हुआ और गुरुता, उदारता आदि गुणोंसे युक्त उनके पाँच पुत्र हुए, जो धृष्टकीर्ति, धृष्टकेतु, धृष्टद्युम्न, विजय और चित्रकेतुके नामसे प्रसिद्ध थे। धर्मपूर्वक प्रतिपालित होकर समस्त प्रजा राजाके प्रति अनुरक्त हो गयी। इससे उसी क्षण उन्हें वैशाखमासके प्रभावका निश्चय हो गया। तबसे पांचालराज भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये वैशाखमासके धर्मोंका निष्कामभावसे बराबर पालन करने लगे। उनके इस धर्मसे सन्तुष्ट होकर भगवान् विष्णुने अक्षय तृतीयाके दिन उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया।

❑❑

राजा पुरुयशाको भगवान्‌का दर्शन, उनके द्वारा भगवत्स्तुति और भगवान्‌के वरदानसे राजाकी सायुज्य मुक्ति

श्रुतदेव कहते हैं—परमात्मा भगवान् नारायण चार भुजाओंसे सुशोभित थे। उन्होंने हाथोंमें शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण कर रखे थे। वे पीताम्बर धारण करके वनमालासे विभूषित थे। भगवती लक्ष्मी तथा एक पार्षदके साथ गरुड़की पीठपर विराजित थे। उनका दु:सह तेज देखकर राजाके नेत्र सहसा मुँद गये। उनके सब अंगोंमें रोमांच हो आया और नेत्रोंसे अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। भगवद्दर्शनके आनन्दमें उनका हृदय सर्वथा डूब गया। उन्होंने तत्काल आगे बढ़कर भगवान्‌को साष्टांग प्रणाम किया; फिर प्रेमविह्वल

नेत्रोंसे विश्वात्मदेव जगदीश्वर श्रीहरिको बहुत देरतक निहारकर उनके चरण धोये और उस जलको अपने मस्तकपर धारण किया। उन्हीं चरणोंकी धोवनरूपा श्रीगंगाजी ब्रह्माजीसहित तीनों लोकोंको पवित्र करती हैं। तत्पश्चात् राजाने महान् वैभवसे, बहुमूल्य वस्त्र-आभूषण और चन्दनसे, हार, धूप, दीप तथा अमृतके समान नैवेद्यके निवेदन आदिसे एवं अपने तन, मन, धन और आत्माका समर्पण करके अद्वितीय पुराणपुरुष भगवान् विष्णुका पूजन किया। पूजाके बाद इस प्रकार स्तुति की— 'जो निर्गुण, निरंजन एवं प्रजापतियोंके भी अधीश्वर हैं, ब्रह्मा आदि सम्पूर्ण देवता जिनकी वन्दना करते रहते हैं, उन परम पुरुष भगवान् श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ। शरणागतोंकी पापराशिका नाश करनेवाले आपके चरणारविन्दोंको परिपक्व योगवाले योगियोंने जो अपने हृदयमें धारण किया है, यह उनके लिये बड़े सौभाग्यकी बात है। बढ़ी हुई भक्तिके द्वारा अपने अन्तःकरण तथा जीवभावको भी आपके चरणोंमें ही चढ़ाकर वे योगीजन उन चरणोंके चिन्तनमात्रसे आपके धामको प्राप्त हुए हैं। विचित्र कर्म करनेवाले! आप स्वतन्त्र परमेश्वरको नमस्कार है। साधु पुरुषोंपर अनुग्रह करनेवाले! आप परमात्माको प्रणाम है। प्रभो! आपकी मायासे मोहित होकर मैं स्त्री और धनरूपी विषयोंमें ही भटकता रहा हूँ, अनर्थमें ही मेरी अर्थदृष्टि हो गयी थी। प्रभो! विश्वमूर्ते! जब जीवपर आप अनन्तशक्ति परमेश्वरकी कृपा होती है, तभी उसे महापुरुषोंका संग प्राप्त होता है, जिससे यह संसारसमुद्र गोपदके समान हो जाता है। ईश्वर! जब सत्संग मिलता है, तभी आपमें मन तथा बुद्धिका अनुराग होता है*। मेरा समस्त राज्य जो मुझसे छिन

---

* तदैव जीवस्य भवेत्कृपा विभो दुरन्तशक्तेस्तव विश्वमूर्ते।
समागमः स्यान्महतां हि पुंसां भवाम्बुधिर्येन हि गोष्पदायते॥
सत्सङ्गमो देव यदैव भूयात्तर्हीश देवे त्वयि जायते मतिः।
(स्क० पु०, वै० वै० मा० १६। १८-१९)

गया था, वह भी आपका मुझपर महान् अनुग्रह ही हुआ था, ऐसा मैं मानता हूँ। मैं न तो राज्य चाहता हूँ, न पुत्र आदिकी इच्छा रखता हूँ और न कोषकी ही अभिलाषा करता हूँ। अपितु मुनियोंके द्वारा ध्यान करने योग्य जो आपके आराधनीय चरणारविन्द हैं, उन्हींका नित्य सेवन करना चाहता हूँ। देवेश्वर! जगन्निवास! मुझपर प्रसन्न होइये, जिससे आपके चरणकमलोंकी स्मृति बराबर बनी रहे। तथा स्त्री, पुत्र, खजाना एवं आत्मीय कहे जानेवाले सब पदार्थोंमें जो मेरी आसक्ति है, वह सदाके लिये दूर हो जाय। भगवन्! मेरा मन सदा आपके चरणारविन्दोंके चिन्तनमें लगा रहे, मेरी वाणी आपकी दिव्य कथाके निरन्तर वर्णनमें तत्पर हो, मेरे ये दोनों नेत्र आपके श्रीविग्रहके दर्शनमें, कान कथाश्रवणमें तथा रसना आपके भोग लगाये हुए प्रसादके आस्वादनमें प्रवृत्त हो। प्रभो! मेरी नासिका आपके चरणकमलोंकी तथा आपके भक्तजनोंके गन्ध-विलेपन आदिकी सुगन्ध लेनेमें, दोनों हाथ आपके मन्दिरमें झाड़ू देने आदिकी सेवामें, दोनों पैर आपके तीर्थ और कथास्थानकी यात्रा करनेमें तथा मस्तक निरन्तर आपको प्रणाम करनेमें संलग्न रहें। मेरी कामना आपकी उत्तम कथामें और बुद्धि अहर्निश आपका चिन्तन करनेमें तत्पर हो। मेरे घरपर पधारे हुए मुनियोंद्वारा आपकी उत्तम कथाका वर्णन तथा आपकी महिमाका गान होता रहे और इसीमें मेरे दिन बीतें। विष्णो! एक क्षण तथा आधे पलके लिये भी ऐसा प्रसंग न उपस्थित हो, जो आपकी चर्चासे रहित हो। हरे! मैं परमेष्ठी ब्रह्माका पद, भूतलका चक्रवर्ती राज्य और मोक्ष भी नहीं चाहता, केवल आपके चरणोंकी निरन्तर सेवा चाहता हूँ, जिसके लिये लक्ष्मीजी तथा ब्रह्मा, शंकर आदि देवता भी सदा प्रार्थना किया करते हैं।*

राजाके इस प्रकार स्तुति करनेपर कमलनयन भगवान् विष्णुने

---

* भूयान्मनः कृष्णपदारविन्दयो-
र्वचांसि ते दिव्यकथानुवर्णने।

प्रसन्न हो मेघके समान गम्भीर वाणीमें इस प्रकार कहा—'राजन्! मैं जानता हूँ—तुम मेरे श्रेष्ठ भक्त हो, कामनारहित और निष्पाप हो। नरेश्वर! मुझमें तुम्हारी दृढ़ भक्ति हो और अन्तमें तुम मेरा सायुज्य प्राप्त करो। तुम्हारे द्वारा किये हुए इस स्तोत्रसे इस पृथ्वीपर जो लोग स्तुति करेंगे, उनके ऊपर सन्तुष्ट हो मैं उन्हें भोग और मोक्ष प्रदान करूँगा। यह अक्षय तृतीया इस पृथ्वीपर प्रसिद्ध होगी, जिसमें भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाला मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुआ। जो मनुष्य इस तिथिको किसी भी बहानेसे अथवा स्वभावसे ही स्नान, दान आदि क्रियाएँ करते हैं, वे मेरे अविनाशी पदको प्राप्त होते हैं। जो मनुष्य पितरोंके उद्देश्यसे अक्षय तृतीयाको श्राद्ध करते हैं, उनका किया हुआ वह श्राद्ध अक्षय होता है। इस तिथिमें थोड़ा-सा भी जो पुण्य किया जाता है, उसका फल अक्षय होता है। नृपश्रेष्ठ! जो कुटुम्बी ब्राह्मणको

नेत्रे ममेमे तव विग्रहेक्षणे
श्रोत्रे कथायां रसना त्वदर्पिते॥
घ्राणं च त्वत्पादसरोजसौरभे
त्वद्भक्तगन्धादिविलेपनेऽसकृत् ।
स्यातां च हस्तौ तव मन्दिरे विभो
सम्मार्जनादौ मम नित्यदैव॥
पादौ विभोः क्षेत्रकथानुसर्पणे
मूर्धा च मे स्यात्तव वन्दनेऽनिशम्॥
कामश्च मे स्यात्तव सत्कथायां
बुद्धिश्च मे स्यात्तव चिन्तनेऽनिशम्॥
दिनानि मे स्युस्तव सत्कथोदयै-
रुद्गीयमानैर्मुनिभिर्गृहागतैः ।
हीनः प्रसङ्गस्तव मे न भूयात्
क्षणं निमेषार्धमथापि विष्णो॥
न पारमेष्ठ्यं न च सार्वभौमं न चापवर्गं स्पृहयामि विष्णो।
त्वत्पादसेवां च सदैव कामये प्रार्थ्यां श्रिया ब्रह्मभवादिभिः सुरैः॥
(स्क० पु०, वै० वै० मा० १६। २४—२८)

गाय दान करता है, उसके हाथमें सब सम्पत्तियोंकी वर्षा करनेवाली भुक्ति और मुक्ति भी आ जाती है। जो वैशाखमासमें मेरा प्रिय करनेवाले धर्मोंका अनुष्ठान करता है, उसके जन्म, मृत्यु, जरा, भय और पापको मैं हर लेता हूँ। अनघ! यह वैशाखमास मेरे चरण-चिन्तनकी ही भाँति ऐसे सहस्रों पापोंको हर लेता है, जिनके लिये शास्त्रोंमें कोई प्रायश्चित्त नहीं मिलता है।'

राजाको यह वरदान देकर देवाधिदेव भगवान् जनार्दन सबके देखते-देखते वहीं अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर राजा पुरुयशा सदा भगवान्‌में ही मन लगाये हुए उन्हींकी सेवामें तत्पर रहकर इस पृथ्वीका पालन करने लगे। देवदुर्लभ समस्त मनोरथोंका उपभोग करके अन्तमें उन्होंने चक्रधारी भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लिया। जो इस उत्तम उपाख्यानको सुनते और सुनाते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके परमपदको प्राप्त होते हैं।

❑❑

शंख-व्याध-संवाद, व्याधके पूर्वजन्मका वृत्तान्त

श्रुतदेवजी कहते हैं—राजन्! पम्पाके तटपर कोई शंख नामसे प्रसिद्ध परम यशस्वी ब्राह्मण थे, जो बृहस्पतिके सिंह राशिमें स्थित होनेपर कल्याणमयी गोदावरी नदीमें स्नान करनेके लिये गये। मार्गमें परम पवित्र भीमरथीको पार करनेके बाद दुर्गम, जलशून्य एवं भयंकर निर्जन वनमें धूपसे विकल हो गये थे। वैशाखका महीना था और दोपहरका समय। वे किसी वृक्षके नीचे जा बैठे। इसी समय कोई दुराचारी व्याध हाथमें धनुष धारण किये वहाँ आया। ब्राह्मणके दर्शनसे उसकी बुद्धि पवित्र हो गयी और वह इस प्रकार बोला—'मुने! मैं अत्यन्त दुर्बुद्धि एवं पापी हूँ। मेरे ऊपर आपने बड़ी कृपा की है; क्योंकि साधु-महात्मा स्वभावसे ही दयालु होते हैं। कहाँ मैं नीच कुलमें उत्पन्न हुआ व्याध और

कहाँ मेरी ऐसी पवित्र बुद्धि—मैं इसे केवल आपका ही उत्तम अनुग्रह मानता हूँ। साधुबाबा! मैं आपका शिष्य हूँ, कृपापात्र हूँ। साधुपुरुषोंका समागम होनेपर मनुष्य फिर कभी दुःखको नहीं प्राप्त होता; अतः आप मुझे अपने पापनाशक वचनोंद्वारा ऐसा उपदेश दीजिये, जिससे संसार-बन्धनसे छूटनेकी इच्छा रखनेवाले मनुष्य अनायास ही भवसागरसे पार हो जाते हैं। साधु-पुरुषोंका चित्त सबके प्रति समान होता है। वे सब प्राणियोंके प्रति दयालु होते हैं। उनकी दृष्टिमें न कोई नीच है, न ऊँच; न अपना है, न पराया। मनुष्य सन्तप्त होकर जब-जब गुरुजनोंसे उपाय पूछता है, तब-तब वे उसे संसार-बन्धनसे छुड़ाने वाले ज्ञानका उपदेश करते हैं। जैसे गंगाजी मनुष्योंके पापका नाश करनेवाली हैं, उसी प्रकार मूढ़ जनोंका उद्धार करना साधुपुरुषोंका स्वभाव ही माना गया है।'

व्याधके ये वचन सुनकर शंखने कहा—'व्याध! यदि तुम कल्याण चाहते हो तो वैशाखमासमें भगवान् विष्णुको प्रसन्न और संसारसमुद्रसे पार करनेवाले जो दिव्य धर्म बताये गये हैं, उनका पालन करो।' मुनिश्रेष्ठ शंख प्याससे बहुत कष्ट पा रहे थे। दोपहरके समय उन्होंने सुन्दर सरोवरमें स्नान किया और युगल वस्त्र धारण करके मध्याह्नकालकी उपासना पूरी की। फिर देव-पूजा करनेके पश्चात् व्याधके लाये हुए श्रमहारी एवं स्वादिष्ट कैथका फल खाया। जब वे खा-पीकर सुखपूर्वक विराजमान हुए, उस समय व्याधने हाथ जोड़कर कहा—'मुने! किस कर्मसे मेरा तमोमय व्याधकुलमें जन्म हुआ और किससे ऐसी सद्बुद्धि तथा महात्माकी संगति प्राप्त हुई? प्रभो! यदि आप ठीक समझें तो मैंने जो कुछ पूछा है, वह तथा अन्य जानने योग्य बातें भी मुझसे कहिये।'

शंख बोले—पूर्वजन्ममें तुम वेदोंके पारंगत विद्वान् ब्राह्मण थे। शाकल्य नगरमें तुम्हारा जन्म हुआ था। तुम्हारा गोत्र श्रीवत्स और नाम स्तम्भ था। उस समय तुम बड़े तेजस्वी समझे जाते थे;

किंतु आगे चलकर किसी वेश्यामें तुम्हारी आसक्ति हो गयी। उसके संग-दोषसे तुमने नित्यकर्मोंको त्याग दिया और शूद्रकी भाँति घर आकर रहने लगे। यद्यपि तुम सदाचारशून्य, दुष्ट तथा धर्म-कर्मोंके त्यागी थे, तो भी उस समय तुम्हारी ब्राह्मणी पत्नी कान्तिमतीने वेश्यासहित तुम्हारी सेवा की। वह सदा तुम्हारा प्रिय करनेमें लगी रहती थी। वह तुम दोनोंके पैर धोती, दोनोंकी आज्ञाका पालन करती और दोनोंसे नीचे आसनपर सोती थी। इस प्रकार वेश्यासहित पतिकी सेवा करती हुई उस दुःखिनी ब्राह्मणीका इस भूतलपर बहुत समय बीत गया। एक दिन उसके पतिने मूलीसहित उड़द खाया और तिलमिश्रित निष्पाव भक्षण किया। उस अपथ्य भोजनसे उसका मुँह-पेट चलने लगा और उसे बड़ा भयंकर भगन्दर रोग हो गया। वह उस रोगसे दिन-रात जलने लगा। जबतक घरमें धन रहा, तबतक वेश्या भी वहाँ टिकी रही। उसका सारा धन लेकर पीछे उसने उसका घर छोड़ दिया। वेश्या तो क्रूर और निर्दयी होती ही है। उसे छोड़कर दूसरेके पास चली गयी!

तब वह ब्राह्मण रोगसे व्याकुलचित्त हो रोता हुआ अपनी स्त्रीसे बोला—'देवि! मैं वेश्याके प्रति आसक्त और अत्यन्त निष्ठुर मनुष्य हूँ, मेरी रक्षा करो। सुन्दरी! तुम परम पवित्र हो, मैंने तुम्हारा कुछ भी उपकार नहीं किया। कल्याणि! जो पापी एवं निन्दित मनुष्य अपनी विनीत पत्नीका आदर नहीं करता, वह पन्द्रह जन्मोंतक नपुंसक होता है। महाभागे! दिन-रात साधुपुरुष उसकी निन्दा करते हैं। तुम साध्वी और पतिव्रता हो, मैं तुम्हारा अनादर करके पापयोनिमें गिरूँगा। तुम्हारा अनादर करनेसे जो तुम्हारे मनमें क्रोध हुआ होगा, उससे मैं दग्ध हो चुका हूँ।'

इस प्रकार अनुतापयुक्त वचन कहते हुए पतिसे वह पतिव्रता हाथ जोड़कर बोली—'प्राणनाथ! आप मेरे प्रति किये हुए व्यवहारको लेकर दुःख न मानें, लज्जाका अनुभव न करें। मेरा आपके ऊपर

तनिक भी क्रोध नहीं है, जिससे आप अपनेको दग्ध हुआ बतलाते हैं। पूर्वजन्ममें किये हुए पाप ही इस जन्ममें दुःखरूप होकर आते हैं। जो उन दुःखोंको धैर्यपूर्वक सहन करती है, वही स्त्री साध्वी मानी जाती है और वही पुरुष श्रेष्ठ समझा जाता है।' वह उत्तम वर्णवाली स्त्री अपने पिता और भाइयोंसे धन माँगकर लायी और उसीसे पतिका पालन करने लगी। उसने अपने स्वामीको साक्षात् क्षीरसागरनिवासी विष्णु ही माना। वह दिन-रात पतिके मल-मूत्र साफ करती और उसके शरीरमें पड़े हुए कष्टदायक कीड़ोंको धीरे-धीरे नखसे खींचकर निकालती थी। ब्राह्मणी न रातमें सोती थी, न दिनमें। अपने स्वामीके दुःखसे सन्तप्त होकर वह दुःखिनी सदा इस प्रकार प्रार्थना किया करती थी—'प्रसिद्ध देवता और पितर मेरे स्वामीकी रक्षा करें, इन्हें रोगहीन एवं निष्पाप कर दें। मैं पतिके आरोग्यके लिये चण्डिकादेवीको भैंसका दही और उत्तम अन्न चढ़ाऊँगी, महात्मा गणेशजीकी प्रसन्नताके लिये मोदक बनवाऊँगी, दस शनिवारोंको उपवास करूँगी तथा मीठा और घी नहीं खाऊँगी। मेरे पति रोगहीन होकर सौ वर्ष जीवें।'

इस प्रकार वह देवी प्रतिदिन देवताओंसे प्रार्थना करती थी। उन्हीं दिनों कोई देवल नामक महात्मा वहाँ आये। वैशाखमासमें धूपसे पीड़ित हो सायंकालके समय उस ब्राह्मणके घरमें उन्होंने पदार्पण किया। ब्राह्मणीने महात्माके चरण धोकर उस जलको मस्तकपर चढ़ाया और धूपसे कष्ट पाये हुए महात्माको पीनेके लिये शर्बत दिया। प्रातःकाल सूर्योदय होनेपर मुनि जैसे आये थे, वैसे चले गये। तदनन्तर थोड़े ही समयमें उस ब्राह्मणको सन्निपात हो गया। ब्राह्मणी सोंठ, मिर्च और पीपल लेकर जब उसके मुँहमें डालने लगी, तब उसने पत्नीकी अँगुली काट ली। उसके दोनों दाँत सहसा सट गये और ब्राह्मणीकी अँगुलीका वह कोमल खण्ड उसके मुँहमें ही रह गया। अँगुली काटकर उस वेश्याका ही चिन्तन करता हुआ वह ब्राह्मण मर गया। तब उसकी पत्नी

कान्तिमतीने कंगन बेचकर बहुत-सा इन्धन खरीदा और चिता बनाकर वह साध्वी पतिके साथ उसमें जा बैठी। उसने पतिके रोगी शरीरका गाढ़ आलिंगन करके उसके साथ अपने-आपको भी चितामें जला दिया। शरीर त्यागकर वह सहसा भगवान् विष्णुके धाममें चली गयी। उसने वैशाखमासमें जो देवल मुनिको शर्बत पिलाया और उनके चरणोदकको शीशपर चढ़ाया था, इससे उसको योगिगम्य परमपदकी प्राप्ति हुई। तुमने अन्तकालमें वेश्याका चिन्तन करते हुए शरीर त्याग किया था, इसलिये इस घोर व्याधके शरीरमें आये हो और हिंसामें आसक्त हो सबको उद्वेगमें डाला करते हो। तुमने वैशाखमासमें मुनिको शर्बत देनेके लिये ब्राह्मणीको अनुमति दी थी, उसी पुण्यसे आज व्याध होनेपर भी तुम्हें सब सुखोंके एकमात्र साधन धर्मविषयक प्रश्न पूछनेके लिये उत्तम बुद्धि प्राप्त हुई है। तुमने जो सब पापोंको हरनेवाले मुनिके चरणोदकको सिरपर धारण किया था, उसीका यह फल है कि वनमें तुम्हें मेरा संग मिला है।

❑❑

भगवान् विष्णुके स्वरूपका विवेचन, प्राणकी श्रेष्ठता, जीवोंके विभिन्न स्वभावों और कर्मोंका कारण तथा भागवतधर्म

व्याधने पूछा—ब्रह्मन्! आपने पहले कहा था कि भगवान् विष्णुकी प्रीतिके लिये कल्याणकारी भागवतधर्मोंका और उनमें भी वैशाखमासमें कर्तव्यरूपसे बताये हुए नियमोंका विशेषरूपसे पालन करना चाहिये। वे भगवान् विष्णु कैसे हैं? उनका क्या लक्षण है? उनकी सत्तामें क्या प्रमाण है तथा वे सर्वव्यापी भगवान् किनके द्वारा जानने योग्य हैं? वैष्णव-धर्म कैसे हैं? और किससे भगवान् श्रीहरि प्रसन्न होते हैं? महामते! मैं आपका किंकर हूँ, मुझे ये सब बातें बताइये।

व्याधके इस प्रकार पूछनेपर शंखने रोग-शोकसे रहित सम्पूर्ण जगत्के स्वामी भगवान् नारायणको प्रणाम करके कहा—व्याध! भगवान् विष्णुका स्वरूप कैसा है, यह सुनो। भगवान् समस्त शक्तियोंके आश्रय, सम्पूर्ण गुणोंकी निधि तथा सबके ईश्वर बताये गये हैं। वे निर्गुण, निष्कल तथा अनन्त हैं। सत्-चित् और आनन्द—यही उनका स्वरूप है। यह जो अखिल चराचर जगत् है, अपने अधीश्वर और आश्रयके साथ नियत रूपसे जिसके वशमें स्थित है, जिससे इसकी उत्पत्ति, पालन, संहार, पुनरावृत्ति तथा नियमन आदि होते हैं, प्रकाश, बन्धन, मोक्ष और जीविका—इन सबकी प्रवृत्ति जहाँसे होती है, वे ही ब्रह्म नामसे प्रसिद्ध भगवान् विष्णु हैं। वे ही विद्वानोंके सम्मान्य सर्वव्यापी परमेश्वर हैं। ज्ञानी पुरुषोंने उन्हींको साक्षात् परब्रह्म कहा है। वेद, शास्त्र, स्मृति, पुराण, इतिहास, पांचरात्र और महाभारत—सब विष्णुस्वरूप हैं—विष्णुके ही प्रतिपादक हैं। इन्हींके द्वारा महाविष्णु जानने योग्य हैं। वेदवेद्य, सनातनदेव भगवान् नारायणको कोई इन्द्रियोंसे (प्रत्यक्ष प्रमाणद्वारा), अनुमानसे और तर्कसे भी नहीं जान सकता है। उन्हींके दिव्य जन्म-कर्म तथा गुणोंको अपनी बुद्धिके अनुसार जानकर उनके अधीन रहनेवाले जीव-समूह सदा मुक्त होते हैं। यह सम्पूर्ण जगत् प्राणसे उत्पन्न हुआ है, प्राणस्वरूप है, प्राणरूपी सूत्रमें पिरोया हुआ है तथा प्राणसे ही चेष्टा करता है। सबका आधारभूत यह सूत्रात्मा प्राण ही विष्णु है—ऐसा विद्वान् पुरुष कहते हैं।

व्याधने पूछा—ब्रह्मन्! जीवोंमें यह सूत्रात्मा प्राण सबसे श्रेष्ठ किस प्रकार है?

शंखने कहा—व्याध! पूर्वकालमें सनातनदेव भगवान् नारायणने ब्रह्मा आदि देवताओंकी सृष्टि करके कहा—'देवताओ! मैं तुम्हारे सम्राट्के पदपर ब्रह्माजीकी स्थापना करता हूँ, यही तुम सबके स्वामी हैं। अब तुम लोगोंमें जो सबसे अधिक शक्तिशाली हो,

उसे तुम स्वयं ही युवराजके पदपर प्रतिष्ठित करो।' भगवान्के इस प्रकार कहनेपर इन्द्र आदि सब देवता आपसमें विवाद करते हुए कहने लगे—'मैं युवराज होऊँगा, मैं होऊँगा।' किसीने सूर्यको श्रेष्ठ बताया और किसीने इन्द्रको। किन्हींकी दृष्टिमें कामदेव ही सबसे श्रेष्ठ थे। कुछ लोग मौन ही खड़े रहे। आपसमें कोई निर्णय होता न देखकर वे भगवान् नारायणके पास पूछनेके लिये गये और प्रणाम करके हाथ जोड़कर बोले—'महाविष्णो! हम सबने अच्छी तरह विचार कर लिया, किंतु हम सबमें श्रेष्ठ कौन है, यह हम अभीतक किसी प्रकार निश्चय न कर सके। अब आप ही निर्णय कीजिये।' तब भगवान् विष्णुने हँसते हुए कहा—'इस विराट् ब्रह्माण्डरूपी शरीरसे जिसके निकल जानेपर यह गिर जायगा और जिसके प्रवेश करनेपर पुनः उठकर खड़ा हो जायगा, वही देवता सबसे श्रेष्ठ है।'

भगवान्के ऐसा कहनेपर सब देवताओंने कहा—'अच्छा ऐसा ही हो।' तब सबसे पहले देवेश्वर जयन्त विराट् शरीरके पैरसे बाहर निकला। उसके निकलनेसे उस शरीरको लोग पंगु कहने लगे; परंतु शरीर गिर न सका। यद्यपि वह चल नहीं पाता था तो भी सुनता, पीता, बोलता, सूँघता और देखता हुआ पूर्ववत् स्थिर रहा। तत्पश्चात् गुह्यदेशसे दक्ष प्रजापति निकलकर अलग हो गये। तब लोगोंने उसे नपुंसक कहा; किंतु उस समय भी वह शरीर गिर न सका। उसके बाद विराट् शरीरके हाथसे सब देवताओंके राजा इन्द्र बाहर निकले। उस समय भी शरीरपात नहीं हुआ। विराट् पुरुषको सब लोग हस्तहीन (लूला) कहने लगे। इसी प्रकार नेत्रोंसे सूर्य निकले। तब लोगोंने उसे अंधा और काना कहा। उस समय भी शरीरका पतन नहीं हुआ। तदनन्तर नासिकासे अश्विनीकुमार निकले, किंतु शरीर नहीं गिर सका। केवल इतना ही कहा जाने लगा कि यह सूँघ नहीं सकता। कानसे अधिष्ठातृ

देवियाँ दिशाएँ निकलीं। उस समय लोग उसे बधिर कहने लगे; परंतु उसकी मृत्यु नहीं हुई। तत्पश्चात् जिह्वासे वरुणदेव निकले। तब लोगोंने यही कहा कि यह पुरुष रसका अनुभव नहीं कर सकता; किंतु देहपात नहीं हुआ। तदनन्तर वाक्-इन्द्रियसे उसके स्वामी अग्निदेव निकले। उस समय उसे गूँगा कहा गया; किंतु शरीर नहीं गिरा। फिर अन्तःकरणसे बोधस्वरूप रुद्र देवता अलग हो गये। उस दशामें लोगोंने उसे जड कहा; किंतु शरीरपात नहीं हुआ। सबके अन्तमें उस शरीरसे प्राण निकला; तब लोगोंने उसे मरा हुआ बतलाया। इससे देवताओंके मनमें बड़ा विस्मय हुआ। वे बोले—'हम लोगोंमेंसे जो भी इस शरीरमें प्रवेश करके इसे पूर्ववत् उठा देगा—जीवित कर देगा, वही युवराज होगा।' ऐसी प्रतिज्ञा करके सब क्रमशः उस शरीरमें प्रवेश करने लगे। जयन्तने पैरोंमें प्रवेश किया; किंतु वह शरीर नहीं उठा। प्रजापति दक्षने गुह्य इन्द्रियोंमें प्रवेश किया; फिर भी शरीर नहीं उठा। इन्द्रने हाथमें, सूर्यने नेत्रोंमें, दिशाओंने कानमें, वरुणदेवने जिह्वामें, अश्विनीकुमारने नासिकामें, अग्निने वाक्-इन्द्रियमें तथा रुद्रने अन्तःकरणमें प्रवेश किया; किंतु वह शरीर नहीं उठा, नहीं उठा। सबके अन्तमें प्राणने प्रवेश किया, तब वह शरीर उठकर खड़ा हो गया। तब देवताओंने प्राणको ही सब देवताओंमें श्रेष्ठ निश्चित किया। बल, ज्ञान, धैर्य, वैराग्य और जीवनशक्तिमें प्राणको ही सर्वाधिक मानकर देवताओंने उसीको युवराज पदपर अभिषिक्त किया। इस उत्कृष्ट स्थितिके कारण प्राणको उक्थ कहा गया है। अतः समस्त चराचर जगत् प्राणात्मक है। जगदीश्वर प्राण अपने पूर्ण एवं बलशाली अंशोंद्वारा सर्वत्र परिपूर्ण है। प्राणहीन जगत्का अस्तित्व नहीं है। प्राणहीन कोई भी वस्तु वृद्धिको नहीं प्राप्त होती। इस जगत्में किसी भी प्राणहीन वस्तुकी स्थिति नहीं है; इस कारण प्राण सब जीवोंमें श्रेष्ठ, सबका अन्तरात्मा और सर्वाधिक

बलशाली सिद्ध हुआ। इसलिये प्राणोपासक प्राणको ही सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। प्राण सर्वदेवात्मक है, सब देवता प्राणमय हैं। वह भगवान् वासुदेवका अनुगामी तथा सदा उन्हींमें स्थित है। मनीषी पुरुष प्राणको महाविष्णुका बल बतलाते हैं। महाविष्णुके माहात्म्य और लक्षणको इस प्रकार जानकर मनुष्य पूर्वबन्धनका अनुसरण करनेवाले अज्ञानमय लिंगको उसी प्रकार त्याग देता है, जैसे सर्प पुरानी केंचुलको। लिंगदेहका त्याग करके वह परम पुरुष अनामय भगवान् नारायणको प्राप्त होता है।

शंख मुनिकी कही हुई यह बात सुनकर व्याधने पुनः पूछा—ब्रह्मन्! यह प्राण जब इतना महान् प्रभावशाली और इस सम्पूर्ण जगत्का गुरु एवं ईश्वर है, तब लोकमें इसकी महिमा क्यों नहीं प्रसिद्ध हुई?

शंखने कहा—पहलेकी बात है। प्राण अश्वमेध यज्ञोंद्वारा अनामय भगवान् नारायणका यजन करनेके लिये गंगाके तटपर प्रसन्नतापूर्वक गया। अनेक मुनिगणोंके साथ उसने फलोंके द्वारा पृथ्वीका शोधन किया। उस समय वहाँ समाधिमें स्थित हुए महात्मा कण्व बाँबीकी मिट्टीमें छिपे हुए बैठे थे। हल जोतनेपर बाँबी गिर जानेसे वे बाहर निकल आये और क्रोधपूर्वक देखकर सामने खड़े हुए महाप्रभु प्राणको शाप देते हुए बोले—'देवेश्वर! आजसे लेकर आपकी महिमा तीनों लोकोंमें—विशेषतः भूलोकमें प्रसिद्ध न होगी। हाँ, आपके अवतार तीनों लोकोंमें विख्यात होंगे।'

व्याध! तभीसे संसारमें महाप्रभु प्राणकी महिमा प्रसिद्ध नहीं हुई। भूलोकमें तो उसकी ख्याति विशेष रूपसे नहीं।

व्याधने पूछा—महामते! भगवान् विष्णुके रचे हुए करोड़ों एवं सहस्रों सनातन जीव नाना मार्गपर चलने और भिन्न-भिन्न कर्म करनेवाले क्यों दिखायी देते हैं? इन सबका एक-सा स्वभाव क्यों नहीं है? यह सब विस्तारपूर्वक बतलाइये।

शंखने कहा—रजोगुण, तमोगुण और सत्त्वगुणके भेदसे तीन प्रकारके जीवसमुदाय होते हैं। उनमें राजस स्वभाववाले जीव राजस कर्म, तमोगुणी जीव तामस कर्म तथा सात्त्विक स्वभाववाले जीव सात्त्विक कर्म करते हैं। कभी-कभी संसारमें इनके गुणोंमें विषमता भी होती है, उसीसे वे ऊँच और नीच कर्म करते हुए तदनुसार फलके भागी होते हैं। कभी सुख, कभी दुःख और कभी दोनोंको ही ये मनुष्य गुणोंकी विषमतासे प्राप्त करते हैं। प्रकृतिमें स्थित होनेपर जीव इन तीनों गुणोंसे बँधते हैं। गुण और कर्मोंके अनुसार उनके कर्मोंका भिन्न-भिन्न फल होता है। ये जीव फिर गुणोंके अनुसार ही प्रकृतिको प्राप्त होते हैं। प्रकृतिमें स्थित हुए प्राकृतिक प्राणी गुण और कर्मसे व्याप्त होकर प्राकृतिक गतिको प्राप्त होते हैं। तमोगुणी जीव तामसी वृत्तिसे ही जीवननिर्वाह करते और सदा महान् दुःखमें डूबे रहते हैं। उनमें दया नहीं होती, वे बड़े क्रूर होते हैं और लोकमें सदा द्वेषसे ही उनका जीवन चलता है। राक्षस और पिशाच आदि तमोगुणी जीव हैं, जो तामसी गतिको प्राप्त होते हैं। राजसी लोगोंकी बुद्धि मिश्रित होती है। वे पुण्य तथा पाप दोनों करते हैं; पुण्यसे स्वर्ग पाते और पापसे यातना भोगते हैं। इसी कारण ये मन्दभाग्य पुरुष बार-बार इस संसारमें आते-जाते रहते हैं। जो सात्त्विक स्वभावके मनुष्य हैं, वे धर्मशील, दयालु, श्रद्धालु, दूसरोंके दोष न देखनेवाले तथा सात्त्विक वृत्तिसे जीवननिर्वाह करनेवाले होते हैं। इसीलिये भिन्न-भिन्न कर्म करनेवाले जीवोंके एक-दूसरेसे पृथक् अनेक प्रकारके भाव हैं; उनके गुण और कर्मके अनुसार महाप्रभु विष्णु अपने स्वरूपकी प्राप्ति करानेके लिये उनसे कर्मोंका अनुष्ठान करवाते हैं। भगवान् विष्णु पूर्णकाम हैं, उनमें विषमता और निर्दयता आदि दोष नहीं हैं। वे समभावसे ही सृष्टि, पालन और संहार करते हैं। सब जीव अपने गुणसे ही कर्मफलके भागी होते हैं। जैसे माली

बगीचेमें लगे हुए सब वृक्षोंको समानरूपसे सींचता है और एक ही कूआँके जलसे सभी वृक्ष पलते हैं तथापि वे पृथक्-पृथक् स्वभावको प्राप्त होते हैं। बगीचा लगानेवालेमें किसी प्रकार विषमता और निर्दयताका दोष नहीं होता।

देवाधिदेव भगवान् विष्णुका एक निमेष ब्रह्माजीके एक कल्पके समान माना गया है। ब्रह्मकल्पके अन्तमें देवाधिदेवशिरोमणि भगवान् विष्णुका उन्मेष होता है अर्थात् वे आँख खोलकर देखते हैं। जबतक निमेष रहता है तबतक प्रलय है। निमेषके अन्तमें भगवान् अपने उदरमें स्थित सम्पूर्ण लोकोंकी सृष्टि करनेकी इच्छा करते हैं। सृष्टिकी इच्छा होनेपर भगवान् अपने उदरमें स्थित हुए अनेक प्रकारके जीवसमूहोंको देखते हैं। उनकी कुक्षिमें रहते हुए भी सम्पूर्ण जीव उनके ध्यानमें स्थित होते हैं। अर्थात् कौन जीव कहाँ किस रूपमें है, इसकी स्मृति भगवान्‌को सदा बनी रहती है। भगवान् विष्णु चतुर्व्यूहस्वरूप हैं। वे उन्मेषकालके प्रथम भागमें ही चतुर्व्यूह रूपमें प्रकट हो व्यूहगामी वासुदेवस्वरूपसे महात्माओंमेंसे किसीको सायुज्य-साधक तत्त्वज्ञान, किसीको सारूप्य, किसीको सामीप्य और किसीको सालोक्य प्रदान करते हैं। फिर अनिरुद्ध-मूर्तिके वशमें स्थित हुए सम्पूर्ण लोकोंको वे देखते हैं, देखकर उन्हें प्रद्युम्न-मूर्तिके वशमें देते हैं और सृष्टि करनेका संकल्प करते हैं। भगवान् श्रीहरिने पूर्ण गुणवाले वासुदेव आदि चार व्यूहोंके द्वारा क्रमशः माया, जया, कृति और शान्तिको स्वयं स्वीकार किया है। उनसे संयुक्त चतुर्व्यूहात्मक महाविष्णुने पूर्णकाम होकर भी भिन्न-भिन्न कर्म और वासनावाले लोकोंकी सृष्टि की है। उन्मेषकालका अन्त होनेपर भगवान् विष्णु पुनः योगमायाका आश्रय लेकर व्यूहगामी संकर्षण स्वरूपसे इस चराचर जगत्‌का संहार करते हैं। इस प्रकार महात्मा विष्णुका यह सब चिन्तन करनेयोग्य

कार्य बतलाया गया, जो ब्रह्मा आदि योगसे सम्पन्न पुरुषोंके लिये भी अचिन्त्य एवं दुर्विभाव्य है।

व्याधने पूछा—मुने! भागवतधर्म कौन-कौन-से हैं और किनके द्वारा भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं?

शंखने कहा—जिससे अन्तःकरणकी शुद्धि होती है, जो साधुपुरुषोंका उपकार करनेवाला है तथा जिसकी किसीने भी निन्दा नहीं की है, उसे तुम सात्त्विक धर्म समझो। वेदों और स्मृतियोंमें बताये हुए धर्मका यदि निष्कामभावसे पालन किया जाय तथा वह लोकसे विरुद्ध न हो, तो उसे भी सात्त्विक धर्म जानना चाहिये। वर्ण और आश्रम विभागके अनुसार जो चार-चार प्रकारके धर्म हैं, वे सभी नित्य, नैमित्तिक और काम्य भेदसे तीन प्रकारके माने गये हैं। वे सभी अपने-अपने वर्ण और आश्रमके धर्म जब भगवान् विष्णुको समर्पित कर दिये जाते हैं, तब उन्हें सात्त्विक धर्म जानना चाहिये। वे सात्त्विक धर्म ही मंगलमय भागवतधर्म हैं। अन्यान्य देवताओंकी प्रीतिके लिये सकामभावसे किये जानेवाले धर्म राजस माने गये हैं। यक्ष, राक्षस, पिशाच आदिके उद्देश्यसे किये जानेवाले लोकनिष्ठुर, हिंसात्मक निन्दित कर्मोंको तामस धर्म कहा गया है। जो सत्त्वगुणमें स्थित हो भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाले शुभकारक सात्त्विक धर्मोंका सदा निष्कामभावसे अनुष्ठान करते हैं, वे भागवत (विष्णुभक्त) माने गये हैं। जिनका चित्त सदा भगवान् विष्णुमें लगा रहता है, जिनकी जिह्वापर भगवान्‌का नाम है और जिनके हृदयमें भगवान्‌के चरण विराजमान हैं, वे भागवत कहे गये हैं। जो सदाचारपरायण, सबका उपकार करनेवाले और सदैव ममतासे रहित हैं, वे भागवत माने गये हैं। जिनका शास्त्रमें, गुरुमें और सत्कर्मोंमें विश्वास है तथा जो सदा भगवान् विष्णुके भजनमें लगे रहते हैं, उन्हें भागवत कहा गया है। उन भगवद्भक्त महात्माओंको जो धर्म नित्य मान्य

हैं, जो भगवान् विष्णुको प्रिय हैं तथा वेदों और स्मृतियोंमें जिनका प्रतिपादन किया गया है, वे ही सनातनधर्म माने गये हैं*। जिनका चित्त विषयोंमें आसक्त है, उनका सब देशोंमें घूमना, सब कर्मोंको देखना और सब धर्मोंको सुनना कुछ भी लाभकारक नहीं है। साधु-पुरुषोंका मन साधु-महात्माओंके दर्शनसे पिघल जाता है। निष्काम पुरुषोंद्वारा श्रद्धापूर्वक जिसका सेवन किया जाता है तथा जो भगवान् विष्णुको सदा ही प्रिय है, वह भागवतधर्म माना गया है।

भगवान् विष्णुने क्षीरसागरमें सबके हितकी कामनासे भगवती लक्ष्मीजीको दहीसे निकाले हुए मक्खनकी भाँति सब शास्त्रोंके सारभूत वैशाख-धर्मका उपदेश किया है। जो दम्भरहित होकर वैशाखमासके व्रतका अनुष्ठान करता है, वह सब पापोंसे रहित हो सूर्यमण्डलको भेदकर भगवान् विष्णुके योगिदुर्लभ परम धाममें जाता है।

इस प्रकार द्विजश्रेष्ठ शंखके द्वारा भगवान् विष्णुके प्रिय वैशाखमासके धर्मोंका वर्णन होते समय वह पाँच शाखाओंवाला वटवृक्ष तुरंत ही भूमिपर गिर पड़ा। उसके खोखलेमें एक विकराल अजगर रहता था, वह भी पापयोनिमय शरीरको त्यागकर तत्काल दिव्यस्वरूप हो मस्तक झुकाये शंखके सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

❑❑

वैशाखमासके माहात्म्य-श्रवणसे एक सर्पका उद्धार और वैशाख-धर्मके पालन तथा रामनाम-जपसे व्याधका वाल्मीकि होना

श्रुतदेव कहते हैं—तदनन्तर व्याधसहित शंख मुनिने विस्मित होकर पूछा—'तुम कौन हो? और तुम्हें यह दशा कैसे प्राप्त हुई थी?'

सर्पने कहा—पूर्वजन्ममें मैं प्रयागका एक ब्राह्मण था। मेरे पिताका नाम कुशीद मुनि और मेरा नाम रोचन था। मैं धनाढ्य,

---

* तेषां हि संमता धर्माः शाश्वता विष्णुवल्लभाः।
श्रुतिस्मृत्युदिता ये च ते धर्माः शाश्वता मताः॥ (स्क० पु०, वै० वै० मा० २०।६३)

अनेक पुत्रोंका पिता और सदैव अभिमानसे दूषित था। बैठे-बैठे बहुत बकवाद किया करता था। बैठना, सोना, नींद लेना, मैथुन करना, जुआ खेलना, लोगोंकी बातें करना और सूद लेना, यही मेरे व्यापार थे। मैं लोकनिन्दासे डरकर नाममात्रके शुभ कर्म करता था; सो भी दम्भके साथ। उन कर्मोंमें मेरी श्रद्धा नहीं थी। इस प्रकार मुझ दुष्ट और दुर्बुद्धिके कितने ही वर्ष बीत गये। तदनन्तर इसी वैशाखमासमें जयन्त नामक ब्राह्मण प्रयागक्षेत्रमें निवास करनेवाले पुण्यात्मा द्विजोंको वैशाखमासके धर्म सुनाने लगे। स्त्री, पुरुष, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—सहस्त्रों श्रोता प्रातःकाल स्नान करके अविनाशी भगवान् विष्णुकी पूजाके पश्चात् प्रतिदिन जयन्तकी कही हुई कथा सुनते थे। वे सभी पवित्र एवं मौन होकर उस भगवत्कथामें अनुरक्त रहते थे। एक दिन मैं भी कौतूहलवश देखनेकी इच्छासे श्रोताओंकी उस मण्डलीमें जा बैठा। मेरे मस्तकपर पगड़ी बँधी थी। इसलिये मैंने नमस्कारतक नहीं किया और संसारी वार्तालापमें अनुरक्त हो कथामें विघ्न डालने लगा। कभी मैं कपड़े फैलाता, कभी किसीकी निन्दा करता और कभी जोरसे हँस पड़ता था। जबतक कथा समाप्त हुई, तबतक मैंने इसी प्रकार समय बिताया। तत्पश्चात् दूसरे दिन सन्निपात रोगसे मेरी मृत्यु हो गयी। मैं तपाये हुए शीशेके जलसे भरे हुए हलाहल नरकमें डाल दिया गया और चौदह मन्वन्तरोंतक वहाँ यातना भोगता रहा। उसके बाद चौरासी लाख योनियोंमें क्रमशः जन्म लेता और मरता हुआ मैं इस समय क्रूर तमोगुणी सर्प होकर इस वृक्षके खोखलेमें निवास करता था। मुने! सौभाग्यवश आपके मुखारविन्दसे निकली हुई अमृतमयी कथाको मैंने अपने दोनों नेत्रोंसे सुना, जिससे तत्काल मेरे सारे पाप नष्ट हो गये। मुनिश्रेष्ठ! मैं नहीं जानता कि आप किस जन्मके मेरे बन्धु हैं; क्योंकि मैंने कभी किसीका उपकार नहीं किया है तो भी मुझपर आपकी कृपा हुई।

जिनका चित्त समान है, जो सब प्राणियोंपर दया करनेवाले साधुपुरुष हैं, उनमें परोपकारकी स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। उनकी कभी किसीके प्रति विपरीत बुद्धि नहीं होती। आज आप मुझपर कृपा कीजिये, जिससे मेरी बुद्धि धर्ममें लगे। देवाधिदेव भगवान् विष्णुकी मुझे कभी विस्मृति न हो और साधु चरित्रवाले महापुरुषोंका सदा ही संग प्राप्त हो। जो लोग मदसे अंधे हो रहे हों, उनके लिये एकमात्र दरिद्रता ही उत्तम अंजन है। इस प्रकार नाना भाँतिसे स्तुति करके रोचनने बार-बार शंखको प्रणाम किया और हाथ जोड़कर चुपचाप उनके आगे खड़ा हो गया।

तब शंखने कहा—ब्रह्मन्! तुमने वैशाखमास और भगवान् विष्णुका माहात्म्य सुना है, इससे उसी क्षण तुम्हारा सारा बन्धन नष्ट हो गया। द्विजश्रेष्ठ! परिहास, भय, क्रोध, द्वेष, कामना अथवा स्नेहसे भी एक बार भगवान् विष्णुके पापहारी नामका उच्चारण करके बड़े भारी पापी भी रोग-शोकरहित वैकुण्ठधाममें चले जाते हैं। फिर जो श्रद्धासे युक्त हो क्रोध और इन्द्रियोंको जीतकर सबके प्रति दयाभाव रखते हुए भगवान्‌की कथा सुनते हैं, वे उनके लोकमें जाते हैं, इस विषयमें तो कहना ही क्या है*। कितने ही मनुष्य केवल भक्तिके बलसे एकमात्र भगवान्‌की कथा-वार्तामें तत्पर हो अन्य सब धर्मोंका त्याग कर देनेपर भी भगवान् विष्णुके परमपदको पा लेते हैं। भक्तिसे अथवा द्वेष आदिसे भी जो कोई भगवान्‌की भक्ति करते हैं, वे भी प्राणहारिणी पूतनाकी भाँति परमपदको प्राप्त होते हैं। सदा महात्मा पुरुषोंका संग और उन्हींके विषयमें वार्तालाप करना चाहिये। रचना शिथिल होनेपर भी जिसके प्रत्येक श्लोकमें भगवान्‌के सुयशसूचक नाम हैं, वही

---

* हास्याद्भयात्तथा क्रोधाद्द्वेषात्कामादथापि वा। स्नेहाद्वा सकृदुच्चार्य विष्णोर्नामाघहारि च॥
पापिष्ठा अपि गच्छन्ति विष्णोर्धामनिरामयम्। किमु तच्छ्रद्धया युक्ता जितक्रोधा जितेन्द्रियाः॥
दयावन्तः कथां श्रुत्वा गच्छन्तीति द्विजोत्तम। (स्क० पु०, वै० वै० भा० २१। ३६—

वाणी जनसमुदायकी पापराशिका नाश करनेवाली होती है; क्योंकि साधुपुरुष उसीको सुनते, गाते और कहते हैं। जो भगवान् किसीसे कष्टसाध्य सेवा नहीं चाहते, आसन आदि विशेष उपकरणोंकी इच्छा नहीं रखते तथा सुन्दर रूप और जवानी नहीं चाहते, अपितु एक बार भी स्मरण कर लेनेपर अपना परम प्रकाशमय वैकुण्ठधाम दे डालते हैं, उन दयालु भगवान्‌को छोड़कर मनुष्य किसकी शरणमें जाय। उन्हीं रोग-शोकसे रहित, चित्तद्वारा चिन्तन करनेयोग्य, अव्यक्त, दयानिधान, भक्तवत्सल भगवान् नारायणकी शरणमें जाओ। महामते! वैशाखमासमें कहे हुए इन सब धर्मोंका पालन करो, उससे प्रसन्न होकर भगवान् जगन्नाथ तुम्हारा कल्याण करेंगे।

ऐसा कहकर शंख मुनि व्याधकी ओर देखकर चुप हो रहे। तब उस दिव्य पुरुषने पुनः इस प्रकार कहा—'मुने! मैं धन्य हूँ, आप-जैसे दयालु महात्माने मुझपर अनुग्रह किया है। मेरी कुत्सित योनि दूर हो गयी और अब मैं परमगतिको प्राप्त हो रहा हूँ, यह मेरे लिये सौभाग्यकी बात है।' यों कहकर दिव्य पुरुषने शंख मुनिकी परिक्रमा की तथा उनकी आज्ञा लेकर वह दिव्यलोकको चला गया। तदनन्तर सन्ध्या हो गयी। व्याधने शंखको अपनी सेवासे सन्तुष्ट किया और उन्होंने सायंकालकी सन्ध्योपासना करके शेष रात्रि व्यतीत की। भगवान्‌के लीलावतारोंकी कथा-वार्ताद्वारा रात व्यतीत करके शंख मुनि ब्राह्ममुहूर्तमें उठे और दोनों पैर धोकर मौनभावसे तारक ब्रह्मका ध्यान करने लगे। तत्पश्चात् शौचादि क्रियासे निवृत्त होकर वैशाखमासमें सूर्योदयसे पहले स्नान किया और सन्ध्या-तर्पण आदि सब कर्म समाप्त करके उन्होंने हर्षयुक्त हृदयसे व्याधको बुलाया। बुलाकर उसे 'राम' इस दो अक्षरवाले नामका उपदेश दिया, जो वेदसे भी अधिक शुभकारक है। उपदेश देकर इस प्रकार कहा—'भगवान् विष्णुका एक-एक नाम भी सम्पूर्ण वेदोंसे अधिक महत्त्वशाली माना गया है। ऐसे अनन्त नामोंसे अधिक

है भगवान् विष्णुका सहस्रनाम। उस सहस्रनामके समान राम-नाम माना गया है*। इसलिये व्याध! तुम निरन्तर राम-नामका जप करो और मृत्युपर्यन्त मेरे बताये हुए धर्मोंका पालन करते रहो। इस धर्मके प्रभावसे तुम्हारा वल्मीकिमें दूसरा जन्म होगा और तुम इस पृथ्वीपर वाल्मीकि ऋषिके नामसे प्रसिद्ध होओगे।'

व्याधको ऐसा आदेश देकर मुनिवर शंखने दक्षिण दिशाको प्रस्थान किया। व्याधने भी शंख मुनिकी परिक्रमा करके बार-बार उनके चरणोंमें प्रणाम किया और जबतक वे दिखायी दिये, तबतक उन्हींकी ओर देखता रहा। फिर उसने अति योग्य वैशाखोक्त धर्मोंका पालन किया। जंगली कैथ, कटहल, जामुन और आम आदिके फलोंसे राह चलनेवाले थके-माँदे पथिकोंको वह भोजन कराता था। जूता, चन्दन, छाता, पंखा आदिके द्वारा तथा बालूके बिछावन और छाया आदिकी व्यवस्थासे पथिकोंके परिश्रम और पसीनेका निवारण करता था। प्रातःकाल स्नान करके दिन-रात राम-नामका जप करता था। इस प्रकार धर्मानुष्ठान करके वह दूसरे जन्ममें वल्मीकका पुत्र हुआ। उस समय वह महायशस्वी वाल्मीकिके नामसे विख्यात हुआ। उन्हीं वाल्मीकिजीने अपनी मनोहर प्रबन्ध-रचनाद्वारा संसारमें दिव्य राम-कथाको प्रकाशित किया, जो समस्त कर्म-बन्धनोंका उच्छेद करनेवाली है।

मिथिलापते! देखो, वैशाखका माहात्म्य कैसा ऐश्वर्य प्रदान करनेवाला है, जिससे एक व्याध भी परम दुर्लभ ऋषिभावको प्राप्त हो गया। यह रोमांचकारी उपाख्यान सब पापोंका नाश करनेवाला है। जो इसे सुनता और सुनाता है, वह पुनः माताके स्तनका दूध पीनेवाला नहीं होता।

❑❑

---

* विष्णोरेकैकनामापि सर्ववेदाधिकं मतम्। तेभ्यश्चानन्तनामभ्योऽधिकं नाम्नां सहस्रकम्॥
तादृङ्नामसहस्रेण रामनामसमं मतम्। (स्क० पु०, वै० वै० मा० २१। ५३-५४)

धर्मवर्णकी कथा, कलिकी अवस्थाका वर्णन, धर्मवर्ण और पितरोंका संवाद एवं वैशाखकी अमावास्याकी श्रेष्ठता

मिथिलापतिने पूछा—ब्रह्मन्! इस वैशाखमासमें कौन-कौन-सी तिथियाँ पुण्यदायिनी हैं?

श्रुतदेवजी बोले—सूर्यके मेष राशिपर स्थित होनेपर वैशाखमासमें तीसों तिथियाँ पुण्यदायिनी मानी गयी हैं। एकादशीमें किया हुआ पुण्य कोटिगुना होता है। उसमें स्नान, दान, तपस्या, होम, देवपूजा, पुण्यकर्म एवं कथाका श्रवण किया जाय, तो वह तत्काल मुक्ति देनेवाला है। जो रोग आदिसे ग्रस्त और दरिद्रतासे पीड़ित हो, वह मनुष्य इस पुण्यमयी कथाको सुनकर कृतकृत्य होता है। वैशाखमास मनसे सेवन करने योग्य है; क्योंकि वह समय उत्तम गुणोंसे युक्त है। दरिद्र, धनाढ्य, पंगु, अन्धा, नपुंसक, विधवा, साधारण स्त्री, पुरुष, बालक, युवा, वृद्ध तथा रोगसे पीड़ित मनुष्य ही क्यों न हो, वैशाखमासका धर्म सबके लिये अत्यन्त सुखसाध्य है। परम पुण्यमय वैशाखमासमें जब सूर्य मेष राशिमें स्थित हों, तब पापनाशिनी अमावास्या कोटि गयाके समान फल देनेवाली होती है। राजन्! जब पृथ्वीपर राजर्षि सावर्णिका शासन था, उस समय तीसवें कलियुगके अन्तमें सभी धर्मोंका लोप हो चुका था। उसी समय आनर्त देशमें धर्मवर्ण नामसे विख्यात एक ब्राह्मण थे। मुनिवर धर्मवर्णने उस कलियुगमें ही किसी समय महात्मा मुनियोंके सत्रयागमें सम्मिलित होनेके लिये पुष्कर क्षेत्रकी यात्रा की। वहाँ कुछ व्रतधारी महर्षियोंने कलियुगकी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा था—'सत्ययुगमें भगवान् विष्णुको सन्तुष्ट करनेवाला जो पुण्य एक वर्षमें साध्य है, वही त्रेतामें एक मासमें और द्वापरमें पन्द्रह दिनोंमें साध्य होता है; परंतु कलियुगमें

भगवान् विष्णुका स्मरण कर लेनेसे ही उससे दसगुना पुण्य होता है*। कलिमें बहुत थोड़ा पुण्य भी कोटिगुना होता है। जो एक बार भी भगवान्का नाम लेकर दयादान करता है और दुर्भिक्षमें अन्न देता है, वह निश्चय ही ऊर्ध्वलोकमें गमन करता है।'

यह सुनकर देवर्षि नारद हँसते हुए उन्मत्तके समान नृत्य करने लगे। सभासदोंने पूछा—'नारदजी! यह क्या बात है?' तब बुद्धिमान् नारदजीने हँसते हुए उन सबको उत्तर दिया—'आप लोगोंका कथन सत्य है। इसमें सन्देह नहीं कि कलियुगमें स्वल्प कर्मसे भी महान् पुण्यका साधन किया जाता है तथा क्लेशोंका नाश करनेवाले भगवान् केशव स्मरणमात्रसे ही प्रसन्न हो जाते हैं। तथापि मैं आप लोगोंसे यह कहता हूँ कि कलियुगमें ये दो बातें दुर्घट हैं—शिश्नेन्द्रियका निग्रह और जिह्वाको वशमें रखना। ये दोनों कार्य जो सिद्ध कर ले, वही नारायणस्वरूप है। अतः कलियुगमें आपको यहाँ नहीं ठहरना चाहिये।'

नारदजीकी यह बात सुनकर उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महर्षि सहसा यज्ञको समाप्त करके सुखपूर्वक चले गये। धर्मवर्णने भी वह बात सुनकर भूलोकको त्याग देनेका विचार किया। उन्होंने ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करके दण्ड और कमण्डलु हाथमें लिया और जटा-वल्कलधारी होकर वे कलियुगके अनाचारी पुरुषोंको देखनेके लिये घर छोड़कर चल दिये। उनके मनमें बड़ा विस्मय हो रहा था। उन्होंने देखा, प्रायः मनुष्य पापाचारमें प्रवृत्त हो बड़े भयंकर एवं दुष्ट हो गये हैं। ब्राह्मण पाखण्डी हो चले हैं। शूद्र संन्यास धारण करते हैं। पत्नी अपने पतिसे द्वेष रखती है। शिष्य गुरुसे वैर करता है। सेवक स्वामीके और पुत्र पिताके घातमें लगा हुआ है। ब्राह्मण शूद्रवत् और गौएँ बकरियोंके समान हो गयी हैं। वेदोंमें

* कृते यद् वत्सरात्साध्यं पुण्यं माधवतोषणम्। त्रेतायां मासतः साध्यं द्वापरे पक्षतो नृप॥
तस्माद्दशगुणं पुण्यं कलौ विष्णुस्मृतेर्भवेत्। (स्क० पु०, वै० वै० मा० २२। २०-२१)

गाथाकी ही प्रधानता रह गयी है। शुभ कर्म साधारण लौकिक कृत्योंके ही समान रह गये हैं, इनके प्रति किसीकी महत्त्व बुद्धि नहीं है। भूत, प्रेत और पिशाच आदिकी उपासना चल पड़ी है। सब लोग मैथुनमें आसक्त हैं और उसके लिये अपने प्राण भी खो बैठते हैं। सब लोग झूठी गवाही देते हैं। मनमें सदा छल और कपट भरा रहता है। कलियुगमें सदा लोगोंके मनमें कुछ और, वाणीमें कुछ और तथा क्रियामें कुछ और ही देखा जाता है। सबकी विद्या किसी-न-किसी स्वार्थको लेकर ही होती है और केवल राजभवनमें उसका आदर होता है। संगीत आदि कलात्मक विद्याएँ भी राजाओंको प्रिय हैं। कलिमें अधम मनुष्य पूजे जाते हैं और श्रेष्ठ पुरुषोंकी अवहेलना होती है। कलिमें वेदोंके विद्वान् ब्राह्मण दरिद्र होते हैं। लोगोंमें प्रायः भगवान्‌की भक्ति नहीं होती। पुण्यक्षेत्रमें पाखण्ड अधिक बढ़ जाता है। शूद्रलोग जटाधारी तपस्वी बनकर धर्मकी व्याख्या करते हैं। सभी मनुष्य अल्पायु, दयाहीन और शठ होते हैं। कलिमें प्रायः सभी धर्मके व्याख्याता बन जाते हैं और दूसरोंसे कुछ लेनेमें ही उत्सव मानते हैं। अपनी पूजा कराना चाहते हैं और व्यर्थ ही दूसरोंकी निन्दा करते हैं। अपने घर आनेपर सभी अपने स्वामीके दोषोंकी चर्चामें तत्पर रहते हैं। कलिमें लोग साधुओंको नहीं जानते। पापियोंको ही बहुत आदर देते हैं। दुराग्रही लोग इतने दुराग्रही होते हैं कि साधुपुरुषोंके एक दोषका भी ढिंढोरा पीटते हैं और पापात्माओंके दोषसमूहोंको भी गुण बतलाते हैं। कलिमें गुणहीन मनुष्य दूसरोंके गुण न देखकर उनके दोष ही ग्रहण करते हैं। जैसे पानीमें रहनेवाली जोंक प्राणियोंके रक्त पीती है, जल नहीं पीती, उसी प्रकार जोंकके धर्मसे संयुक्त हो मनुष्य दूसरेका रक्त चूसते हैं। ओषधियाँ शक्तिहीन होती हैं। ऋतुओंमें उलट-फेर हो जाता है। सब राष्ट्रोंमें अकाल पड़ता है। कन्या योग्य समयमें सन्तानोत्पत्ति नहीं करती। लोग नट और नर्तकोंकी

विद्याओंसे विशेष प्रेम करते हैं। जो वेद-वेदान्तकी विद्याओंमें तत्पर और अधिक गुणवान् हैं, उन्हें अज्ञानी मनुष्य सेवककी दृष्टिसे देखते हैं, वे सब-के-सब भ्रष्ट होते हैं। कलिमें प्रायः लोग श्राद्धकर्मका त्याग करते हैं। वैदिक कर्मोंको छोड़ बैठते हैं। प्रायः जिह्वापर भगवान् विष्णुके नाम कभी नहीं आते। लोग शृंगार रसमें आनन्दका अनुभव करते हैं और उसीके गीत गाते हैं। कलियुगके मनुष्योंमें न कभी भगवान् विष्णुकी सेवा देखी जाती है, न शास्त्रीय चर्चा होती है, न कहीं यज्ञकी दीक्षा है, न विचारका लेश है, न तीर्थयात्रा है और न दान-धर्म ही होते देखे जाते हैं। यह कितने आश्चर्यकी बात है!

उन सबको देखकर धर्मवर्णको बड़ा भय लगा। पापसे कुलकी हानि होती देख, अत्यन्त आश्चर्यसे चकित हो वे दूसरे द्वीपमें चले गये। सब द्वीपों और लोकोंमें विचरते हुए बुद्धिमान् धर्मवर्ण किसी समय कौतूहलवश पितृलोकमें गये। वहाँ उन्होंने कर्मसे कष्ट पाते हुए पितरोंको बड़ी भयंकर दशामें देखा। वे दौड़ते, रोते और गिरते-पड़ते थे। उन्होंने अपने पितरोंको भी नीचे अन्धकूपमें पड़े हुए देखा। उनको देखकर आश्चर्यचकित हो दयालु धर्मवर्णने पूछा—'आप लोग कौन हैं, किस दुस्तर कर्मके प्रभावसे इस अन्धकूपमें पड़े हैं?'

पितरोंने कहा—हम श्रीवत्स गोत्रवाले हैं। पृथ्वीपर हमारी कोई सन्तान नहीं रह गयी है, अतः हम श्राद्ध और पिण्डसे वंचित हैं, इसीलिये यहाँ हमें नरकका कष्ट भोगना पड़ता है। सन्तानहीन दुरात्माओंका अन्धकूपमें पतन होता है। हमारे वंशमें एक ही महायशस्वी पुरुष है, जो धर्मवर्णके नामसे विख्यात है। किंतु वह विरक्त होकर अकेला घूमता-फिरता है। उसने गृहस्थ-धर्मको नहीं स्वीकार किया है। वह एक ही तन्तु हमारे कुलमें अवशिष्ट है। उसकी भी आयु क्षीण हो जानेपर हम लोग घोर अन्धकूपमें गिर पड़ेंगे, जहाँसे फिर निकलना कठिन होगा। इसलिये

तुम पृथ्वीपर जाकर धर्मवर्णको समझाओ। हम लोग दयाके पात्र हैं, हमारे वचनोंसे उसको यह बताओ कि 'हमारी वंशरूपा दूर्वाको कालरूपी चूहा प्रतिदिन खा रहा है। क्रमशः सारे वंशका नाश हो गया है, एक तुम्हीं बचे हो। जब तुम भी मर जाओगे तब सन्तान-परम्परा न होनेके कारण तुम्हें भी अन्धकूपमें गिरना पड़ेगा। इसलिये गृहस्थ-धर्मको स्वीकार करके सन्तानकी वृद्धि करो। इससे हमारी और तुम्हारी दोनोंकी ऊर्ध्वगति होगी। यदि एक भी पुत्र वैशाख, माघ अथवा कार्तिकमासमें हमारे उद्देश्यसे स्नान, श्राद्ध और दान करेगा तो उससे हम लोगोंकी ऊर्ध्वगति होगी और नरकसे उद्धार हो जायगा। यदि एक पुत्र भी भगवान् विष्णुका भक्त हो जाय, एक भी एकादशीका व्रत रहने लगे अथवा यदि एक भी भगवान् विष्णुकी पापनाशक कथा श्रवण करे तो उसकी सौ बीती हुई पीढ़ियोंका तथा सौ भावी पीढ़ियोंका उद्धार होता है। वे पीढ़ियाँ पापसे आवृत होनेपर भी नरकका दर्शन नहीं करतीं। दया और धर्मसे रहित उन बहुत-से पुत्रोंके जन्मसे क्या लाभ, जो कुलमें उत्पन्न होकर सर्वव्यापी भगवान् नारायणकी पूजा नहीं करते*।' इस प्रकार प्रिय वचनोंद्वारा धर्मवर्णको समझाकर तुम उसे विरक्तिपूर्ण ब्रह्मचर्य-आश्रमसे गृहस्थ-आश्रममें प्रवेश करनेकी सलाह दो।

पितरोंकी यह बात सुनकर धर्मवर्ण अत्यन्त विस्मित हुआ और हाथ जोड़कर बोला—'मैं ही धर्मवर्ण नामसे विख्यात आपके वंशका दुराग्रही बालक हूँ। यज्ञमें महात्मा नारदजीका यह वचन सुनकर कि 'कलियुगमें प्रायः कोई भी रसनेन्द्रिय और शिश्नेन्द्रियको दृढ़तापूर्वक संयममें नहीं रखता'—मैं दुर्जनोंकी संगतिसे भयभीत हो अबतक दूसरे-दूसरे द्वीपोंमें घूमता रहा। इस कलियुगके तीन

* किमन्यैर्बहुभिः पुत्रैर्दयाधर्मविवर्जितैः। ये जाता नार्चयन्त्यद्धा विष्णुं नारायणं कुले॥
(स्क० पु०, वै० वै० मा० २२। ८१)

चरण बीत गये, अन्तिम चरणमें भी साढ़े तीन भाग व्यतीत हो चुके हैं। मेरा जन्म व्यर्थ बीता है; क्योंकि जिस कुलमें मैंने जन्म लिया, उसमें माता-पिताके ऋणको भी मैंने नहीं चुकाया। पृथ्वीके भारभूत उस शत्रुतुल्य पुत्रके उत्पन्न होनेसे क्या लाभ जो पैदा होकर भगवान् विष्णु और देवताओं तथा पितरोंकी पूजा न करे। मैं आप लोगोंकी आज्ञाका पालन करूँगा। बताइये, पृथ्वीपर किस प्रकार मुझे कलियुगसे और संसारसे भी बाधा नहीं प्राप्त होगी?'

धर्मवर्णकी बात सुनकर पितरोंके मनको कुछ आश्वासन मिला, वे बोले—बेटा! तुम गृहस्थ-आश्रम स्वीकार करके सन्तानोत्पत्तिके द्वारा हमारा उद्धार करो। जो भगवान् विष्णुकी कथामें अनुरक्त होते, निरन्तर श्रीहरिका स्मरण करते और सदाचारके पालनमें तत्पर रहते हैं, उन्हें कलियुग बाधा नहीं पहुँचाता। मानद! जिसके घरमें शालग्राम शिला अथवा महाभारतकी पुस्तक हो, उसे भी कलियुग बाधा नहीं दे सकता। जो वैशाखमासके धर्मोंका पालन करता, माघ-स्नानमें तत्पर होता और कार्तिकमें दीप देता है, उसे भी कलिकी बाधा नहीं प्राप्त होती। जो प्रतिदिन महात्मा भगवान् विष्णुकी पापनाशक एवं मोक्षदायिनी दिव्य कथा सुनता है, जिसके घरमें बलिवैश्वदेव होता है, शुभकारिणी तुलसी स्थित होती हैं तथा जिसके आँगनमें उत्तम गौ रहती हैं, उसे भी कलियुग बाधा नहीं देता। अतः इस पापात्मक युगमें भी तुम्हें कोई भय नहीं है। बेटा! शीघ्र पृथ्वीपर जाओ। इस समय वैशाखमास चल रहा है, यह सबका उपकार करनेवाला मास है। सूर्यके मेष राशिमें स्थित होनेपर तीसों तिथियाँ पुण्यदायिनी मानी गयी हैं। एक-एक तिथिमें किया हुआ पुण्य कोटि-कोटि गुना अधिक होता है। उनमें भी जो वैशाखकी अमावास्या तिथि है, वह मनुष्योंको मोक्ष देनेवाली है, देवताओं और पितरोंको वह बहुत प्रिय है, शीघ्र ही

मोक्षकी प्राप्ति करानेवाली है। जो उस दिन पितरोंके उद्देश्यसे श्राद्ध करते और जलसे भरा हुआ घड़ा एवं पिण्ड देते हैं, उन्हें अक्षय फलकी प्राप्ति होती है। अतः महामते! तुम शीघ्र जाओ और जब अमावास्या हो, तब कुम्भसहित श्राद्ध एवं पिण्डदान करो। सबका उपकार करनेके लिये गृहस्थ-धर्मका आश्रय लो। धर्म, अर्थ और कामसे सन्तुष्ट हो, उत्तम सन्तान पाकर फिर मुनिवृत्तिसे रहते हुए सुखपूर्वक द्वीप-द्वीपान्तरोंमें विचरण करो।

पितरोंके इस प्रकार आदेश देनेपर धर्मवर्ण मुनि शीघ्रतापूर्वक भूलोकमें गये। वहाँ मेष राशिमें सूर्यके स्थित रहते हुए वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके देवताओं, ऋषियों तथा पितरोंका तर्पण किया; फिर कुम्भदानसहित पापविनाशक श्राद्ध करके उसके द्वारा पितरोंको पुनरावृत्तिरहित मुक्ति प्रदान की। तत्पश्चात् उन्होंने स्वयं विवाह करके उत्तम सन्तानको जन्म दिया और लोकमें उस पापनाशिनी अमावास्या तिथिको प्रसिद्ध किया। तदनन्तर वे भक्तिपूर्वक भगवान्‌की आराधना करनेके लिये हर्षके साथ गन्धमादन पर्वतपर चले गये। इसलिये वैशाखमासकी यह अमावास्या तिथि परम पवित्र मानी गयी है।

❑❑

वैशाखकी अक्षय तृतीया और द्वादशीकी महत्ता, द्वादशीके पुण्यदानसे एक कुतियाका उद्धार

श्रुतदेवजी कहते हैं—जो मनुष्य अक्षय तृतीयाको सूर्योदयकालमें प्रातःस्नान करते हैं और भगवान् विष्णुकी पूजा करके कथा सुनते हैं, वे मोक्षके भागी होते हैं। जो उस दिन श्रीमधुसूदनकी प्रसन्नताके लिये दान करते हैं, उनका वह पुण्यकर्म भगवान्‌की आज्ञासे अक्षय फल देता है। वैशाखमासकी पवित्र तिथियोंमें शुक्लपक्षकी द्वादशी समस्त पापराशिका विनाश करनेवाली है।

शुक्ला द्वादशीको योग्य पात्रके लिये जो अन्न दिया जाता है, उसके एक-एक दानेमें कोटि-कोटि ब्राह्मण-भोजनका पुण्य होता है। शुक्लपक्षकी एकादशी तिथिमें जो भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये जागरण करता है, वह जीवन्मुक्त होता है। जो वैशाखकी द्वादशी तिथिको तुलसीके कोमलदलोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, वह समूचे कुलका उद्धार करके वैकुण्ठलोकका अधिपति होता है। जो मनुष्य त्रयोदशी तिथिको दूध, दही, शक्कर, घी और शुद्ध मधु—इन पाँच द्रव्योंसे भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये उनकी पूजा करता है तथा जो पंचामृतसे भक्तिपूर्वक श्रीहरिको स्नान कराता है, वह सम्पूर्ण कुलका उद्धार करके भगवान् विष्णुके लोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो सायंकालमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये शर्बत देता है, वह अपने पुराने पापको शीघ्र ही त्याग देता है। वैशाख शुक्ला द्वादशीमें मनुष्य जो कुछ पुण्य करता है, वह अक्षय फल देनेवाला होता है।

प्राचीनकालमें काश्मीरदेशमें देवव्रत नामक एक ब्राह्मण थे। उनके सुन्दर रूपवाली एक कन्या थी, जो मालिनीके नामसे प्रसिद्ध थी। ब्राह्मणने उस कन्याका विवाह सत्यशील नामक बुद्धिमान् द्विजके साथ कर दिया। मालिनी कुमार्गपर चलनेवाली पुंश्चली होकर स्वच्छन्दतापूर्वक इधर-उधर रहने लगी। वह केवल आभूषण धारण करनेके लिये पतिका जीवन चाहती थी, उसकी हितैषिणी नहीं थी। उसके घरमें काम-काज करनेके बहाने उपपति रहा करता था। सभी जातिके मनुष्य जारके रूपमें उसके यहाँ ठहरते थे। वह कभी पतिकी आज्ञाका पालन करनेमें तत्पर नहीं हुई। इसी दोषसे उसके सब अंगोंमें कीड़े पड़ गये, जो काल, अन्तक और यमकी भाँति उसकी हड्डियोंको भी छेदे डालते थे। उन कीड़ोंसे उसकी नाक, जिह्वा और कानोंका उच्छेद हो गया, स्तन तथा अंगुलियाँ गल गयीं, उसमें पंगुता भी आ

गयी। इन सब क्लेशोंसे मृत्युको प्राप्त होकर वह नरककी यातनाएँ भोगने लगी। एक लाख पचास हजार वर्षोंतक वह ताँबेके भाण्डमें रखकर जलायी गयी, सौ बार उसे कुत्तेकी योनिमें जन्म लेना पड़ा। तत्पश्चात् सौवीर देशमें पद्मबन्धु नामक ब्राह्मणके घरमें वह अनेक दु:खोंसे घिरी हुई कुतिया हुई। उस समय भी उसके कान, नाक, पूँछ और पैर कटे हुए थे, उसके सिरमें कीड़े पड़ गये थे और योनिमें भी कीड़े भरे रहते थे। राजन्! इस प्रकार तीस वर्ष बीत गये। एक दिन वैशाखके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको पद्मबन्धुका पुत्र नदीमें स्नान करके पवित्र हो भीगे वस्त्रसे घर आया। उसने तुलसीकी वेदीके पास जाकर अपने पैर धोये। दैवयोगसे वह कुतिया वेदीके नीचे सोयी हुई थी। सूर्योदयसे पहलेका समय था, ब्राह्मणकुमारके चरणोदकसे वह नहा गयी और तत्काल उसके सारे पाप नष्ट हो गये। फिर तो उसी क्षण उसे अपने पूर्वजन्मोंका स्मरण हो आया। पहलेके कर्मोंकी याद आनेसे वह कुतिया तपस्वीके पास जाकर दीनतापूर्वक पुकारने लगी—'हे मुने! आप हमारी रक्षा करें।' उसने पद्मबन्धु मुनिके पुत्रसे अपने पूर्वजन्मके दुराचारपूर्ण वृत्तान्त सुनाये और यह भी कहा—'ब्रह्मन्! जो कोई भी दूसरी युवती पतिके ऊपर वशीकरणका प्रयोग करती है, वह दुराचारिणी मेरी ही तरह ताँबेके पात्रमें पकायी जाती है। पति स्वामी है, पति गुरु है और पति उत्तम देवता है। साध्वी स्त्री उस पतिका अपराध करके कैसे सुख पा सकती है?* पतिका अपराध करनेवाली स्त्री सैकड़ों बार तिर्यग्योनि (पशु-पक्षियोंकी योनि)- में और अरबों बार कीड़ेकी योनिमें जन्म लेती है। इसलिये स्त्रियोंको सदैव अपने पतिकी आज्ञा पालन करनी चाहिये। ब्रह्मन्! आज मैं आपकी दृष्टिके सम्मुख

* भर्ता नाथो गुरुर्भर्ता भर्ता दैवतमुत्तमम्। विक्रियां कृत्य साध्वी सा कथं सुखमवाप्नुयात्॥
(स्क० पु०, वै० वै० मा० २४। ६२)

आयी हूँ। यदि आप मेरा उद्धार नहीं करेंगे, तो मुझे पुनः इसी यातनापूर्ण घृणित योनिका दर्शन करना पड़ेगा। अतः विप्रवर! मुझ पापाचारिणीको वैशाख शुक्लपक्षमें अपना पुण्य प्रदान करके उबार लीजिये। आपने जो पुण्यकी वृद्धि करनेवाली द्वादशी की है, उसमें स्नान, दान और अन्नभोजन करानेसे जो पुण्य हुआ है, उससे मुझ दुराचारिणीका भी उद्धार हो जायगा। महाभाग! दीनवत्सल! मुझ दुखियाके प्रति दया कीजिये। आपके स्वामी जगदीश्वर जनार्दन दीनोंके रक्षक हैं। उनके भक्त भी उन्हींके समान होते हैं। दीनवत्सल! मैं आपके दरवाजेपर रहनेवाली कुतिया हूँ। मुझ दीनाके प्रति दया कीजिये, मेरा उद्धार कीजिये। अन्तमें मैं आप द्विजेन्द्रको नमस्कार करती हूँ।'

उसका वचन सुनकर मुनिके पुत्रने कहा—कुतिया! सब प्राणी अपने किये हुए कर्मोंके ही सुख-दुःखरूप फल भोगते हैं। जैसे साँपको दिया हुआ शर्करामिश्रित दूध केवल विषकी वृद्धि करता है, उसी प्रकार पापीको दिया हुआ पुण्य उसके पापमें सहायक होता है।

मुनिकुमारके ऐसा कहनेपर कुतिया दुःखमें डूब गयी और उसके पिताके पास जाकर आर्तस्वरसे क्रन्दन करती हुई बोली—'पद्मबन्धु बाबा! मैं तुम्हारे दरवाजेकी कुतिया हूँ। मैंने सदा तुम्हारी जूठन खायी है। मेरी रक्षा करो, मुझे बचाओ। गृहस्थ महात्माके घरपर जो पालतू जीव रहते हैं, उनका उद्धार करना चाहिये, यह वेदवेत्ताओंका मत है। चाण्डाल, कौवे, कुत्ते—ये प्रतिदिन गृहस्थोंके दिये हुए टुकड़े खाते हैं; अतः उनकी दयाके पात्र हैं। जो अपने ही पाले हुए रोगादिसे ग्रस्त एवं असमर्थ प्राणीका उद्धार नहीं करता, वह नरकमें पड़ता है, यह विद्वानोंका मत है। संसारकी सृष्टि करनेवाले भगवान् विष्णु एकको कर्ता बनाकर स्वयं ही पत्नी, पुत्र आदिके व्याजसे समस्त जन्तुओंका पालन करते हैं;

अतः अपने पोष्यवर्गकी रक्षा करनी चाहिये, यह भगवान्‌की आज्ञा है। दयालु होनेके कारण आप मेरा उद्धार कीजिये।'

दुःखसे आतुर हुई कुतियाकी यह बात सुनकर घरमें बैठा हुआ मुनिपुत्र तुरंत घरसे बाहर निकला। इसी समय दयानिधान पद्मबन्धुने कुतियासे पूछा—'यह क्या वृत्तान्त है?' तब पुत्रने सब समाचार कह सुनाया। उसे सुनकर पद्मबन्धु बोले—'बेटा! तुमने कुतियासे ऐसा वचन क्यों कहा? साधुपुरुषोंके मुँहसे ऐसी बात नहीं निकलती। वत्स! देखो तो, सब लोग दूसरोंका उपकार करनेके लिये उद्यत रहते हैं। चन्द्रमा, सूर्य, वायु, रात्रि, अग्नि, जल, चन्दन, वृक्ष और साधुपुरुष सदा दूसरोंकी भलाईमें लगे रहते हैं। दैत्योंको महाबली जानकर महर्षि दधीचिने देवताओंका उपकार करनेके लिये दयापूर्वक उन्हें अपने शरीरकी हड्डी दे दी थी। महाभाग! पूर्वकालमें राजा शिबिने कबूतरके प्राण बचानेके लिये भूखे बाजको अपने शरीरका मांस दे दिया था। पहले इस पृथ्वीपर जीमूतवाहन नामक राजा हो गये हैं। उन्होंने एक सर्पका प्राण बचानेके लिये महात्मा गरुड़को अपना जीवन समर्पित कर दिया था। इसलिये विद्वान् ब्राह्मणको दयालु होना चाहिये; क्या इन्द्रदेव शुद्ध स्थानमें ही वर्षा करते हैं, अशुद्ध स्थानमें जल नहीं बरसाते? क्या चन्द्रमा चाण्डालोंके घरमें प्रकाश नहीं करते? अतः बार-बार प्रार्थना करनेवाली इस कुतियाका मैं अपने पुण्योंसे उद्धार करूँगा।'

इस प्रकार पुत्रकी मान्यताका निराकरण करके परम बुद्धिमान् पद्मबन्धुने संकल्प किया—'कुतिया! ले, मैंने द्वादशीका महापुण्य तुझे दे दिया।' ब्राह्मणके इतना कहते ही कुतियाने सहसा अपने प्राचीन शरीरका त्याग कर दिया और दिव्य देह धारणकर दिव्य वस्त्र-आभूषणोंसे विभूषित हो, दसों दिशाओंको प्रकाशित करती हुई ब्राह्मणकी आज्ञा ले स्वर्गलोकको चली गयी। वहाँ महान्

सुखोंका उपभोग करके इस पृथ्वीपर भगवान् नर-नारायणके अंशसे 'उर्वशी' नामसे प्रकट हुई।

वैशाखमासकी अन्तिम तीन तिथियोंकी महत्ता तथा ग्रन्थका उपसंहार

श्रुतदेवजी कहते हैं—राजेन्द्र! वैशाखके शुक्लपक्षमें जो अन्तिम तीन त्रयोदशीसे लेकर पूर्णिमातककी तिथियाँ हैं, वे बड़ी पवित्र और शुभकारक हैं। उनका नाम 'पुष्करिणी' है, वे सब पापोंका क्षय करनेवाली हैं। जो सम्पूर्ण वैशाखमासमें स्नान करनेमें असमर्थ हो, वह यदि इन तीन तिथियोंमें भी स्नान करे, तो वैशाखमासका पूरा फल पा लेता है। पूर्वकालमें वैशाखमासकी एकादशी तिथिको शुभ अमृत प्रकट हुआ। द्वादशीको भगवान् विष्णुने उसकी रक्षा की। त्रयोदशीको उन श्रीहरिने देवताओंको सुधा-पान कराया। चतुर्दशीको देवविरोधी दैत्योंका संहार किया और पूर्णिमाके दिन समस्त देवताओंको उनका साम्राज्य प्राप्त हो गया। इसलिये देवताओंने सन्तुष्ट होकर इन तीन तिथियोंको वर दिया—'वैशाखमासकी ये तीन शुभ तिथियाँ मनुष्योंके पापोंका नाश करनेवाली तथा उन्हें पुत्र-पौत्रादि फल देनेवाली हों। जो मनुष्य इस सम्पूर्ण मासमें स्नान न कर सका हो, वह इन तिथियोंमें स्नान कर लेनेपर पूर्ण फलको ही पाता है। वैशाखमासमें लौकिक कामनाओंका नियमन करनेपर मनुष्य निश्चय ही भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। महीनेभर नियम निभानेमें असमर्थ मानव यदि उक्त तीन दिन भी कामनाओंका संयम कर सके तो उतनेसे ही पूर्ण फलको पाकर भगवान् विष्णुके धाममें आनन्दका अनुभव करता है।'

इस प्रकार वर देकर देवता अपने धामको चले गये। अतः पुष्करिणी नामसे प्रसिद्ध अन्तिम तीन तिथियाँ पुण्यदायिनी,

समस्त पापराशिका नाश करनेवाली तथा पुत्र-पौत्रको बढ़ानेवाली हैं। जो वैशाखमासमें अन्तिम तीन दिन गीताका पाठ करता है, उसे प्रतिदिन अश्वमेध-यज्ञका फल मिलता है। जो उक्त तीनों दिन विष्णुसहस्रनामका पाठ करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन करनेमें इस भूलोक तथा स्वर्गलोकमें कौन समर्थ है? पूर्णिमाको सहस्रनामोंके द्वारा भगवान् मधुसूदनको दूधसे नहलाकर मनुष्य पापहीन वैकुण्ठधाममें जाता है। वैशाखमासमें प्रतिदिन भागवतके आधे या चौथाई श्लोकका पाठ करनेवाला मनुष्य ब्रह्मभावको प्राप्त होता है। जो वैशाखके अन्तिम तीन दिनोंमें भागवतशास्त्रका श्रवण करता है, वह जलसे कमलके पत्तेकी भाँति कभी पापोंसे लिप्त नहीं होता। उक्त तीनों दिनोंके सेवनसे कितने ही मनुष्योंने देवत्व प्राप्त कर लिया, कितने ही सिद्ध हो गये और कितनोंने ब्रह्मत्व पा लिया। ब्रह्मज्ञानसे मुक्ति होती है। अथवा प्रयागमें मृत्यु होनेसे या वैशाखमासमें नियमपूर्वक प्रातःकाल जलमें स्नान करनेसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। इसलिये वैशाखके अन्तिम तीन दिनोंमें स्नान, दान और भगवत्पूजन आदि अवश्य करना चाहिये। वैशाखमासके उत्तम माहात्म्यका पूरा-पूरा वर्णन रोग-शोकसे रहित जगदीश्वर भगवान् नारायणके सिवा दूसरा कौन कर सकता है। तुम भी वैशाखमासमें दान आदि उत्तम कर्मका अनुष्ठान करो। इससे निश्चय ही तुम्हें भोग और मोक्षकी प्राप्ति होगी।

इस प्रकार मिथिलापति जनकको उपदेश देकर श्रुतदेवजीने उनकी अनुमति ले वहाँसे जानेका विचार किया। तब राजर्षि जनकने अपने अभ्युदयके लिये उत्तम उत्सव कराया और श्रुतदेवजीको पालकीपर बिठाकर विदा किया। वस्त्र, आभूषण, गौ, भूमि, तिल और सुवर्ण आदिसे उनकी पूजा और वन्दना करके राजाने उनकी परिक्रमा की। तत्पश्चात् उनसे विदा हो महातेजस्वी एवं परम यशस्वी श्रुतदेवजी सन्तुष्ट हो प्रसन्नतापूर्वक

वहाँसे अपने स्थानको गये। राजाने वैशाख-धर्मका पालन करके मोक्ष प्राप्त किया।

नारदजी कहते हैं—अम्बरीष! यह उत्तम उपाख्यान मैंने तुम्हें सुनाया है, जो कि सब पापोंका नाशक तथा सम्पूर्ण सम्पत्तियोंको देनेवाला है। इससे मनुष्य भुक्ति, मुक्ति, ज्ञान एवं मोक्ष पाता है।

नारदजीका यह वचन सुनकर महायशस्वी राजा अम्बरीष मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने बाह्य जगत्के व्यापारोंसे निवृत्त होकर मुनिको साष्टांग प्रणाम किया और अपने सम्पूर्ण वैभवोंसे उनकी पूजा की। तत्पश्चात् उनसे विदा लेकर देवर्षि नारदजी दूसरे लोकमें चले गये; क्योंकि दक्ष प्रजापतिके शापसे वे एक स्थानपर नहीं ठहर सकते। राजर्षि अम्बरीष भी नारदजीके बताये हुए सब धर्मोंका अनुष्ठान करके निर्गुण परब्रह्म परमात्मामें विलीन हो गये। जो इस पापनाशक एवं पुण्यवर्द्धक उपाख्यानको सुनता अथवा पढ़ता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। जिनके घरमें यह लिखी हुई पुस्तक रहती है, उनके हाथमें मुक्ति आ जाती है। फिर जो सदा इसके श्रवणमें मन लगाते हैं, उनके लिये तो कहना ही क्या है।

स्कन्दपुराणान्तर्गत वैशाखमास-माहात्म्य सम्पूर्ण

❑❑

कार्तिक-माहात्म्य

कार्तिकमासकी श्रेष्ठता तथा उसमें करनेयोग्य स्नान, दान, भगवत्पूजन आदि धर्मोंका महत्त्व

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥

'भगवान् नारायण, नरश्रेष्ठ नर तथा सरस्वतीदेवीको नमस्कार करके जयस्वरूप इतिहास-पुराणका पाठ करना चाहिये।'

ऋषि बोले—सूतजी! हमलोग कार्तिकमासका माहात्म्य सुनना चाहते हैं।

सूतजी बोले—ऋषियो! तुमने मुझसे जो प्रश्न किया है, उसीको ब्रह्मपुत्र नारदजीने जगद्गुरु ब्रह्मासे इस प्रकार पूछा था—'पितामह! मासोंमें सबसे श्रेष्ठ मास, देवताओंमें सर्वोत्तम देवता और तीर्थोंमें विशिष्ट तीर्थ कौन हैं, यह बताइये।'

ब्रह्माजी बोले—मासोंमें कार्तिक, देवताओंमें भगवान् विष्णु और तीर्थोंमें नारायणतीर्थ (बदरिकाश्रम) श्रेष्ठ है। ये तीनों कलियुगमें अत्यन्त दुर्लभ हैं।

इतना कहकर ब्रह्माजीने भगवान् राधाकृष्णका स्मरण किया और पुनः नारदजीसे कहा—बेटा! तुमने समस्त लोकोंका उद्धार करनेके लिये यह बहुत अच्छा प्रश्न किया। मैं कार्तिकका माहात्म्य कहता हूँ। कार्तिकमास भगवान् विष्णुको सदा ही प्रिय है। कार्तिकमें भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे जो कुछ पुण्य किया जाता है, उसका नाश मैं नहीं देखता। नारद! यह मनुष्ययोनि दुर्लभ है। इसे पाकर मनुष्य अपनेको इस प्रकार रखे कि उसे पुनः नीचे न गिरना पड़े। कार्तिक सब मासोंमें उत्तम है। यह पुण्यमय वस्तुओंमें सबसे अधिक पुण्यतम और पावन पदार्थोंमें सबसे अधिक पावन है। इस महीनेमें तैंतीसों देवता मनुष्यके सन्निकट हो जाते हैं और

इसमें किये हुए स्नान, दान, भोजन, व्रत, तिल, धेनु, सुवर्ण, रजत, भूमि, वस्त्र आदिके दानोंको विधिपूर्वक ग्रहण करते हैं। कार्तिकमें जो कुछ दिया जाता है, जो भी तप किया जाता है, उसे सर्वशक्तिमान् भगवान् विष्णुने अक्षय फल देनेवाला बतलाया है। भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे मनुष्य कार्तिकमें जो कुछ दान देता है, उसे वह अक्षयरूपमें प्राप्त करता है। उस समय अन्नदानका महत्त्व अधिक है। उससे पापोंका सर्वथा नाश हो जाता है। जो कार्तिकमास प्राप्त हुआ देख पराये अन्नको सर्वथा त्याग देता है, वह अतिकृच्छ्र यज्ञका फल प्राप्त करता है। कार्तिकमासके समान कोई मास नहीं, सत्ययुगके समान कोई युग नहीं, वेदोंके समान कोई शास्त्र नहीं और गंगाजीके समान दूसरा कोई तीर्थ नहीं है*। इसी प्रकार अन्नदानके सदृश दूसरा कोई दान नहीं है। दान करनेवाले पुरुषोंके लिये न्यायोपार्जित द्रव्यके दानका सुअवसर दुर्लभ है, उसका भी तीर्थमें दान किया जाना तो और भी दुर्लभ है। मुनिश्रेष्ठ! पापसे डरनेवाले मनुष्यको कार्तिकमासमें शालग्रामशिलाका पूजन और भगवान् वासुदेवका स्मरण अवश्य करना चाहिये। दान आदि करनेमें असमर्थ मनुष्य प्रतिदिन प्रसन्नतापूर्वक नियमसे भगवन्नामोंका स्मरण करे। कार्तिकमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये विष्णु-मन्दिर अथवा शिव-मन्दिरमें रातको जागरण करे। शिव और विष्णुके मन्दिर न हों तो किसी भी देवताके मन्दिरमें जागरण करे। यदि दुर्गम वनमें स्थित हो या विपत्तिमें पड़ा हो तो पीपलके वृक्षकी जड़में अथवा तुलसीके वनोंमें जागरण करे। भगवान् विष्णुके समीप उन्हींके नामों और लीला-कथाओंका गायन करे। यदि आपत्तिमें पड़ा हुआ मनुष्य कहीं अधिक जल न पावे अथवा रोगी होनेके कारण जलसे स्नान न कर सके तो भगवान्‌के नामसे

---

* न कार्तिकसमो मासो न कृतेन समं युगम्। न वेदसदृशं शास्त्रं न तीर्थं गंगया समम्॥
(स्क० पु०, वै० का० मा० १। ३६-३७)

मार्जनमात्र कर ले। व्रतमें स्थित हुआ पुरुष यदि उद्यापनकी विधि करनेमें असमर्थ हो तो व्रतकी समाप्तिके बाद उसकी पूर्णताके लिये केवल ब्राह्मणोंको भोजन करावे। जो स्वयं दीपदान करनेमें असमर्थ हो, वह दूसरेके बुझे हुए दीपको जला दे अथवा हवा आदिसे यत्नपूर्वक उसकी रक्षा करे। भगवान् विष्णुकी पूजा न हो सकनेपर तुलसी अथवा आँवलेका भगवद्बुद्धिसे पूजन करे। मन-ही-मन भगवान् विष्णुके नामोंका निरन्तर कीर्तन करता रहे।

गुरुके आदेश देनेपर उनके वचनका कभी उल्लंघन न करे। यदि अपने ऊपर दुःख आदि आ पड़े तो गुरुकी शरणमें जाय। गुरुकी प्रसन्नतासे मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर लेता है। परम बुद्धिमान् कपिल और महातपस्वी सुमति भी अपने गुरु गौतमकी सेवासे अमरत्वको प्राप्त हुए हैं। इसलिये विष्णु-भक्त पुरुष कार्तिकमें सब प्रकारसे प्रयत्न करके गुरुकी सेवा करे। ऐसा करनेसे उसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। सब दानोंसे बढ़कर कन्यादान है, उससे अधिक विद्यादान है, विद्यादानसे भी गोदानका महत्त्व अधिक है और गोदानसे भी बढ़कर अन्नदान है; क्योंकि यह समस्त संसार अन्नके आधारपर ही जीवित रहता है। इसलिये कार्तिकमें अन्नदान अवश्य करना चाहिये। कार्तिकमें नियमका पालन करनेपर अवश्य ही भगवान् विष्णुका सारूप्य एवं मोक्षदायक पद प्राप्त होता है। कार्तिकमें ब्राह्मण पति-पत्नीको भोजन कराना चाहिये, चन्दनसे उनका पूजन करना चाहिये, अनेक प्रकारके वस्त्र, रत्न और कम्बल देने चाहिये। ओढ़नेके साथ ही रूईदार बिछावन, जूता और छाता भी दान करने चाहिये। कार्तिकमें भूमिपर शयन करनेवाला मनुष्य युग-युगके पापोंका नाश कर डालता है। जो कार्तिकमासमें भगवान् विष्णुके आगे अरुणोदयकालमें जागरण करता है और नदीमें स्नान, भगवान् विष्णुकी कथाका श्रवण, वैष्णवोंका दर्शन तथा नित्यप्रति भगवान् विष्णुका पूजन करता है, उसके पितरोंका नरकसे उद्धार

हो जाता है। अहो! जिन लोगोंने भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुका पूजन नहीं किया, वे इस कलियुगकी कन्दरामें गिरकर नष्ट हो गये, लुट गये। जो मनुष्य कमलके एक फूलसे देवताओंके स्वामी भगवान् कमलापतिकी पूजा करता है, वह करोड़ों जन्मोंके पापोंका नाश कर डालता है। मुनिश्रेष्ठ! जो कार्तिकमें एक लाख तुलसीदल चढ़ाकर भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, वह एक-एक दलपर मुक्तादान करनेका फल प्राप्त करता है। जो भगवान्के श्रीअंगोंसे उतारी हुई प्रसादस्वरूपा तुलसीको मुखमें, मस्तकपर और शरीरमें धारण करता है तथा भगवान्के निर्माल्योंसे अपने अंगोंका मार्जन करता है, वह मनुष्य सम्पूर्ण रोगों और पापोंसे मुक्त हो जाता है। भगवत्पूजनसम्बन्धी प्रसादस्वरूप शंखका जल, भगवान्की भक्ति, निर्माल्य पुष्प आदि, चरणोदक, चन्दन और धूप ब्रह्महत्याका नाश करनेवाले हैं। नारद! कार्तिकमासमें प्रातःकाल स्नान करे और प्रतिदिन अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको अन्न-दान दे; क्योंकि सब दानोंमें अन्न-दान ही सबसे बढ़कर है। अन्नसे ही मनुष्य जन्म लेता और अन्नसे ही बढ़ता है। अन्नको समस्त प्राणियोंका प्राण माना गया है। अन्न-दान करनेवाला पुरुष संसारमें सब कुछ देनेवाला और सम्पूर्ण यज्ञोंका अनुष्ठान करनेवाला है। पूर्वकालमें सत्यकेतु ब्राह्मणने केवल अन्न-दानसे सब पुण्योंका फल पाकर परम दुर्लभ मोक्षको भी प्राप्त कर लिया था। कार्तिकमासमें अनेक प्रकारके दान देकर भी यदि मनुष्य भगवान्का चिन्तन नहीं करता तो वे दान उसे कभी पवित्र नहीं करते। भगवन्नाम-स्मरणकी महिमाका वर्णन मैं भी नहीं कर सकता। '*गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे गोविन्द गोविन्द मुकुन्द कृष्ण। गोविन्द गोविन्द रथांगपाणे गोविन्द दामोदर माधवेति।*' इस प्रकार प्रतिदिन कीर्तन करे। नित्यप्रति भागवतके आधे श्लोक या चौथाई श्लोकका भी कार्तिकमें श्रद्धा और भक्तिके साथ अवश्य पाठ करे। जिन्होंने भागवतपुराणका

श्रवण नहीं किया, पुराणपुरुष भगवान् नारायणकी आराधना नहीं की और ब्राह्मणोंके मुखरूपी अग्निमें अन्नकी आहुति नहीं दी, उन मनुष्योंका जन्म व्यर्थ ही गया। देवर्षे! जो मनुष्य कार्तिकमासमें प्रतिदिन गीताका पाठ करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन करनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। गीताके समान कोई शास्त्र न तो हुआ है और न होगा। एकमात्र गीता ही सदा सब पापोंको हरनेवाली और मोक्ष देनेवाली है*। गीताके एक अध्यायका पाठ करनेसे मनुष्य घोर नरकसे मुक्त हो जाते हैं, जैसे जड़ ब्राह्मण मुक्त हो गया था। सात समुद्रोंतककी पृथ्वीका दान करनेसे जो फल प्राप्त होता है, शालग्रामशिलाके दान करनेसे मनुष्य उसी फलको पा लेता है। अतः कार्तिकमासमें स्नान तथा दानपूर्वक शालग्रामशिलाका दान अवश्य करना चाहिये।

❑❑

विभिन्न देवताओंके संतोषके लिये कार्तिकस्नानकी विधि तथा स्नानके लिये श्रेष्ठ तीर्थोंका वर्णन

ब्रह्माजी कहते हैं—कार्तिकका व्रत आश्विन शुक्लपक्षकी दशमीसे आरम्भ करके कार्तिक शुक्ला दशमीको समाप्त करे, अथवा आश्विनकी पूर्णिमाको आरम्भ करके कार्तिककी पूर्णिमाको पूरा करे। भक्तिमान् पुरुष आश्विन शुक्लपक्षकी एकादशी आनेपर भगवान् विष्णुको नमस्कार करके उनसे कार्तिकव्रत करनेकी आज्ञा प्राप्त करे और विधिसे कार्तिकव्रतका पालन करे। बारहों महीनोंमें मार्गशीर्षमास अत्यन्त पुण्यप्रद है, उससे अधिक पुण्यफल

---

* कार्तिके मासि विप्रेन्द्र यस्तु गीतां पठेन्नरः। तस्य पुण्यफलं वक्तुं मम शक्तिर्न विद्यते॥
गीतायास्तु समं शास्त्रं न भूतं न भविष्यति। सर्वपापहरा नित्यं गीतैका मोक्षदायिनी॥
(स्क० पु०, वै० का० मा० २।४९-५०)

देनेवाला नर्मदातटपर वैशाखमास बताया गया है। उससे लाखगुना अधिक प्रयागमें माघमासका महत्त्व है। उससे भी महान् फल देनेवाला कार्तिकमास है। इसका महत्त्व सर्वत्र जलमें एक-सा ही है। एक ओर सब दान, व्रत और नियम तथा दूसरी ओर कार्तिकका स्नान तराजूपर रखकर ब्रह्माजीने तौला तो कार्तिकका ही पलड़ा भारी रहा। स्नान, दीपदान, तुलसीके पौधोंको लगाना और सींचना, पृथ्वीपर शयन, ब्रह्मचर्यका पालन, भगवान् विष्णुके नामोंका संकीर्तन तथा पुराणोंका श्रवण—इन सब नियमोंका जो कार्तिकमासमें (निष्कामभावसे) पालन करते हैं, वे ही जीवन्मुक्त हैं। यह व्रत भगवान् श्रीकृष्णको बहुत प्रिय है। सूर्यभक्त, गणेशभक्त, शक्ति-उपासक, शिवोपासक और वैष्णव—सभीको सब पापोंका निवारण करनेके लिये कार्तिकस्नान करना चाहिये। सूर्यकी प्रीतिके लिये जबतक सूर्यनारायण तुला राशिपर स्थित हों तबतक व्रत करना चाहिये। आश्विनकी पूर्णिमासे लेकर कार्तिककी पूर्णिमातक भगवान् शंकरकी प्रसन्नताके लिये स्नान करना चाहिये। देवीपक्ष अर्थात् आश्विन शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर कार्तिक कृष्ण चतुर्दशीकी महारात्रिके आनेतक भगवती दुर्गाकी प्रसन्नताके लिये स्नान करना चाहिये। गणेशजीकी प्रसन्नताके लिये आश्विन कृष्ण चतुर्थीसे लेकर कार्तिक कृष्ण चतुर्थीतक नियमपूर्वक स्नान करना चाहिये। जो आश्विन शुक्लपक्षकी एकादशीसे लेकर कार्तिक शुक्ल एकादशीतक कार्तिकव्रतकी समाप्ति करता है, उसके ऊपर भगवान् जनार्दन प्रसन्न होते हैं। जो दूसरोंके संगवश या बलात् जानकर अथवा बिना जाने ही कार्तिकमासमें प्रातःस्नानका नियम पूरा कर लेता है, वह कभी यम-यातनाको नहीं देखता। अथवा जो ब्राह्मण कार्तिकमें प्रातःस्नान करते हैं, उन्हें ओढ़नेके लिये कम्बल या रजाई देकर स्नानजनित पुण्यफलको प्राप्त करे। कार्तिकमासमें विशेषतः श्रीराधा और श्रीकृष्णकी पूजा करनी चाहिये। जो कार्तिकमें

तुलसीवृक्षके नीचे श्रीराधा और श्रीकृष्णकी मूर्तिका (निष्कामभावसे) पूजन करते हैं, उन्हें जीवन्मुक्त समझना चाहिये। हजारों पापोंसे युक्त मनुष्य क्यों न हो, वह कार्तिकस्नानसे अवश्य पापमुक्त हो जाता है। तुलसीके अभावमें आँवलेके नीचे पूजा करनी चाहिये। मुख्य पूजाकी विधि सूर्यमण्डलमें करनी चाहिये अर्थात् सूर्यमण्डलकी ओर देखकर सूर्यरूपी नारायणके लिये पूजनोपचार समर्पित करना चाहिये। सब देवता अप्रत्यक्ष हैं, केवल ये भगवान् सूर्य ही प्रत्यक्ष हैं। अन्य सब देवता कालके अधीन हैं, परंतु भगवान् सूर्य कालके भी काल हैं। जो दरिद्र है वही दानका पात्र है। उसकी अपेक्षा भी विद्वान् पुरुष दानका विशेष पात्र है। भगवान् विष्णुकी चल मूर्तिसे अचल मूर्ति श्रेष्ठ मानी गयी है। मूर्तिके अभावमें भगवद्बुद्धिसे पीपल अथवा वटकी पूजा करनी चाहिये। पीपल भगवान् विष्णुका और वट भगवान् शंकरका स्वरूप है। शालग्रामशिलाके चक्रमें सदा भगवान् विष्णुका निवास है, इसलिये प्रयत्नपूर्वक शालग्रामकी पूजा करनी चाहिये। पलाश ब्रह्माजीके अंशसे उत्पन्न हुआ है। जो कार्तिकमासमें उसके पत्तलमें भोजन करता है, वह भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। पीपलके रूपमें साक्षात् भगवान् विष्णु विराजमान हैं, इसलिये कार्तिकमें प्रयत्नपूर्वक उसका पूजन करना चाहिये। जो लोग कार्तिकमासमें स्नान, जागरण, दीपदान और तुलसीवनकी रक्षा करते हैं, वे भगवान् विष्णुके स्वरूप हैं। जो भगवान् विष्णुके मन्दिरमें झाड़ू देकर स्वस्तिक आदिका (निष्कामभावसे) मंगल चिह्न बनाते और भगवान् विष्णुकी पूजा करते हैं, वे जीवन्मुक्त हैं।

जब दो घड़ी रात बाकी रहे, तब तुलसीकी मृत्तिका, वस्त्र और कलश लेकर जलाशयके समीप जाय। पैर धोकर गंगा आदि नदियों तथा विष्णु और शिव आदि देवताओंका स्मरण करे। फिर नाभिके बराबर जलमें खड़ा होकर इस मन्त्रको पढ़े—

कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥

'जनार्दन! देवेश्वर दामोदर! लक्ष्मीसहित आपकी प्रसन्नताके लिये मैं कार्तिकमें प्रातःस्नान करूँगा।'

तत्पश्चात्—

गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे।
नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने॥
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते।

'भगवन्! आप श्रीराधाके साथ मेरे दिये हुए इस अर्घ्यको स्वीकार करें। हरे! आप कमलनाभको नमस्कार है। जलमें शयन करनेवाले आप नारायणको नमस्कार है। हृषीकेश! यह अर्घ्य ग्रहण कीजिये, आपको बार-बार नमस्कार है।'

मनुष्य किसी भी तीर्थमें स्नान करे, उसे गंगाका स्मरण अवश्य करना चाहिये। पहले मृत्तिका आदिसे स्नान करके पावमानी ऋचाओंद्वारा अपने मस्तकपर अभिषेक करे। अघमर्षण और स्नानांगतर्पण करके पुरुषसूक्तसे सिरपर जल छिड़के। उसके बाद बाहर आकर पुनः मस्तकपर तीर्थका जल सींचे। फिर हाथमें तुलसी लेकर तीन बार आचमन करके पानीसे बाहर धोती निचोड़े। वस्त्र निचोड़नेके पश्चात् तिलक आदि करे। कार्तिकमें जहाँ कहीं भी प्रत्येक जलाशयके जलमें स्नान करना चाहिये। गरम जलकी अपेक्षा ठण्डे जलमें स्नान करनेसे दसगुना पुण्य होता है। उससे सौगुना पुण्य बाहरी कुएँके जलमें स्नान करनेसे होता है। उससे अधिक पुण्य बावड़ीमें और उससे भी अधिक पुण्य पोखरेमें स्नान करनेसे होता है। उससे दसगुना झरनोंमें और उससे भी अधिक पुण्य कार्तिकमें नदीस्नान करनेसे होता है। उससे भी दसगुना तीर्थस्थानमें बताया गया है। तीर्थसे दसगुना पुण्य वहाँ होता है, जहाँ दो नदियोंका संगम हो और यदि कहीं तीन नदियोंका संगम हो, तब तो पुण्यकी

कोई सीमा ही नहीं है। सिन्धु, कृष्णा, वेणी, यमुना, सरस्वती, गोदावरी, विपासा (व्यास), नर्मदा, तमसा, मही, कावेरी, सरयू, क्षिप्रा, चर्मण्वती (चम्बल), बितस्ता (झेलम), वेदिका, शोणभद्र, वेत्रवती (बेतवा), अपराजिता, गण्डकी, गोमती, पूर्णा, ब्रह्मपुत्रा, मानसरोवर, वाग्मती*, शतद्रु (शतलज)—ये तीर्थ कार्तिकमें दुर्लभ हैं। सब स्थलोंसे अधिक आर्यावर्त (विन्ध्याचल और हिमालयके भीतरका प्रदेश—उत्तर भारत) पुण्यदायक है, उससे भी कोल्हापुरी श्रेष्ठ है, कोल्हापुरीसे श्रेष्ठ विष्णुकांची और शिवकांची हैं। उससे श्रेष्ठ है अनन्तसेनका निवासस्थान वराहक्षेत्र, वराहक्षेत्रसे चक्रकक्षेत्र और चक्रकक्षेत्रसे अधिक पुण्यमय मुक्तिकक्षेत्र है। उससे श्रेष्ठ अवन्तीपुरी और अवन्तीपुरीसे श्रेष्ठ बदरिकाश्रम है। बदरिकाश्रमसे अयोध्या, अयोध्यासे गंगाद्वारा, गंगाद्वारसे कनखल और कनखलसे भी श्रेष्ठ मथुरा है; क्योंकि कार्तिकमें वहाँ स्वयं भगवान् राधाकृष्ण स्नान करते हैं। मथुरासे भी श्रेष्ठ द्वारका है। जिन्होंने भगवान् गोविन्दमें अपने चित्तको लगा रखा है, उनके लिये द्वारका सूर्यके समान पुण्यका प्रकाश करनेवाली है। द्वारकासे भी श्रेष्ठ भागीरथी हैं। वह भी जहाँ विन्ध्यपर्वतसे मिलती हैं, वहाँ अधिक श्रेष्ठ हैं। उससे दसगुना पुण्य तीर्थराज प्रयागमें होता है। उससे श्रेष्ठ काशी है, जिसके आश्रयसे गंगाजी भी मनुष्योंके सब पापोंका नाश करती हैं। काशीमें पंचनद (पंचगंगा) तीर्थ है, जो तीनों लोकोंमें विख्यात है। कार्तिकमास आनेपर रौरव नरकमें पड़े हुए पितर भी चिल्लाते हैं कि क्या हमारे वंशमें कोई ऐसा भाग्यवान् पैदा होगा, जो पंचगंगामें जाकर हमारे लिये नरकसे उद्धार करनेवाला तर्पण करेगा। लाखों पाप करके भी मनुष्य यदि पंचगंगामें नहाकर विन्दुमाधवजीकी पूजा करे तो उसके सभी पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं।

---

* नेपालकी एक पुण्यमयी नदी जो सरस्वतीका स्वरूप समझी जाती है और जिसका महत्त्व गंगाके समान है।

कुछ रात बाकी रहे तभी स्नान किया जाय तो वह उत्तम और भगवान् विष्णुको सन्तुष्ट करनेवाला है। सूर्योदयकालमें किया हुआ स्नान मध्यम श्रेणीका है, जबतक कृत्तिका अस्त न हो, तभीतक स्नानका उत्तम समय है, अन्यथा बहुत विलम्ब करके किया हुआ स्नान कार्तिकस्नानकी श्रेणीमें नहीं आता। स्त्रियोंको पतिकी आज्ञा लेकर कार्तिकस्नान करना चाहिये; क्योंकि पतिसे बिना पूछे जो धर्मकार्य किया जाता है, वह पतिकी आयुको क्षीण कर देता है। स्त्रियोंके लिये पतिकी सेवा छोड़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है[१]। जो पतिकी आज्ञाका पालन करे, वही इस संसारमें धर्मवती है; केवल व्रत आदिसे धर्मवती नहीं होती। पति यदि दरिद्र, पतित, मूर्ख अथवा दीन भी हो तो वह वैसा होता हुआ भी स्त्रीका आश्रय है। उसके त्यागसे स्त्री नरकमें गिरती है। जिसके दोनों हाथ, दोनों पैर, वाणी और मन—ये काबूमें रहें तथा जिसमें विद्या, तप एवं कीर्ति हो, वही मनुष्य तीर्थके फलका भागी होता है। जिसकी तीर्थोंमें श्रद्धा न हो, जो तीर्थमें भी पापकी ही बात सोचता हो, नास्तिक हो, जिसका मन दुविधामें पड़ा हो तथा जो कोरा तर्कवादी हो—ये पाँच प्रकारके मनुष्य तीर्थफलके भागी नहीं होते[२]। जो ब्राह्मण प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर तीर्थमें स्नान करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो परब्रह्म परमात्माको प्राप्त होता है।

स्नानका तत्त्व जाननेवाले मनीषी पुरुषोंने चार प्रकारके स्नान बतलाये हैं—वायव्य, वारुण, ब्राह्म और दिव्य। गोधूलिसे किया हुआ स्नान वायव्य कहलाता है। समुद्र आदिके जलमें जो स्नान

१-अपृष्ट्वा यत्कृतं धर्म्यं भर्तारं तत्क्षयं नयेत्। स्त्रीणां नास्त्यपरो धर्मो भर्तारं प्रोज्झ्य कश्चन॥

२-दरिद्रः पतितो मूर्खो दीनोऽपि यदि चेत्पतिः। तादृशः शरणं स्त्रीणां तत्त्यागान्निरयं व्रजेत्॥
यस्य हस्तौ च पादौ च वाङ्मनश्च सुसंयतम्। विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलभाङ्नरः॥
अश्रद्दधानः पापात्मा नास्तिकश्छिन्नमानसः। हेतुवादी च पञ्चैते न तीर्थफलभागिनः॥
(स्क० पु०, वै० का० मा० ४। ७२। ७४, ७६, ७७)

किया जाता है, उसे वारुण कहते हैं। वेदमन्त्रोंके उच्चारणपूर्वक जो स्नान होता है, उसका नाम ब्राह्म है तथा मेघों अथवा सूर्यकी किरणोंद्वारा जो जल अपने शरीरपर गिरता है, उसे दिव्य स्नान कहा गया है। इन सभी स्नानोंमें वारुण स्नान सबसे उत्तम है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यको मन्त्रोच्चारणपूर्वक स्नान करना चाहिये। स्त्री और शूद्रके लिये बिना मन्त्रके ही स्नानका विधान है। प्राचीन समयमें श्रेष्ठ तीर्थ पुष्करमें जहाँ नन्दा-संगम है, वहीं नन्दाके कहनेसे राजा प्रभंजन कार्तिकमासमें पुष्करस्नान करके व्याघ्रयोनिसे मुक्त हुए थे और नन्दा भी कार्तिकमें पुष्करका स्पर्श पाकर परम धामको प्राप्त हुई थी।

❑❑

कार्तिकव्रत करनेवाले मनुष्यके लिये पालनीय नियम

ब्रह्माजी कहते हैं—व्रत करनेवाले पुरुषको उचित है कि वह सदा एक पहर रात बाकी रहते ही सोकर उठ जाय। फिर नाना प्रकारके स्तोत्रोंद्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुति करके दिनके कार्यका विचार करे। गाँवसे नैर्ऋत्य कोणमें जाकर विधिपूर्वक मल-मूत्रका त्याग करे। यज्ञोपवीतको दाहिने कानपर रखकर उत्तराभिमुख होकर बैठे। पृथ्वीपर तिनका बिछा दे और अपने मस्तकको वस्त्रसे भलीभाँति ढक ले, मुखपर भी वस्त्र लपेट ले, अकेला रहे तथा साथ जलसे भरा हुआ पात्र रखे। इस प्रकार दिनमें मल-मूत्रका त्याग करे। यदि रातमें करना हो तो दक्षिण दिशाकी ओर मुँह करके बैठे। मलत्यागके पश्चात् गुदामें पाँच या सात बार मिट्टी लगाकर धोवे, बायें हाथमें दस बार मिट्टी लगावे, फिर दोनों हाथोंमें सात बार और दोनों पैरोंमें तीन बार मिट्टी लगानी चाहिये। यह गृहस्थके लिये शौचका नियम बताया गया है। ब्रह्मचारीके लिये इससे दूना, वानप्रस्थके लिये तीन-गुना और

संन्यासीके लिये चौगुना शौच कहा गया है। यह दिनमें शौचका नियम है। रातमें इससे आधा ही पालन करे। यात्रामें गये हुए मनुष्यके लिये उससे भी आधे शौचका विधान है तथा स्त्रियों और शूद्रोंके लिये उससे भी आधा शौच बताया गया है। शौचकर्मसे हीन पुरुषकी समस्त क्रियाएँ निष्फल होती हैं।

तदनन्तर दाँत और जिह्वाकी शुद्धिके लिये वृक्षके पास जाकर यह मन्त्र पढ़े—

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च।
ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते॥

'हे वनस्पते! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, सन्तति, पशु, धन, वैदिक ज्ञान, प्रज्ञा और धारणाशक्ति प्रदान करें।'

ऐसा कहकर वृक्षसे बारह अंगुलकी दाँतन ले, दूधवाले वृक्षोंसे दाँतन नहीं लेनी चाहिये। इसी प्रकार कपास, काँटेदार वृक्ष तथा जले हुए पेड़से भी दाँतन लेना मना है। जिससे उत्तम गन्ध आती हो और जिसकी टहनी कोमल हो, ऐसे ही वृक्षसे दन्तधावन ग्रहण करना चाहिये। उपवासके दिन, नवमी और षष्ठी तिथिको, श्राद्धके दिन, रविवारको, ग्रहणमें, प्रतिपदाको तथा अमावास्याको भी काष्ठसे दाँतन नहीं करनी चाहिये*। जिस दिन दाँतनका विधान नहीं है, उस दिन बारह कुल्ले कर लेने चाहिये। विधिपूर्वक दाँतोंको शुद्ध करके मुँहको जलसे धो डाले और भगवान् विष्णुके नामोंका उच्चारण करते हुए दो घड़ी रात रहते ही स्नानके लिये जलाशयपर जाय। कार्तिकके व्रतका पालन करनेवाला पुरुष विधिसे स्नान करे। फिर धोती निचोड़कर अपनी रुचिके अनुसार तिलक करे। तत्पश्चात् अपनी शाखाके अनुकूल आह्निकसूत्रकी बतायी हुई पद्धतिसे सन्ध्योपासन करे। जबतक सूर्योदय न हो जाय तबतक

* उपवासे नवम्यां च षष्ठ्यां श्राद्धदिने रवौ। ग्रहणे प्रतिपद्दर्शे न कुर्याद्दन्तधावनम्॥
(स्क० पु०, वै० का० मा० ५। १५)

गायत्रीमन्त्रका जप करता रहे। यह रात्रिके अन्तका कृत्य बताया गया है। अब दिनका कार्य बताया जाता है। सन्ध्योपासनाके अन्तमें विष्णुसहस्रनाम आदिका पाठ करे, फिर देवालयमें आकर पूजन प्रारम्भ करे। भगवत्सम्बन्धी पदोंके गान, कीर्तन और नृत्य आदि कार्योंमें दिनका प्रथम प्रहर व्यतीत करे। तत्पश्चात् आधे पहरतक भलीभाँति पुराण-कथाका श्रवण करे। उसके बाद पुराण बाँचनेवाले विद्वान्‌की और तुलसीकी पूजा करके मध्याह्नका कर्म करनेके पश्चात् दालके सिवा शेष अन्नका भोजन करे। बलिवैश्वदेव करके अतिथियोंको भोजन कराकर जो मनुष्य स्वयं भोजन करता है, उसका वह भोजन केवल अमृत है। मुखशुद्धिके लिये तीर्थ-जल (भगवच्चरणामृत)-से तुलसी-भक्षण करे। फिर शेष दिन सांसारिक व्यवहारमें व्यतीत करे। सायंकालमें पुनः भगवान् विष्णुके मन्दिरमें जाय और सन्ध्या करके शक्तिके अनुसार दीपदान करे। भगवान् विष्णुको प्रणाम करके उनकी आरती उतारे और स्तोत्रपाठ आदि करते हुए प्रथम प्रहरमें जागरण करे। प्रथम प्रहर बीत जानेपर शयन करे। ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करे। इस प्रकार एक मासतक प्रतिदिन शास्त्रोक्त विधिका पालन करे। जो कार्तिकमासमें उत्तम व्रतका पालन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके सालोक्यको प्राप्त होता है।

कार्तिकमास आनेपर निषिद्ध वस्तुओंका त्याग करना चाहिये। तेल लगाना, परान्न भोजन करना, तेल खाना, जिसमें बहुत-से बीज हों ऐसे फलोंका सेवन तथा चावल और दाल—ये सभी कार्तिकमासमें त्याज्य हैं। लौकी, गाजर, बैगन, वनभंटा (ऊंटकटारा), बासी अन्न, भँसीड़, मसूर, दुबारा भोजन, मदिरा, पराया अन्न, काँसीके पात्रमें भोजन, छत्राक, काँजी, दुर्गन्धित पदार्थ, समुदाय (संस्था आदि)-का अन्न, वेश्याका अन्न, ग्रामपुरोहित और शूद्रका अन्न और सूतकका अन्न—ये सभी त्याग देने योग्य हैं। श्राद्धका

अन्न, रजस्वलाका दिया हुआ अन्न, जननाशौचका अन्न और लसोड़ेका फल—इन्हें कार्तिकव्रतका पालन करनेवाला पुरुष अवश्य त्याग दे। निषिद्ध पत्तलोंमें भोजन न करे। महुआ, केला, जामुन और पकड़ी—इनके पत्तोंमें भोजन करना चाहिये। कमलके पत्तेपर कदापि भोजन न करे। कार्तिकमास आनेपर जो वनवासी मुनियोंके अनुसार नियमित भोजन करता है, वह चक्रपाणि भगवान् विष्णुके परम धाममें जाता है। कार्तिकमें प्रातःकाल स्नान और भगवान्की पूजा करनी चाहिये। उस समय कथाश्रवण उत्तम माना गया है। कार्तिकमें केला और आँवलेके फलका दान करे और शीतसे कष्ट पानेवाले ब्राह्मणको कपड़ा दे। जो कार्तिकमें भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुको तुलसीदल समर्पित करता है, वह संसारसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। श्रीहरिके परम प्रिय कार्तिकमासमें जो नित्य गीतापाठ करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन सैकड़ों वर्षोंमें भी नहीं किया जा सकता। जो श्रीमद्भागवतका भी श्रवण करता है वह सब पापोंसे मुक्त हो परम शान्तिको प्राप्त होता है*। जो कार्तिककी एकादशीको निराहार रहकर व्रत करता है, वह निःसन्देह पूर्वजन्मके पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो कार्तिकमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये दूसरेके अन्नका त्याग करता है, वह भगवान् विष्णुके प्रेमको भलीभाँति प्राप्त करता है। जो राह चलकर थके-माँदे और भोजनके समयपर घरपर आये हुए अतिथिका भक्तिपूर्वक पूजन करता है वह सहस्रों जन्मोंके पापका नाश कर डालता है। जो मूढ़ मानव वैष्णव महात्माओंकी निन्दा करते हैं, वे अपने पितरोंके साथ महारौरव नरकमें गिरते हैं। जो भगवान्की और भगवद्भक्तोंकी निन्दा सुनते हुए भी वहाँसे दूर

---

* गीतापाठं तु यः कुर्यात् कार्तिके विष्णुवल्लभे। तस्य पुण्यफलं वक्तुं नालं वर्षशतैरपि॥
श्रीमद्भागवतस्यापि श्रवणं यः समाचरेत्। सर्वपापविनिर्मुक्तः परं निर्वाणमृच्छति॥
(स्क० पु०, वै० का० मा० ६। १९-२०)

नहीं हट जाता वह भगवान्‌का प्रिय भक्त नहीं है। जो कार्तिकमासमें भगवान् विष्णुकी परिक्रमा करता है उसे पग-पगपर अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। जो कार्तिकमासमें परायी स्त्रीके साथ संगम करता है, उसके पापकी शान्ति कैसे होगी, यह बताना असम्भव है। जिसके ललाटमें तुलसीकी मृत्तिकाका तिलक दिखायी देता है, उसकी ओर देखनेमें यमराज भी समर्थ नहीं हैं; फिर उनके भयानक दूतोंकी तो बात ही क्या? कार्तिकमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये धर्मका अनुष्ठान करना चाहिये। मासव्रतकी समाप्ति होनेपर उस व्रतकी पूर्णताके लिये श्रेष्ठ ब्राह्मणको दान देना चाहिये। जो कार्तिकमें भगवान् विष्णुके मन्दिरमें चूना आदिका लेप कराता है या तसवीर आदि लिखता है, वह भगवान् विष्णुके समीप आनन्दका अनुभव करता है। जो ब्राह्मण कार्तिकमासमें गभस्तीश्वरके समीप शतरुद्रीका जप करता है, उसके मन्त्रकी सिद्धि होती है। जिन्होंने तीन वर्षोंतक काशीमें रहकर भक्तिपूर्वक सांगोपांग कार्तिकव्रतका अनुष्ठान किया है, उन्हें सम्पत्ति, सन्तति, यश तथा धर्मबुद्धिकी प्राप्तिके द्वारा इस लोकमें ही उस व्रतका प्रत्यक्ष फल दिखायी देता है। कार्तिकमें प्याज, शृंग (सिंघाड़ा), सेज, बेर, राई, नशीली वस्तु, चिउड़ा—इन सबका उपयोग न करे। कार्तिकका व्रत करनेवाला मनुष्य देवता, वेद, ब्राह्मण, गुरु, गौ, व्रती, स्त्री, राजा और महात्माओंकी निन्दा न करे। कार्तिकमें केवल नरकचतुर्दशी (दिवालीके एक रोज पहले)-को शरीरमें तेल लगाना चाहिये। उसके सिवा और किसी दिन व्रती मनुष्य तेल न लगावे। नालिका, मूली, कुम्हड़ा, कैथ इनका भी त्याग करे। रजस्वला, चाण्डाल, म्लेच्छ, पतित, व्रतहीन, ब्राह्मणद्वेषी और वेद-बहिष्कृत लोगोंसे व्रती मनुष्य बातचीत न करे।

❑❑

कार्तिकव्रतसे एक पतित ब्राह्मणीका उद्धार तथा दीपदान एवं आकाशदीपकी महिमा

ब्रह्माजी कहते हैं—स्त्रियों और पुरुषोंने जन्मसे लेकर जो पाप किया है, वह सब कार्तिकमें दीपदानसे नष्ट हो जाता है। इस विषयमें मैं तुमसे एक प्राचीन इतिहासका वर्णन करता हूँ। पूर्वकालमें द्रविड़देशमें एक बुद्ध नामक ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री बड़ी दुष्टा और दुराचारपरायणा थी। उसके संसर्गदोषसे पतिकी आयु क्षीण हो गयी और वह मृत्युको प्राप्त हुआ। पतिके मर जानेपर भी वह विशेषरूपसे व्यभिचारमें लग गयी। उसको लोकनिन्दासे तनिक भी लज्जा नहीं होती थी। उसके न तो कोई पुत्र था और न भाई ही। वह सदा भिक्षाके अन्नका भोजन करती थी। अपने हाथसे बनाये हुए शुद्ध और स्वल्प अन्नको कभी न खाकर माँगकर लाये हुए बासी अन्नको ही खाती थी। दूसरेके घर रसोई बनाया करती और तीर्थयात्रा आदिसे दूर रहती थी। उसने कभी कथा भी नहीं सुनी थी। एक दिन तीर्थयात्रामें लगा हुआ कोई विद्वान् ब्राह्मण उसके घरपर आया। उसका नाम कुत्स था। उसको व्यभिचारमें आसक्त देखकर उस ब्रह्मर्षिश्रेष्ठ कुत्सने कहा—'ओ मूढ़ नारी! तू मेरी बातको ध्यान देकर सुन। पृथ्वी आदि पाँच भूतोंसे बने हुए और पीब एवं रक्तसे भरे हुए इस शरीरको, जो केवल दुःखका ही कारण है, तू क्यों पोसती है? अरी! यह देह पानीके बुलबुलेके समान है, एक दिन इसका नाश होना निश्चित है। इस अनित्य शरीरको यदि तू नित्य मानती है तो अपने मनमें बैठे हुए इस मोहको विचारपूर्वक त्याग दे। सबसे श्रेष्ठ देवता भगवान् विष्णुका चिन्तन कर और उन्हींकी लीला-कथाको आदरपूर्वक सुन और जब कार्तिकमास आवे, तब भगवान् दामोदरकी प्रीतिके लिये स्नान, दान आदि कर, दीपदान दे, भगवान् विष्णुकी परिक्रमा करके उन्हें प्रणाम कर। यह व्रत विधवा और सौभाग्यवती सभी

स्त्रियोंके करनेयोग्य है, यह सब पापोंकी शान्ति और समस्त उपद्रवोंका नाश करनेवाला है। कार्तिकमासमें निश्चय ही दीपदान भगवान् विष्णुकी प्रसन्नता बढ़ानेवाला है।'

ऐसा कहकर कुत्स ब्राह्मण दूसरेके घर चला गया और वह ब्राह्मणी भी कुत्सकी बात सुनकर पश्चात्ताप करती हुई इस निश्चयपर पहुँची कि मैं कार्तिकमासमें अवश्य व्रत करूँगी। तत्पश्चात् कार्तिकमास आनेपर उसने पूरे महीनेभर प्रातः सूर्योदयकालमें स्नान और दीपदान किया। तदनन्तर कुछ कालके बाद आयु समाप्त होनेपर उसकी मृत्यु हो गयी। वह स्वर्गलोकमें गयी और समयानुसार उसकी मुक्ति भी हो गयी। कार्तिकके व्रतमें तत्पर हो दीपदान आदि करनेवाला जो इस दीपदानका इतिहास सुनता है, वह मोक्षको प्राप्त होता है।

नारद! अब आकाशदीपका माहात्म्य सुनो। कार्तिकमास आनेपर जो प्रातःस्नानमें तत्पर हो आकाशदीपका दान करता है, वह सब लोकोंका स्वामी और सब सम्पत्तियोंसे सम्पन्न होकर इस लोकमें सुख भोगता और अन्तमें मोक्षको प्राप्त होता है। इसलिये कार्तिकमें स्नान-दान आदि कर्म करते हुए भगवान् विष्णुके मन्दिरके कँगूरेपर एक मासतक अवश्य दीपदान करना चाहिये। महाराज सुनन्दने चन्द्रशर्मा ब्राह्मणके बताये अनुसार एक मासतक विधिपूर्वक व्रत किया। वे कार्तिकमें प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान करके पवित्र होते और कोमल तुलसीदलोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करके रातमें उनके लिये आकाशदीप देते थे। दीप देनेके समय वे इस मन्त्रका उच्चारण करते थे—

दामोदराय विश्वाय विश्वरूपधराय च।
नमस्कृत्वा प्रदास्यामि व्योमदीपं हरिप्रियम्॥

'मैं सर्वस्वरूप एवं विश्वरूपधारी भगवान् दामोदरको नमस्कार करके यह आकाशदीप देता हूँ, जो भगवान्‌को परम प्रिय है।'

'देवेश्वर! इस व्रतसे आपमें मेरी भक्ति बढ़े' इस भावसे प्रार्थना करके राजा सुनन्द दीपदान करते थे। ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर वे पुनः आकाशदीप देते थे। उनका प्रातःकाल स्नान और भगवान् विष्णुकी पूजाका क्रम नियमपूर्वक चलता रहा। मासकी समाप्तिपर उन्होंने व्रतका उद्यापन करके आकाशदीपके नियमको भी समाप्त किया और ब्राह्मणोंको भोजन कराकर इस विष्णुव्रतकी पूर्ति की। इस पुण्यके प्रभावसे राजाने इस लोकमें स्त्री, पुत्र, पौत्र और स्वजनोंके साथ लाख वर्षोंतक पार्थिव भोगोंका उपभोग किया और अन्तमें स्त्रियोंसहित सुन्दर विमानपर आरूढ़ हो चार भुजाधारी, शंख, चक्र, गदा आदि आयुधोंसे सुशोभित, पीताम्बरधारी विष्णुका-सा दिव्य शरीर पाकर मोक्षका आश्रय लिया। वे विष्णुलोकमें भगवान् विष्णुके ही समान सुखपूर्वक रहने लगे। अतः कार्तिकमासमें दुर्लभ मनुष्य-जन्मको पाकर भगवान् विष्णुको प्रिय लगनेवाले आकाशदीपका विधिपूर्वक दान देना चाहिये। जो संसारमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये आकाशदीप देते हैं, वे कभी अत्यन्त क्रूर मुखवाले यमराजका दर्शन नहीं करते।

एकादशीसे, तुलाराशिके सूर्यसे अथवा पूर्णिमासे लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये आकाशदीप प्रारम्भ करना चाहिये।

नमः पितृभ्यः प्रेतेभ्यो नमो धर्माय विष्णवे।
नमो यमाय रुद्राय कान्तारपतये नमः॥

'पितरोंको नमस्कार है, प्रेतोंको नमस्कार है, धर्मस्वरूप विष्णुको नमस्कार है, यमराजको नमस्कार है तथा दुर्गम पथमें रक्षा करनेवाले भगवान् रुद्रको नमस्कार है।'

इस मन्त्रसे जो मनुष्य पितरोंके लिये आकाशमें दीपदान करते हैं, उनके वे पितर नरकमें हों तो भी उत्तम गतिको प्राप्त होते हैं। जो देवालयमें, नदीके किनारे, सड़कपर तथा नींद लेनेके स्थानमें दीप देता है, उसे सर्वतोमुखी लक्ष्मी प्राप्त होती हैं। जो

ब्राह्मण या अन्य जातिके मन्दिरमें दीपक जलाता है, वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो कीट और काँटोंसे भरी हुई दुर्गम एवं ऊँची-नीची भूमिपर दीपदान करता है, वह नरकमें नहीं पड़ता है। पूर्वकालमें राजा धर्मनन्दनने आकाशदीपदानके प्रभावसे श्रेष्ठ विमानपर आरूढ़ हो विष्णुलोकको प्रस्थान किया। जो कार्तिकमासमें हरिबोधिनी एकादशीको भगवान् विष्णुके आगे कपूरका दीपक जलाता है, उसके कुलमें उत्पन्न हुए सभी मनुष्य भगवान् विष्णुके प्रिय भक्त होते और अन्तमें मोक्ष प्राप्त करते हैं। पूर्वकालमें कोई गोप अमावास्या तिथिको भगवान् विष्णुके मन्दिरमें दीपक जलाकर तथा बार-बार जय-जयका उच्चारण करके राजराजेश्वर हो गया था।

❑❑

कार्तिकमें तुलसी-वृक्षके आरोपण और पूजन आदिकी महिमा

ब्रह्माजी कहते हैं—कार्तिकमासमें जो विष्णुभक्त पुरुष प्रातःकाल स्नान करके पवित्र हो कोमल तुलसीदलसे भगवान् दामोदरकी पूजा करता है, वह निश्चय ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है। जो भक्तिसे रहित है, वह यदि सुवर्ण आदिसे भगवान्‌की पूजा करे तो भी वे उसकी पूजा ग्रहण नहीं करते। सभी वर्णोंके लिये भक्ति ही सबसे उत्कृष्ट मानी गयी है। भक्तिहीन कर्म भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला नहीं होता। यदि तुलसीके आधे पत्तेसे भी प्रतिदिन भक्तिपूर्वक भगवान्‌की पूजा की जाय तो भी वे स्वयं आकर दर्शन देते हैं। पूर्वकालमें भक्त विष्णुदास भक्तिपूर्वक तुलसी-पूजनसे शीघ्र ही विष्णुधामको चला गया और राजा चोल उसकी तुलनामें गौण हो गये। अब तुलसीका माहात्म्य सुनो, वह पापका नाश और पुण्यकी वृद्धि करनेवाली है। अपनी लगायी हुई तुलसी जितना ही अपने मूलका विस्तार करती है, उतने ही सहस्र युगोंतक

मनुष्य ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठित होता है। यदि कोई तुलसीसंयुक्त जलमें स्नान करता है तो वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें आनन्दका अनुभव करता है। महामुने! जो लगानेके लिये तुलसीका संग्रह करता और लगाकर तुलसीका वन तैयार कर देता है, वह उतनेसे ही पापमुक्त हो ब्रह्मभावको प्राप्त होता है। जिसके घरमें तुलसीका बगीचा विद्यमान है, उसका वह घर तीर्थके समान है, वहाँ यमराजके दूत नहीं जाते। तुलसीवन सब पापोंको नष्ट करनेवाला, पुण्यमय तथा अभीष्ट कामनाओंको देनेवाला है। जो श्रेष्ठ मानव तुलसीका बगीचा लगाते हैं, वे यमराजको नहीं देखते। जो मनुष्य तुलसीकाष्ठसंयुक्त गन्ध धारण करता है, क्रियमाण पाप उसके शरीरका स्पर्श नहीं करता। जहाँ तुलसीवनकी छाया होती है, वहीं पितरोंकी तृप्तिके लिये श्राद्ध करना चाहिये। जिसके मुखमें, कानमें और मस्तकपर तुलसीका पत्ता दिखायी देता है, उसके ऊपर यमराज भी दृष्टि नहीं डाल सकते; फिर दूतोंकी तो बात ही क्या है। जो प्रतिदिन आदरपूर्वक तुलसीकी महिमा सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो ब्रह्मलोकको जाता है।

पूर्वकालकी बात है, काश्मीर देशमें हरिमेधा और सुमेधा नामक दो ब्राह्मण थे, जो भगवान् विष्णुकी भक्तिमें संलग्न रहते थे। उनके हृदयमें सम्पूर्ण प्राणियोंके प्रति दया थी। वे सब तत्त्वोंका यथार्थ मर्म समझनेवाले थे। किसी समय वे दोनों श्रेष्ठ ब्राह्मण तीर्थयात्राके लिये चले। जाते-जाते किसी दुर्गम वनमें वे परिश्रमसे व्याकुल हो गये; वहाँ उन्होंने एक स्थानपर तुलसीका वन देखा। उनमेंसे सुमेधाने वह तुलसीका महान् वन देखकर उसकी परिक्रमा की और भक्तिपूर्वक प्रणाम किया। यह देख हरिमेधाने तुलसीका माहात्म्य और फल जाननेके लिये बड़ी प्रसन्नताके साथ बार-बार पूछा—'ब्रह्मन्! अन्य देवताओं, तीर्थों, व्रतों और मुख्य-मुख्य ब्राह्मणोंके रहते हुए तुमने तुलसीवनको क्यों प्रणाम किया है?'

सुमेधा बोला—महाभाग! सुनो। यहाँ धूप सता रही है, इसलिये हमलोग उस बरगदके समीप चलें। उसकी छायामें बैठकर मैं यथार्थरूपसे सब बात बताऊँगा।

वहाँ विश्राम करके सुमेधाने हरिमेधासे कहा—विप्रवर! पूर्वकालमें दुर्वासाके शापसे जब इन्द्रका ऐश्वर्य छिन गया था, उस समय ब्रह्मा आदि देवताओं और असुरोंने मिलकर क्षीरसागरका मन्थन किया। उससे ऐरावत हाथी, कल्पवृक्ष, चन्द्रमा, लक्ष्मी, उच्चैःश्रवा घोड़ा, कौस्तुभमणि तथा धन्वन्तरिरूप भगवान् श्रीहरि और दिव्य ओषधियाँ प्रकट हुईं। तदनन्तर अजरता और अमरता प्रदान करनेवाले उस अमृतकलशको दोनों हाथोंमें लिये हुए श्रीविष्णु बड़े हर्षको प्राप्त हुए। उनके नेत्रोंसे आनन्दाश्रुकी कुछ बूँदें उस अमृतके ऊपर गिरीं। उनसे तत्काल ही मण्डलाकार तुलसी उत्पन्न हुईं। इस प्रकार वहाँ प्रकट हुई लक्ष्मी तथा तुलसीको ब्रह्मा आदि देवताओंने श्रीहरिकी सेवामें समर्पित किया और भगवान्‌ने उन्हें ग्रहण कर लिया। तबसे तुलसीजी जगदीश्वर श्रीविष्णुकी अत्यन्त प्रिय करनेवाली हो गयीं। सम्पूर्ण देवता भगवत्प्रिया तुलसीकी श्रीविष्णुके समान ही पूजा करते हैं। भगवान् नारायण संसारके रक्षक हैं और तुलसी उनकी प्रियतमा हैं; इसलिये मैंने उन्हें प्रणाम किया है।

सुमेधा इस प्रकार कह ही रहे थे कि सूर्यके समान अत्यन्त तेजस्वी एक विशाल विमान उनके निकट ही दिखायी दिया। उन दोनोंके आगे ही वह बरगदका वृक्ष गिर पड़ा और उससे दो दिव्य पुरुष निकले जो अपने तेजसे सूर्यके समान सम्पूर्ण दिशाओंको प्रकाशित कर रहे थे। उन दोनोंने हरिमेधा और सुमेधाको प्रणाम किया। उन्हें देखकर वे दोनों ब्राह्मण भयसे विह्वल हो गये और आश्चर्यचकित होकर बोले—'आप दोनों कौन हैं? देवताओंके समान आपका सर्वमंगलमय स्वरूप है। आप नूतन मन्दारकी

माला धारण किये कोई देवता प्रतीत हो रहे हैं।' उन दोनोंके इस प्रकार पूछनेपर वृक्षसे निकले हुए पुरुष बोले—'विप्रवरो! आप दोनों ही हमारे माता-पिता और गुरु हैं, बन्धु आदि भी आप ही दोनों हैं।'

इतना कहकर उनमेंसे जो ज्येष्ठ था, वह बोला—'मेरा नाम आस्तीक है, मैं देवलोकका निवासी हूँ। एक दिन मैं नन्दनवनमें एक पर्वतपर क्रीडा करनेके लिये गया। वहाँ देवांगनाओंने मेरे साथ इच्छानुसार विहार किया। उस समय युवतियोंके मोती और बेलाके हार तपस्या करते हुए लोमश मुनिके ऊपर गिर पड़े। वह सब देखकर मुनिको बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने सोचा स्त्रियाँ तो परतन्त्र होती हैं, अतः यह उनका अपराध नहीं है। यह दुराचारी आस्तीक ही शाप पानेयोग्य है। ऐसा निश्चय करके उन्होंने मुझे शाप दिया—'अरे, तू ब्रह्मराक्षस होकर बरगदके वृक्षपर निवास कर।' फिर मैंने विनयपूर्वक जब उन्हें प्रसन्न किया तब उन्होंने इस शापसे मुक्त होनेकी अवधि भी निश्चित कर दी। 'जब तू किसी ब्राह्मणके मुखसे भगवान् विष्णुका नाम और तुलसीदलकी महिमा सुनेगा तब तत्काल तुझे उत्तम मोक्ष प्राप्त होगा।' इस प्रकार मुनिका शाप पाकर मैं चिरकालसे अत्यन्त दुःखी हो इस वटवृक्षपर निवास करता था। आज दैववश आप दोनोंके दर्शनसे मुझे निश्चय ही ब्राह्मणके शापसे छुटकारा मिल गया। अब मेरे इस दूसरे साथीकी कथा सुनिये—ये पहले एक श्रेष्ठ मुनि थे और सदा गुरुकी सेवामें ही लगे रहते थे। एक समय गुरुकी आज्ञाका उल्लंघन करके ये ब्रह्मराक्षसभावको प्राप्त हो गये, किंतु आपके प्रसादसे इस समय इनकी भी ब्राह्मणके शापसे मुक्ति हो गयी। आप दोनोंने तीर्थयात्राका फल तो यहीं साध लिया।'

ऐसा कहकर वे दोनों उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बार-बार प्रणाम करके उनकी आज्ञा ले प्रसन्नतापूर्वक दिव्य धामको गये। तत्पश्चात्

वे दोनों श्रेष्ठ मुनि परस्पर पुण्यमयी तुलसीकी प्रशंसा करते हुए तीर्थयात्राके लिये चल दिये। इसलिये भगवान् विष्णुको प्रसन्नता देनेवाले इस कार्तिकमासमें तुलसीकी पूजा अवश्य करनी चाहिये।

❑❑

त्रयोदशीसे लेकर दीपावलीतकके उत्सवकृत्यका वर्णन

ब्रह्माजी कहते हैं—कार्तिक कृष्णा त्रयोदशीको प्रातःकाल दन्तधावन करके स्नान करे और त्रिरात्रिव्रतका नियम लेकर भगवान् गोविन्दके भजनमें तत्पर रहे तथा इस व्रतके अन्तमें गोवर्द्धनोत्सव मनावे। त्रयोदशी तीन मुहूर्तसे अधिक हो तो वह इस व्रतमें ग्राह्य है; परतिथिसे वेध होना दोषकी बात नहीं है। कार्तिकके कृष्णपक्षमें त्रयोदशीके प्रदोषकालमें यमराजके लिये दीप और नैवेद्य समर्पित करे तो अपमृत्यु (अकालमृत्यु या दुर्मरण)-का नाश होता है।

एक दिन यमदूतोंने यमराजसे कहा—प्रभो! ऐसे महोत्सवके अवसरपर जिस प्रकार जीव अपने जीवनसे वियुक्त न हो, वह उपाय हमारे आगे वर्णन कीजिये।

यमराजने कहा—कार्तिक कृष्णा त्रयोदशीको प्रतिवर्ष प्रदोषकालमें जो अपने घरके दरवाजेपर निम्नांकित मन्त्रसे उत्तम दीप देता है, वह अपमृत्युको प्राप्त होनेपर भी यहाँ ले आने योग्य नहीं है। वह मन्त्र इस प्रकार है—

मृत्युना पाशदण्डाभ्यां कालेन च मया सह।
त्रयोदश्यां दीपदानात् सूर्यजः प्रीयतामिति॥

'त्रयोदशीको दीपदान करनेसे मृत्यु, पाश, दण्ड, काल और लक्ष्मीके साथ सूर्यनन्दन यम प्रसन्न हों।'

इस मन्त्रसे जो अपने द्वारपर उत्सवमें दीपदान करता है, उसे अपमृत्युका भय नहीं होता। दीपावलीके पहलेकी चतुर्दशीको तेलमात्रमें लक्ष्मी और जलमात्रमें गंगा निवास करती हैं। जो उस दिन प्रातःकाल

स्नान करता है, वह यमलोक नहीं देखता। नरकभयका नाश करनेके लिये स्नानके बीचमें अपामार्ग (चिच्चिड़ा)-को मस्तकपर घुमावे। तीन बार मन्त्र पढ़कर तीन ही बार घुमाना चाहिये। मन्त्र इस प्रकार है—

सीतालोष्ठसमायुक्त सकण्टकदलान्वित।
हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः॥

'जोते हुए खेतके ढेलेसे युक्त और कण्टकविशिष्ट पत्तोंसे सुशोभित अपामार्ग! तुम बार-बार घुमाये जानेपर मेरे पापोंको हर लो।'

ऐसा कहकर अपने सिरपर अपामार्ग घुमावे। स्नान करके भीगे वस्त्रसे मृत्युके पुत्ररूप दो कुत्तोंको दीपदान दे। उस समय यह मन्त्र पढ़े—

शुनकौ श्यामशवलौ भ्रातरौ यमसेवकौ।
तुष्टौ स्यातां चतुर्दश्यां दीपदानेन मृत्युजौ॥

'काले और चितकबरे रंगके दो श्वान जो मृत्युके पुत्र, यमराजके सेवक तथा परस्पर भाई हैं, चतुर्दशीको दीपदान करनेसे मुझपर प्रसन्न हों।'

फिर स्नानांगतर्पण करनेके पश्चात् चौदह यमोंका तर्पण करे, जिनके नाम-मन्त्र इस प्रकार हैं—

यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च।
वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च॥
औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने।
वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय ते नमः॥

ये चौदह नाम-मन्त्र हैं। इनमेंसे प्रत्येकके अन्तमें नमः पद जोड़कर बोले और एक-एक मन्त्रको तीन-तीन बार कहकर तिलमिश्रित जलकी तीन-तीन अंजलियाँ दे। यमराजका तर्पण

यज्ञोपवीती होकर अर्थात् यज्ञोपवीतको बायें कन्धेपर रखकर अथवा प्राचीनावीती होकर (जनेऊको दाहिने कन्धेपर करके) भी किया जा सकता है। क्योंकि यमराज देवता और पितर दोनों ही पदोंपर स्थित हैं। अतः उनमें उभयरूपता है। जिसके पिता जीवित हों वह भी यम और भीष्मके लिये तर्पण कर सकता है। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशीको यदि अमावास्या भी हो और उसमें स्वाती नक्षत्रका योग हो तो उसी दिन दीपावली होती है। उस दिनसे आरम्भ करके तीन दिनोंतक दीपोत्सव करना चाहिये। क्योंकि एक समय राजा बलिने भगवान्से यह वर माँगा था कि 'मैंने छद्मसे वामनरूप धारण करनेवाले आपको भूमिदान दी है और आपने उसे तीन दिनोंमें तीन पगोंद्वारा नाप लिया है, अतः आजसे लेकर तीन दिनोंतक प्रतिवर्ष पृथ्वीपर मेरा राज्य रहे। उस समय जो मनुष्य पृथ्वीपर दीपदान करें, उनके घरमें आपकी पत्नी लक्ष्मी स्थिरभावसे निवास करें।'

दैत्यराज बलिको भगवान् विष्णुने चतुर्दशीसे लेकर तीन दिनोंतकका राज्य दिया है। इसलिये इन तीन दिनोंमें यहाँ सर्वथा महोत्सव करना चाहिये। चतुर्दशीकी रात्रिमें देवी महारात्रिका प्रादुर्भाव हुआ है, अतः शक्तिपूजापरायण पुरुषोंको चतुर्दशीका उत्सव अवश्य करना चाहिये। भगवान् सूर्यके तुलाराशिमें स्थित होनेपर चतुर्दशी और अमावास्याकी सन्ध्याके समय मनुष्य हाथमें उल्का लेकर पितरोंको मार्ग-प्रदर्शन करावें। कार्तिकमासमें चतुर्दशी आदि तीन तिथियाँ दीपदान आदिके कार्योंमें ग्रहण करनेयोग्य हैं। यदि ये तीन तिथियाँ संगवकालसे पहले ही समाप्त हो जाती हों तो दीपदान आदिके कार्योंमें इन्हें पूर्वतिथिसे युक्त ही ग्रहण करना चाहिये*।

तदनन्तर अमावास्याके प्रातःकाल स्नान करके भक्तिपूर्वक देवताओं और पितरोंकी पूजा और उन्हें प्रणाम करे। फिर दही,

* यदि त्रयोदशी तीन मुहूर्तसे कम हो तो द्वादशी ले लेनी चाहिये।

दूध तथा घी आदिसे पार्वण श्राद्ध करे। इस दिन बालकों और रोगियोंके सिवा और किसीको दिनमें भोजन नहीं करना चाहिये। प्रदोषके समय कल्याणमयी लक्ष्मीदेवीका पूजन करे। उस दिन लक्ष्मीजीका सुख बढ़ानेके लिये जो उनके लिये कमलके फूलोंकी शय्या बनाता है, उसके घरको छोड़कर भगवती लक्ष्मी कहीं नहीं जातीं। जावित्री, लवंग, इलायची और कपूरके साथ गायके दूधको अच्छी तरह पकाकर उसमें आवश्यकताके अनुसार शक्कर देकर लड्डू बना ले तथा उन्हें महालक्ष्मीजीको अर्पण करे। पूजाके पश्चात् लक्ष्मीजीकी स्तुति इस प्रकार करनी चाहिये—'दीपककी ज्योतिमें विराजमान महालक्ष्मी! तुम ज्योतिर्मयी हो। सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, सुवर्ण और तारा आदि सभी ज्योतियोंकी ज्योति हो; तुम्हें नमस्कार है। कार्तिककी दीपावलीके पवित्र दिनको इस भूतलपर और गौओंके गोष्ठमें जो लक्ष्मी शोभा पाती हैं, वे सदा मेरे लिये वरदायिनी हों।'

इस प्रकार स्तुति करनेके पश्चात् प्रदोषकालमें दीपदान करे। अपनी शक्तिके अनुसार देवमन्दिर आदिमें दीपकोंका वृक्ष बनावे। चौराहेपर, श्मशान-भूमिमें, नदीके किनारे, पर्वतपर, घरोंमें, वृक्षोंकी जड़ोंमें, गोशालाओंमें, चबूतरोंपर तथा प्रत्येक गृहमें दीपक जलाकर रखने चाहिये। पहले ब्राह्मणों और भूखे मनुष्योंको भोजन कराकर पीछे स्वयं नूतन वस्त्र और आभूषणसे विभूषित होकर भोजन करना चाहिये। जीवहिंसा, मदिरापान, अगम्यागमन, चोरी और विश्वासघात—ये पाँच नरकके द्वार कहे गये हैं। इनका सदैव त्याग करना चाहिये। तदनन्तर आधी रातके समय नगरकी शोभा देखनेके लिये धीरे-धीरे पैदल चले और उस समयका आनन्दोत्सव देखकर अपने घर लौट आवे।

❑❑

कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा और यमद्वितीयाके कृत्य तथा बहिनके घरमें भोजनका महत्त्व

ब्रह्माजी कहते हैं—तत्पश्चात् प्रतिपद्को आरती करके स्वयं वस्त्राभूषणोंसे सुशोभित हो कथा, गायन, कीर्तन और दान आदिके द्वारा दिनको व्यतीत करे। इस दिन स्त्री और पुरुष सभीको तिलका तेल लगाकर स्नान करना चाहिये। इस प्रतिपदाको जो लोग तैल, स्नान आदि पूर्वक पूजन करेंगे, उनका वह सब कुछ अक्षय होगा। संसारमें प्रतिपद् तिथि प्रसिद्ध है, उसे पूर्वविद्धा होनेपर नहीं ग्रहण करना चाहिये। अमावास्याविद्ध प्रतिपदामें तैलाभ्यंग नहीं करना चाहिये, अन्यथा मनुष्य मृत्युको प्राप्त होता है। यदि दूसरे दिन एक घड़ी भी अविद्धा (अमावास्याके वेधसे रहित) प्रतिपदा हो तो उत्सव आदि कार्योंमें मनीषी पुरुषोंको उसे ही ग्रहण करना चाहिये। दूसरे दिन यदि थोड़ी भी प्रतिपदा न हो तो पूर्वविद्धा तिथि ही ग्रहण करनी चाहिये, उस दशामें वह दोषकारक नहीं होती है। जो मनुष्य उस तिथिमें या उस शुभ दिनमें जिस रूपसे स्थित होता है उसी स्थितिमें वह एक वर्षतक रहता है। इसलिये यदि सुन्दर, दिव्य एवं उत्तम भोगोंको भोगनेकी इच्छा हो तो उस दिन मंगलमय उत्सव अवश्य करे। प्रातःकाल गोवर्द्धनकी पूजा करे। उस समय गौओंको विभूषित करना चाहिये और उनसे बोझ ढोने या दूहनेका काम नहीं लेना चाहिये। गोवर्द्धनपूजनके समय इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।
विष्णुबाहुकृतोच्छ्राय गवां कोटिप्रदो भव॥
या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता।
घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु॥
अग्रतः सन्तु मे गावो गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

'पृथ्वीको धारण करनेवाले गोवर्द्धन! आप गोकुलकी रक्षा करनेवाले हैं। भगवान् विष्णुने अपनी भुजाओंसे आपको ऊँचे उठाया था। आप मुझे कोटि गोदान देनेवाले हों। लोकपालोंकी जो लक्ष्मी यहाँ धेनुरूपसे विराज रही है और यज्ञके लिये घृतका भार वहन करती है, वह मेरे पापोंको दूर करे। गायें मेरे आगे हों, गायें मेरे पीछे हों, गायें मेरे हृदयमें हों और मैं सदा गौओंके मध्यमें निवास करूँ।'

इस प्रकार गोवर्द्धन-पूजा करके उत्तमभावसे देवताओं, सत्पुरुषों तथा साधारण मनुष्योंको सन्तुष्ट करे। अन्य लोगोंको अन्न-पान देकर और विद्वानोंको संकल्पपूर्वक वस्त्र, ताम्बूल आदिके द्वारा प्रसन्न करे। कार्तिक शुक्लपक्षकी यह प्रतिपदा तिथि वैष्णवी कही गयी है। जो लोग सब प्रकारसे सब मनुष्योंको आनन्द देनेवाले दीपोत्सव तथा शुभके हेतुभूत बलिराजका पूजन करते हैं, वे दान, उपभोग, सुख और बुद्धिसे सम्पन्न कुलोंका हर्ष प्राप्त करते हैं और उनका सम्पूर्ण वर्ष आनन्दसे व्यतीत होता है। प्रतिपदा और अमावास्याके योगमें गौओंकी क्रीड़ा उत्तम मानी गयी है। उस दिन गौओंको भोजन आदिसे भलीभाँति पूजित करके अलंकारोंसे विभूषित करे और गाने-बजाने आदिके साथ सबको नगरसे बाहर ले जाय। वहाँ ले जाकर सबकी आरती उतारे। ऐसा करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है।

अब तुम मृत्युनाशक यमद्वितीयाव्रतका वर्णन सुनो। द्वितीया तिथिको ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर मन-ही-मन अपने हितकी बातोंका चिन्तन करे। तदनन्तर शौच आदिसे निवृत्त हो दन्तधावनपूर्वक प्रातःकाल स्नान करे। फिर श्वेत वस्त्र, श्वेत पुष्पोंकी माला और श्वेत चन्दन धारण करे। नित्यकर्म पूरा करके प्रसन्नतापूर्वक औदुम्बर (गूलर)-के वृक्षके नीचे जाय। वहाँ उत्तम मण्डल बनाकर उसमें अष्टदल कमल बनावे। तत्पश्चात् उस औदुम्बर-मण्डलमें ब्रह्मा,

विष्णु, शिव तथा वीणापुस्तकधारिणी वरदायिनी सरस्वतीदेवीका स्वस्थचित्तसे आवाहन एवं पूजन करे। चन्दन, अगरु, कस्तूरी, कुंकुम, पुष्प, धूप, नैवेद्य एवं नारियल आदिके द्वारा पूजन करके अपमृत्युनिवारणके लिये वेदवेत्ता ब्राह्मणको अलंकारसहित दूध देनेवाली सवत्सा गाय दान करे। उस समय ब्राह्मणसे इस प्रकार कहे—'हे विप्र! मैं अपमृत्युका निवारण करनेके लिये संसारसमुद्रसे तारनेवाली यह सीधी-सादी गाय आपको दे रहा हूँ।' यदि गाय न मिल सके तो ब्राह्मणको भक्तिपूर्वक एक जोड़ा जूता ही अर्पण करे। तदनन्तर पूजा समाप्त करके भगवान् विष्णुमें भक्ति रखते हुए अपने कुटुम्बके श्रेष्ठ वयोवृद्ध पुरुषोंको श्रद्धाभक्तिके साथ प्रणाम करे। फिर अनेक प्रकारके सुन्दर फलोंद्वारा अपने स्वजनोंको तृप्त करे। उसके बाद अपनी सहोदरा बड़ी भगिनीके घर जाय और उसे भी भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हुए कहे—'सौभाग्यवती बहिन! तुम कल्याणमयी हो। मैं अपने कल्याणके लिये तुम्हारे चरणारविन्दोंमें प्रणाम करनेके उद्देश्यसे तुम्हारे घर आया हूँ।' ऐसा कहकर बहिनको भगवद्बुद्धिसे प्रणाम करे। तब बहिन भाईसे यह उत्तम वचन कहे—'भैया! आज मैं तुम्हें पाकर धन्य हो गयी। आज सचमुच मैं मंगलमयी हूँ। कुलदीपक! आज अपनी आयुवृद्धिके लिये तुम्हें मेरे घरमें भोजन करना चाहिये। मेरे सहोदर भैया! पूर्वकालमें इसी कार्तिक शुक्ला द्वितीयाको यमुनाजीने अपने भाई यमराजको अपने ही घरपर भोजन कराया और उनका सत्कार किया था। उस दिन कर्मपाशमें बँधे हुए नारकीय पापियोंको भी यमराज छोड़ देते हैं, जिससे वे अपनी इच्छाके अनुसार घूमते हैं। इस तिथिमें विद्वान् पुरुष भी प्रायः अपने घर भोजन नहीं करते।' बहिनके ऐसा कहनेपर व्रतवान् पुरुष वस्त्र और आभूषणोंसे हर्षपूर्वक उसका पूजन करे। बड़ी बहिनको प्रणाम करके उसका आशीर्वाद ले। तत्पश्चात् सभी बहिनोंको वस्त्र और आभूषण देकर सन्तुष्ट

करे। अपनी सगी बहिन न होनेपर चाचाकी पुत्री अथवा पिताकी बहिनके घर जाकर आदरपूर्वक भोजन करे।

नारद! जो इस प्रकार यमद्वितीयाका व्रत करता है, वह अपमृत्युसे मुक्त हो पुत्र-पौत्र आदिसे सम्पन्न होता है और अन्तमें मोक्ष पाता है। ये सभी व्रत और नाना प्रकारके दान गृहस्थके लिये ही योग्य हैं। व्रतमें लगा हुआ जो पुरुष यमद्वितीयाकी इस कथाको सुनता है, उसके सब पापोंका नाश हो जाता है, ऐसा माधवका कथन है। कार्तिक शुक्लकी द्वितीयाको यमुनाजीमें स्नान करनेवाला पुरुष यमलोकका दर्शन नहीं करता। जिन्होंने यमद्वितीयाके दिन अपनी सौभाग्यवती बहिनोंको वस्त्रदान आदिसे सन्तुष्ट किया है, उन्हें एक वर्षतक कलह अथवा शत्रुभयका सामना नहीं करना पड़ता। उस तिथिको यमुनाजीने बहिनके स्नेहसे यमराजदेवको भोजन कराया था। इसलिये उस दिन जो बहिनके हाथसे भोजन करता है, वह धन एवं उत्तम सम्पदाको प्राप्त होता है। राजाओंने जिन कैदियोंको कारागृहमें डाल रखा हो, उन्हें यमद्वितीयाके दिन बहिनके घर भोजन करनेके लिये अवश्य भेजना चाहिये। वह भी न हो तो मौसी अथवा मामाकी पुत्रीको बहिन माने अथवा गोत्र या कुटुम्बके सम्बन्धसे किसीके साथ बहिनका नाता जोड़ ले। सबके अभावमें किसी भी समान वर्णकी स्त्रीको बहिन मान ले और उसीका आदर करे। वह भी न मिल सके तो किसी गाय या नदी आदिको ही बहिन बना ले। उसके भी अभावमें किसी जंगल, झाड़ीको ही बहिन मानकर वहाँ भोजन करे। यमद्वितीयाको कभी भी अपने घर भोजन न करे। भाईके भोजनमें वही द्वितीया ग्राह्य है, जो दोपहरके बादतक मौजूद रहे।

❑❑

आँवलेके वृक्षकी उत्पत्ति और उसका माहात्म्य

सूतजी कहते हैं—कार्तिकके शुक्लपक्षकी चतुर्दशीको आँवलेका पूजन करे। आँवलेका महान् वृक्ष सब पापोंका नाश करनेवाला है। उक्त चतुर्दशीका नाम वैकुण्ठचतुर्दशी है। उस दिन आँवलेकी छायामें जाकर मनुष्य राधासहित देवेश्वर श्रीहरिका पूजन करे। तदनन्तर आँवलेकी एक सौ आठ प्रदक्षिणा करे। फिर साष्टांग प्रणाम करके परमेश्वर श्यामसुन्दर श्रीकृष्णकी प्रार्थना करे। आँवलेकी छायामें बैठकर इस कथाको सुने, फिर ब्राह्मणोंको भोजन करावे और यथाशक्ति दक्षिणा दे। ब्राह्मणोंके सन्तुष्ट होनेपर मोक्षदायक श्रीहरि भी प्रसन्न होते हैं।

पूर्वकालमें जब सारा जगत् एकार्णवके जलमें निमग्न हो गया था, समस्त चराचर प्राणी नष्ट हो गये थे, उस समय देवाधिदेव सनातन परमात्मा ब्रह्माजी अविनाशी परब्रह्मका जप करने लगे थे। ब्रह्मका जप करते-करते उनके आगे श्वास निकला। साथ ही भगवद्दर्शनके अनुरागवश उनके नेत्रोंसे जल निकल आया। प्रेमके आँसुओंसे परिपूर्ण वह जलकी बूँद पृथ्वीपर गिर पड़ी। उसीसे आँवलेका महान् वृक्ष उत्पन्न हुआ, जिसमें बहुत-सी शाखाएँ और उपशाखाएँ निकली थीं। वह फलोंके भारसे लदा हुआ था। सब वृक्षोंमें सबसे पहले आँवला ही प्रकट हुआ, इसलिये उसे 'आदिरोह' कहा गया। ब्रह्माने पहले आँवलेको उत्पन्न किया। उसके बाद समस्त प्रजाकी सृष्टि की। जब देवता आदिकी भी सृष्टि हो गयी तब वे उस स्थानपर आये जहाँ भगवान् विष्णुको प्रिय लगनेवाला आँवलेका वृक्ष था। उसे देखकर देवताओंको बड़ा आश्चर्य हुआ। उसी समय आकाशवाणी हुई—'यह आँवलेका वृक्ष सब वृक्षोंसे श्रेष्ठ है; क्योंकि यह भगवान् विष्णुको प्रिय है। इसके स्मरणमात्रसे मनुष्य गोदानका फल प्राप्त करता है। इसके दर्शनसे दुगुना और फल खानेसे तिगुना पुण्य

होता है। इसलिये सर्वथा प्रयत्न करके आँवलेके वृक्षका सेवन करना चाहिये। क्योंकि वह भगवान् विष्णुको परम प्रिय एवं सब पापोंका नाश करनेवाला है, अतः समस्त कामनाओंकी सिद्धिके लिये आँवलेके वृक्षका पूजन करना उचित है।'

जो मनुष्य कार्तिकमें आँवलेके वनमें भगवान् श्रीहरिकी पूजा तथा आँवलेकी छायामें भोजन करता है, उसका पाप नष्ट हो जाता है। आँवलेकी छायामें वह जो भी पुण्य करता है, वह कोटिगुना हो जाता है। प्राचीन कालकी बात है, कावेरीके उत्तर तटपर देवशर्मा नामसे विख्यात एक श्रेष्ठ ब्राह्मण थे, जो वेद-वेदांगोंके पारंगत विद्वान् थे। उनके एक पुत्र हुआ जो बड़ा दुराचारी निकला। पिताने उसे हितकी बात बताते हुए कहा—'बेटा! इस समय कार्तिकका महीना है जो भगवान् विष्णुको बहुत ही प्रिय है। तुम इसमें स्नान, दान, व्रत और नियमोंका पालन करो; तुलसीके फूलसहित भगवान् विष्णुकी पूजा करो। भगवान्के लिये दीपदान, नमस्कार तथा प्रदक्षिणा करो।' पिताकी यह बात सुनकर वह दुष्टात्मा पुत्र क्रोधसे जल उठा, उसके ओष्ठ फड़कने लगे और उसने पिताकी निन्दा करते हुए कहा—'तात! मैं कार्तिकमें पुण्य-संग्रह नहीं करूँगा।' पुत्रका यह उद्दण्डतापूर्ण वचन सुनकर देवशर्माने क्रोधपूर्वक कहा—'ओ दुर्बुद्धि! तू वृक्षके खोखलेमें चूहा हो जा।' इस शापके भयसे डरे हुए पुत्रने पिताको नमस्कार करके पूछा—'पूज्यवर! उस घृणित योनिसे मेरी मुक्ति कैसे होगी, यह बताइये।' इस प्रकार पुत्रके द्वारा प्रसन्न किये जानेपर ब्राह्मणने शापनिवृत्तिका कारण बताया—'जब तुम भगवान्को प्रिय लगनेवाले कार्तिकव्रतका पवित्र माहात्म्य सुनोगे, उस समय उस कथाके श्रवणमात्रसे तुम्हारी मुक्ति हो जायगी।' पिताके ऐसा कहनेपर वह उसी क्षण चूहा हो गया और कई वर्षोंतक सघन

वनमें निवास करता रहा। एक दिन कार्तिकमासमें विश्वामित्रजी अपने शिष्योंके साथ उधर आ निकले तथा नदीमें स्नान करके भगवान्‌की पूजा करनेके पश्चात् आँवलेकी छायामें बैठे। वहाँ बैठकर वे अपने शिष्योंको कार्तिकमासका माहात्म्य सुनाने लगे। उसी समय कोई दुराचारी व्याध शिकार खेलता हुआ वहाँ आया। वह प्राणियोंकी हत्या करनेवाला तो था ही, ऋषियोंको देखकर उन्हें भी मार डालनेकी इच्छा करने लगा। परंतु उन महात्माओंके दर्शनसे उसके भीतर सुबुद्धि जाग उठी। उसने ब्राह्मणोंको नमस्कार करके कहा—'आपलोग यहाँ क्या करते हैं?' उसके ऐसा पूछनेपर विश्वामित्र बोले—'कार्तिकमास सब महीनोंमें श्रेष्ठ बताया जाता है। उसमें जो कर्म किया जाता है वह बरगदके बीजकी भाँति बढ़ता है। जो कार्तिकमासमें स्नान, दान और पूजन करके ब्राह्मण-भोजन कराता है, उसका वह पुण्य अक्षय फल देनेवाला होता है।'

व्याधकी प्रेरणासे विश्वामित्रजीके कहे हुए इस धर्मको सुनकर वह शापभ्रष्ट ब्राह्मणकुमार चूहेका शरीर छोड़कर तत्काल दिव्य देहसे युक्त हो गया और विश्वामित्रको प्रणाम करके अपना वृत्तान्त निवेदन कर ऋषिकी आज्ञा ले विमानपर बैठकर स्वर्गको चला गया। इससे विश्वामित्र और व्याध दोनोंको बड़ा विस्मय हुआ। व्याध भी कार्तिक-व्रतका पालन करके भगवान् विष्णुके धाममें गया। इसलिये कार्तिकमें सब प्रकारसे प्रयत्न करके आँवलेकी छायामें बैठकर भगवान् श्रीकृष्णके सम्मुख कथा-श्रवण करे। जो ब्राह्मण कार्तिकमासमें आँवले और तुलसीकी माला धारण करता है, उसे अनन्त पुण्यकी प्राप्ति होती है। जो मनुष्य आँवलेकी छायामें बैठकर दीपमाला समर्पित करता है, उसको अनन्त पुण्य प्राप्त होता है। विशेषतः तुलसी-वृक्षके नीचे श्रीराधा और श्यामसुन्दर भगवान् श्रीकृष्णकी पूजा करनी चाहिये।

तुलसीके अभावमें यह शुभ पूजा आँवलेके नीचे करनी चाहिये। जो आँवलेकी छायाके नीचे कार्तिकमें ब्राह्मण-दम्पतिको एक बार भी भोजन देकर स्वयं भी भोजन करता है, वह अन्न-दोषसे मुक्त हो जाता है। लक्ष्मी-प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाला मनुष्य सदा आँवलोंसे स्नान करे। विशेषत: एकादशी तिथिको आँवलेसे स्नान करनेपर भगवान् विष्णु सन्तुष्ट होते हैं। नवमी, अमावास्या, सप्तमी, संक्रान्ति-दिन, रविवार, चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहणके दिन आँवलेसे स्नान नहीं करना चाहिये*। जो मनुष्य आँवलेकी छायामें बैठकर पिण्डदान करता है, उसके पितर भगवान् विष्णुके प्रसादसे मोक्षको प्राप्त होते हैं। तीर्थ या घरमें जहाँ-जहाँ मनुष्य आँवलेसे स्नान करता है, वहाँ-वहाँ भगवान् विष्णु स्थित होते हैं। जिसके शरीरकी हड्डियाँ आँवलेके स्नानसे धोयी जाती हैं, वह फिर गर्भमें वास नहीं करता। जिनके सिरके बाल आँवलामिश्रित जलसे रँगे जाते हैं, वे मनुष्य कलियुगके दोषोंका नाश करके भगवान् विष्णुको प्राप्त होते हैं। जिस घरमें सदा आँवला रखा रहता है, वहाँ भूत, प्रेत, कूष्माण्ड और राक्षस नहीं जाते। जो कार्तिकमें आँवलेकी छायामें बैठकर भोजन करता है, उसके एक वर्षतक अन्न-संसर्गसे उत्पन्न हुए पापका नाश हो जाता है।

❑❑

* नवम्यां दर्शे सप्तम्यां संक्रान्तौ रविवासरे। चन्द्रसूर्योपरागे च स्नानमामलकैस्त्यजेत्॥
(स्क० पु०, वै० का० मा० १२। ७५)

गुणवतीका कार्तिकव्रतके पुण्यसे सत्यभामाके रूपमें अवतार तथा भगवान्‌के द्वारा शंखासुरका वध और वेदोंका उद्धार

सूतजी कहते हैं—एक समय हर्षोल्लाससे प्रसन्नमुखवाली देवी सत्यभामाने भगवान् श्रीकृष्णसे कहा—'भगवन्! मैं धन्य हूँ, कृतकृत्य हूँ और मेरा जीवन सफल है। प्रभो! मैंने पूर्वजन्ममें कौन-सा दान, व्रत अथवा तप किया है, जिससे मर्त्यलोकमें जन्म लेकर भी मैं आपकी अर्द्धांगिनी हुई हूँ? जन्मान्तरमें मेरा कैसा स्वभाव था, मैं कौन थी और किसकी पुत्री थी जो इस जन्ममें आपकी प्रियतमा पत्नी हुई? ये सब बातें मुझे बताइये।'

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—प्रिये! सत्ययुगके अन्तमें हरद्वारमें एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते थे, जिनका नाम देवशर्मा था। वे अत्रिकुलमें उत्पन्न हुए थे और वेद-वेदांगोंके पारंगत विद्वान् थे। उनकी अवस्था बहुत अधिक हो चली थी, किंतु उनके कोई पुत्र नहीं हुआ। केवल एक कन्या थी, जिसका नाम गुणवती था। देवशर्माने चन्द्र नामक अपने शिष्यको ही अपनी पुत्री ब्याह दी और उसीको पुत्रकी भाँति माना। चन्द्र जितेन्द्रिय तथा आज्ञाकारी था; वह देवशर्माको पिताके ही समान मानकर उनकी सेवा करता था। एक दिन वे दोनों कुश लानेके लिये वनमें गये; वहाँ यमराजके समान आकारवाले किसी विकराल राक्षसने उन दोनोंको मार डाला। वे दोनों अपने-अपने पुण्यके प्रभावसे भगवान् विष्णुके लोकमें गये। उनके मारे जानेका समाचार सुनकर गुणवती पिता और पतिके वियोगदु:खसे पीड़ित होकर करुणस्वरमें विलाप करने लगी। उसने घरका सारा सामान बेचकर अपनी शक्तिके अनुसार उन दोनोंका पारलौकिक कर्म सम्पन्न किया। उसके बाद वह उसी नगरमें निवास करने लगी। जीवित रहनेपर भी गुणवती संसारके लिये मर चुकी थी। उसने होश सँभालनेके बादसे

मृत्युपर्यन्त दो व्रतोंका विधिपूर्वक पालन किया—एक तो एकादशीका उपवास और दूसरा कार्तिकमासका भलीभाँति सेवन। इस प्रकार गुणवती प्रतिवर्ष कार्तिकका व्रत किया करती थी। एक समय, जबकि वह रुग्णा थी, उसके सारे अंग दुर्बल हो गये थे और ज्वरसे वह बहुत पीड़ित थी, किसी तरह धीरे-धीरे चलकर गंगाजीमें स्नान करनेके लिये गयी। ज्योंही जलके भीतर घुसी, शीतसे पीड़ित हो काँपती हुई गिर पड़ी। उस व्याकुलताकी दशामें ही उसने देखा, आकाशसे विमान उतर रहा है। मृत्युके पश्चात् वह दिव्यरूपसे उस विमानपर बैठकर वैकुण्ठलोकको चली गयी। कार्तिकव्रतके पुण्यसे वह मेरे समीप रहने लगी। तदनन्तर ब्रह्मा आदि देवताओंकी प्रार्थनासे जब मैं इस पृथ्वीपर आया, तब मेरे साथ मेरे समस्त पार्षद भी यहाँ आये। भामिनि! ये सब यदुवंशी मेरे पार्षदगण ही हैं। पूर्वजन्मके देवशर्मा ही तुम्हारे पिता सत्राजित् हुए और वे चन्द्र नामक ब्राह्मण ही इस समय अक्रूर हुए हैं तथा तुम वही कल्याणमयी गुणवती हो। कार्तिकव्रतके पुण्यसे तुम मेरे लिये अधिक प्रसन्नता देनेवाली बन गयी। पूर्वजन्ममें तुमने जो मेरे मन्दिरके द्वारपर तुलसीकी वाटिका लगा रखी थी, उसीका फल है कि इस समय तुम्हारे आँगनमें यह कल्पवृक्ष शोभा पा रहा है। तुमने जो मृत्युपर्यन्त कार्तिकव्रतका अनुष्ठान किया है, उसके प्रभावसे तुम्हारा मुझसे कभी भी वियोग नहीं होगा।

प्रिये! पूर्वकालमें राजा पृथु और महर्षि नारदका इस विषयमें जो संवाद हुआ है, उसको सुनो। पृथुके पूछनेपर नारदजीने इस प्रकार कहना आरम्भ किया। प्राचीनकालमें शंख नामक एक असुर था, जो समुद्रसे उत्पन्न हुआ था। उसने इन्द्र आदि समस्त लोकपालोंके अधिकार छीन लिये। देवता मेरुगिरिकी दुर्गम कन्दराओंमें छिपकर रहने लगे। उस समय दैत्यने विचार किया—'यद्यपि मैंने

देवताओंको जीत लिया है तथापि वे बलवान् दिखायी देते हैं। अब इस विषयमें मुझे क्या करना चाहिये। यह बात तो मुझे अच्छी तरह मालूम है कि देवता वेदमन्त्रोंके बलसे ही प्रबल प्रतीत होते हैं। अत: मैं वेदोंका ही अपहरण करूँगा। इससे सब देवता निर्बल हो जायँगे।' ऐसा निश्चय करके वह दैत्य ब्रह्माजीके सत्यलोकसे शीघ्र ही वेदोंको हर लाया। उसके द्वारा ले जाये जाते हुए वेद भयसे उसके चंगुलसे निकल भागे और यज्ञ, मन्त्र एवं बीजोंके साथ जलमें समा गये। शंखासुर उन्हें ढूँढ़ता हुआ समुद्रके भीतर घूमने लगा, किंतु उसने कहीं भी एक जगह वेदमन्त्रोंको नहीं देखा। इधर देवताओंने भगवान् विष्णुके पास जाकर उनकी स्तुति की। तब भगवान् जगे और इस प्रकार बोले—'देवताओ! मैं तुम्हारे गीत, वाद्य आदि मंगल साधनोंसे प्रसन्न होकर तुम्हें वर देनेके लिये उद्यत हूँ। कार्तिक शुक्लपक्षकी एकादशीको तुमने मुझे जगाया है, इसलिये यह तिथि मेरे लिये अत्यन्त प्रीतिदायिनी और माननीय है। शंखासुरके द्वारा हरे गये सम्पूर्ण वेद जलमें स्थित हैं। मैं सागरपुत्र शंखका वध करके उन वेदोंको अभी लाये देता हूँ। इस कार्तिकमासमें जो श्रेष्ठ मनुष्य प्रात:काल स्नान करते हैं, वे सब यज्ञके अवभृथ-स्नानद्वारा भलीभाँति नहा लेते हैं। आजसे मैं भी कार्तिकमें जलके भीतर निवास करूँगा। तुम सब देवता भी मुनीश्वरोंसहित मेरे साथ जलमें आओ।' ऐसा कहकर मछलीके समान रूप धारण करके भगवान् विष्णु आकाशसे जलमें गिरे। फिर, शंखासुरको मारकर भगवान् विष्णु बदरीवनमें आ गये और वहाँ उन्होंने सम्पूर्ण ऋषियोंको बुलाकर इस प्रकार आदेश दिया—'मुनीश्वरो! तुम जलके भीतर बिखरे हुए वेदमन्त्रोंकी खोज करो और जितनी जल्दी हो सके उन्हें सागरके जलसे बाहर निकाल लाओ। तबतक मैं देवताओंके साथ प्रयागमें ठहरता हूँ।'

तब उन तपोबलसम्पन्न महर्षियोंने यज्ञ और बीजोंसहित सम्पूर्ण

वेदमन्त्रोंका उद्धार किया। उनमेंसे जितने मन्त्र जिस ऋषिने उपलब्ध किये, वही उन मन्त्रोंका उस दिनसे ऋषि माना जाने लगा। तदनन्तर सब ऋषि एकत्र होकर प्रयागमें गये। वहाँ उन्होंने ब्रह्माजीसहित भगवान् विष्णुको उपलब्ध हुए सभी वेदमन्त्र समर्पित कर दिये। सब वेदोंको पाकर ब्रह्माजी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने देवताओं और ऋषियोंके साथ प्रयागमें अश्वमेध यज्ञ किया। यज्ञ समाप्त होनेपर सब देवताओंने भगवान्‌से यह निवेदन किया—

देवता बोले—देवाधिदेव जगन्नाथ! इस स्थानपर ब्रह्माजीने खोये हुए वेदोंको पुनः प्राप्त किया है और हमने भी यहाँ आपके प्रसादसे यज्ञभाग पाये हैं। अतः यह स्थान पृथ्वीपर सबसे श्रेष्ठ, पुण्यकी वृद्धि करनेवाला एवं भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाला हो। साथ ही यह समय भी महापुण्यमय और ब्रह्मघाती आदि महापापियोंकी भी शुद्धि करनेवाला हो तथा यह स्थान यहाँ दिये हुए दानको अक्षय बना देनेवाला भी हो, यह वर दीजिये।

भगवान् विष्णुने कहा—देवताओ! तुमने जो कुछ कहा है, वह मुझे भी स्वीकार है; तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो। आजसे यह स्थान ब्रह्मक्षेत्रके नामसे प्रसिद्ध होगा। सूर्यवंशमें उत्पन्न राजा भगीरथ यहाँ गंगाको ले आयेंगे और वह यहाँ सूर्यकन्या यमुनासे मिलेंगी। ब्रह्माजी और तुम सब देवता मेरे साथ यहाँ निवास करो। आजसे यह तीर्थ तीर्थराजके नामसे विख्यात होगा। तीर्थराजके दर्शनसे तत्काल सब पाप नष्ट हो जायँगे। सूर्य जब मकर राशिमें स्थित होंगे, उस समय यहाँ स्नान करनेवाले मनुष्योंके सब पापोंका यह तीर्थ नाश करेगा। यह काल भी मनुष्योंके लिये सदा महान् पुण्यफल देनेवाला होगा। माघमें सूर्यके मकर राशिमें स्थित होनेपर यहाँ स्नान करनेसे सालोक्य आदि फल प्राप्त होंगे।

देवाधिदेव भगवान् विष्णु देवताओंसे ऐसा कहकर ब्रह्माजीके साथ वहीं अन्तर्धान हो गये। तत्पश्चात् इन्द्रादि देवता भी अपने

अंशसे प्रयागमें रहते हुए वहाँसे अन्तर्धान हो गये। जो मनुष्य कार्तिकमें तुलसीजीकी जड़के समीप श्रीहरिका पूजन करता है, वह इस लोकमें सम्पूर्ण भोगोंका उपभोग करके अन्तमें वैकुण्ठधामको जाता है।

❑❑

कार्तिकव्रतके पुण्यदानसे एक राक्षसीका उद्धार

नारदजी कहते हैं—कार्तिकके उद्यापनमें तुलसीके मूल प्रदेशमें भगवान् विष्णुकी पूजा की जाती है, क्योंकि वह उन्हें अधिक प्रीति प्रदान करनेवाली मानी गयी है। राजन्! जिसके घरमें तुलसीवन है, वह घर तीर्थस्वरूप है; वहाँ यमराजके दूत नहीं आते। तुलसीका वन सदा सब पापोंका नाश करनेवाला तथा अभीष्ट कामनाओंको देनेवाला है। जो श्रेष्ठ मनुष्य तुलसीका बगीचा लगाते हैं, वे यमराजको नहीं देखते। नर्मदाका दर्शन, गंगाका स्नान और तुलसीवनका संसर्ग—ये तीनों एक समान कहे गये हैं। जो तुलसीकी मंजरीसे संयुक्त होकर प्राणत्याग करता है, वह सैकड़ों पापोंसे युक्त हो तो भी यमराज उसकी ओर नहीं देख सकते। जो मनुष्य आँवलेके फलों और तुलसीके पत्तोंसे मिश्रित जलके द्वारा स्नान करता है, उसे गंगा-स्नान करनेका फल प्राप्त होता है।

पूर्वकालकी बात है, सह्यपर्वतपर करवीरपुरमें धर्मदत्त नामसे विख्यात कोई धर्मज्ञ ब्राह्मण थे। एक दिन कार्तिकमासमें भगवान् विष्णुके समीप जागरण करनेके लिये वे भगवान्के मन्दिरकी ओर चले। उस समय एक पहर रात बाकी थी। भगवान्के पूजनकी सामग्री साथ लिये जाते हुए ब्राह्मणने मार्गमें देखा एक भयंकर राक्षसी आ रही है। उसे देखते ही ब्राह्मण भयसे थर्रा उठे। उनका सारा शरीर काँपने लगा। उन्होंने साहस करके

पूजाकी सामग्री तथा जलसे ही उस राक्षसीके ऊपर प्रहार किया। उन्होंने हरिनामका स्मरण करके तुलसीदलमिश्रित जलसे उसको मारा था, इसलिये उसका सारा पातक नष्ट हो गया। अब उसे अपने पूर्वजन्मके कर्मोंके परिणामस्वरूप प्राप्त हुई दुर्दशाका स्मरण हो आया। उसने ब्राह्मणको दण्डवत् प्रणाम करके इस प्रकार कहा—'ब्रह्मन्! मैं पूर्वजन्मके कर्मोंके फलसे इस दशाको पहुँची हूँ। अब कैसे मुझे उत्तम गतिकी प्राप्ति होगी?'

धर्मदत्तने पूछा—किस कर्मके फलसे तुम इस दशाको पहुँची हो? कहाँकी रहनेवाली हो? तुम्हारा नाम क्या है और आचार-व्यवहार कैसा है? ये सारी बातें मुझे बताओ।

कलहा बोली—ब्रह्मन्! मेरे पूर्वजन्मकी बात है, सौराष्ट्र नगरमें भिक्षु नामके एक ब्राह्मण रहते थे। मैं उन्हींकी पत्नी थी। मेरा नाम कलहा था और मैं बड़े क्रूरस्वभावकी स्त्री थी। मैंने वचनसे भी कभी अपने पतिका भला नहीं किया, उन्हें कभी मीठा भोजन नहीं परोसा। सदा अपने स्वामीको धोखा ही देती रही। मुझे कलह विशेष प्रिय था, इससे मेरे पतिका मन मुझसे सदा उद्विग्न रहा करता था। अन्ततोगत्वा उन्होंने दूसरी स्त्रीसे विवाह करनेका निश्चय कर लिया। तब मैंने विष खाकर अपने प्राण त्याग दिये। फिर यमराजके दूत आये और मुझे बाँधकर पीटते हुए यमलोकमें ले गये। वहाँ यमराजने मुझे देखकर चित्रगुप्तसे पूछा—'चित्रगुप्त! देखो तो सही इसने कैसा कर्म किया है? जैसा इसका कर्म हो, उसके अनुसार यह शुभ या अशुभ प्राप्त करे।'

चित्रगुप्तने कहा—इसका किया हुआ कोई भी शुभ कर्म नहीं है। यह स्वयं मिठाइयाँ उड़ाती थी और अपने स्वामीको उसमेंसे कुछ भी नहीं देती थी। इसने सदा अपने स्वामीसे द्वेष किया है, इसलिये यह चमगादुरी होकर रहे तथा सदा कलहमें

ही इसकी प्रवृत्ति रही है, इसलिये यह विष्ठाभोजी सूकरीकी योनिमें रहे। जिस बरतनमें भोजन बनाया जाता है, उसीमें यह सदा अकेली खाया करती थी। अतः उसके दोषसे यह अपनी ही सन्तानका भक्षण करनेवाली बिल्ली हो। इसने अपने पतिको निमित्त बनाकर आत्मघात किया है, इसलिये यह अत्यन्त निन्दनीय स्त्री प्रेतके शरीरमें भी कुछ कालतक अकेली ही रहे। इसे यमदूतोंके द्वारा निर्जल प्रदेशमें भेज देना चाहिये, वहाँ दीर्घकालतक यह प्रेतके शरीरमें निवास करे। उसके बाद यह पापिनी शेष तीन योनियोंका भी उपभोग करेगी।

कलहा कहती है—विप्रवर! मैं वही पापिनी कलहा हूँ। इस प्रेतशरीरमें आये मुझे पाँच सौ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। मैं सदा भूख-प्याससे पीड़ित रहा करती हूँ। एक बनियेके शरीरमें प्रवेश करके मैं इस दक्षिण देशमें कृष्णा और वेणीके संगमतक आयी हूँ। ज्योंही संगम-तटपर पहुँची, त्योंही भगवान् शिव और विष्णुके पार्षदोंने मुझे बलपूर्वक उसके शरीरसे दूर भगा दिया। तबसे मैं भूखका कष्ट सहन करती हुई इधर-उधर घूम रही हूँ। इतनेमें ही आपके ऊपर मेरी दृष्टि पड़ी है। आपके हाथसे तुलसीमिश्रित जलका संसर्ग पाकर मेरे सब पाप नष्ट हो गये। द्विजश्रेष्ठ! अब आप ही कोई उपाय कीजिये। बताइये मैं इस प्रेतशरीरसे और भविष्यमें होनेवाली भयंकर तीन योनियोंसे किस प्रकार मुक्त होऊँगी?

कलहाका यह वचन सुनकर द्विजश्रेष्ठ धर्मदत्तने बहुत समयतक सोच-विचार करनेके बाद कहा—'तीर्थमें दान और व्रत आदि सत्कर्म करनेसे मनुष्यके पाप नष्ट हो जाते हैं, परंतु तू तो प्रेतके शरीरमें है; अतः उन कर्मोंको करनेकी अधिकारिणी नहीं है। इसलिये मैंने जन्मसे लेकर अबतक जो कार्तिकका व्रत किया है, उसके पुण्यका आधा भाग मैं तुझे देता हूँ। तू उसीसे सद्गतिको

प्राप्त हो जा।' यों कहकर धर्मदत्तने द्वादशाक्षर-मन्त्रका श्रवण कराते हुए तुलसीमिश्रित जलसे ज्योंही उसका अभिषेक किया, त्योंही वह प्रेतयोनिसे मुक्त हो प्रज्वलित अग्निशिखाके समान तेजस्विनी एवं दिव्यरूपधारिणी देवी हो गयी और सौन्दर्यमें लक्ष्मीजीकी समानता करने लगी। तदनन्तर उसने भूमिपर दण्डकी भाँति गिरकर ब्राह्मणदेवताको प्रणाम किया और हर्षगद्गद वाणीमें कहा—'द्विजश्रेष्ठ! आपके प्रसादसे आज मैं इस नरकसे छुटकारा पा गयी। मैं पापके समुद्रमें डूब रही थी, आप मेरे लिये नौकाके समान हो गये।' वह इस प्रकार ब्राह्मणसे कह ही रही थी कि आकाशसे एक दिव्य विमान उतरता दिखायी दिया। वह अत्यन्त प्रकाशमान एवं विष्णुरूपधारी पार्षदोंसे युक्त था। विमानके द्वारपर खड़े हुए पुण्यशील और सुशीलने उस देवीको उठाकर श्रेष्ठ विमानपर चढ़ा लिया। तब धर्मदत्तने बड़े विस्मयके साथ उस विमानको देखा और विष्णुरूपधारी पार्षदोंको देखकर साष्टांग प्रणाम किया। पुण्यशील और सुशीलने प्रणाम करनेवाले ब्राह्मणको उठाया और उसकी सराहना करते हुए कहा—'द्विजश्रेष्ठ! तुम्हें साधुवाद है; क्योंकि तुम सदा भगवान् विष्णुके भजनमें तत्पर रहते हो, दीनोंपर दया करते हो, सर्वज्ञ हो तथा भगवान् विष्णुके व्रतका पालन करते हो। तुमने बचपनसे लेकर अबतक जो कार्तिकव्रतका अनुष्ठान किया है, उसके आधे भागका दान करनेसे तुम्हें दूना पुण्य प्राप्त हुआ है और इसके सैकड़ों जन्मोंके पाप नष्ट हो गये हैं। अब यह वैकुण्ठधाममें ले जायी जा रही है। तुम भी इस जन्मके अन्तमें अपनी दोनों स्त्रियोंके साथ भगवान् विष्णुके वैकुण्ठधाममें जाओगे। धर्मदत्त! जिन्होंने तुम्हारे समान भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुकी आराधना की है, वे धन्य और कृतकृत्य हैं। इस संसारमें उन्हींका जन्म सफल है। भलीभाँति आराधना करनेपर भगवान् विष्णु देहधारी प्राणियोंको क्या नहीं

देते हैं? उन्होंने ही उत्तानपादके पुत्रको पूर्वकालमें ध्रुवपदपर स्थापित किया। उनके नामोंका स्मरण करनेमात्रसे समस्त जीव सद्गतिको प्राप्त होते हैं। पूर्वकालमें ग्राहग्रस्त गजराज उन्हींके नामोंका स्मरण करनेसे मुक्त हुआ था। तुमने जन्मसे ही लेकर जो भगवान् विष्णुको सन्तुष्ट करनेवाले व्रतका अनुष्ठान किया है, उससे बढ़कर न यज्ञ है, न दान है और न तीर्थ हैं। विप्रवर! तुम धन्य हो, क्योंकि तुमने जगद्गुरु भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला ऐसा व्रत किया है कि जिसके आधे भागके फलको पाकर यह स्त्री हमारे साथ भगवान्के लोकमें जा रही है!'

❑❑

भक्तिके प्रभावसे विष्णुदास और राजा चोलका भगवान्के पार्षद होना

नारदजी कहते हैं—इस प्रकार विष्णुपार्षदोंके वचन सुनकर धर्मदत्तने कहा— 'प्रायः सभी मनुष्य भक्तोंका कष्ट दूर करनेवाले श्रीविष्णुकी यज्ञ, दान, व्रत, तीर्थसेवन तथा तपस्याओंके द्वारा विधिपूर्वक आराधना करते हैं। उन समस्त साधनोंमें कौन-सा ऐसा साधन है, जो भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताको बढ़ानेवाला तथा उनके सामीप्यकी प्राप्ति करानेवाला है।'

दोनों पार्षद अपने पूर्वजन्मकी कथा कहने लगे—ब्रह्मन्! पहले कांचीपुरीमें चोल नामक एक चक्रवर्ती राजा हो गये हैं। उन्हींके नामपर उनके अधीन रहनेवाले सभी देश चोल नामसे विख्यात हुए। राजा चोल जब इस भूमण्डलका शासन करते थे, उस समय उनके राज्यमें कोई भी मनुष्य दरिद्र, दुःखी, पापमें मन लगानेवाला अथवा रोगी नहीं था। एक समयकी बात है, राजा चोल अनन्तशयन नामक तीर्थमें गये, जहाँ जगदीश्वर भगवान्

विष्णुने योगनिद्राका आश्रय लेकर शयन किया था। वहाँ भगवान् विष्णुके दिव्य विग्रहकी राजाने विधिपूर्वक पूजा की। दिव्य मणि, मुक्ताफल तथा सुवर्णके बने हुए सुन्दर पुष्पोंसे पूजन करके राजाने साष्टांग प्रणाम किया। प्रणाम करके वे ज्यों ही बैठे, उसी समय उनकी दृष्टि भगवान्के पास आते हुए एक ब्राह्मणपर पड़ी, जो उन्हींकी कांचीनगरीके निवासी थे। उनका नाम विष्णुदास था। उन्होंने भगवान्की पूजाके लिये अपने हाथमें तुलसीदल और जल ले रखा था। निकट आनेपर उन ब्रह्मर्षिने विष्णुसूक्तका पाठ करते हुए देवाधिदेव भगवान्को स्नान कराया और तुलसीकी मंजरी तथा पत्तोंसे उनकी विधिवत् पूजा की। राजा चोलने जो पहले रत्नोंसे भगवान्की पूजा की थी, वह सब तुलसीपूजासे ढक गयी। यह देख राजा कुपित होकर बोले—'विष्णुदास! मैंने मणियों तथा सुवर्णसे भगवान्की जो पूजा की थी, वह कितनी शोभा पा रही थी; तुमने तुलसीदल चढ़ाकर उसे ढक दिया। बताओ, ऐसा क्यों किया? मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि तुम दरिद्र और गवाँर हो! भगवान् विष्णुकी भक्तिको बिलकुल नहीं जानते!'

राजाकी यह बात सुनकर द्विजश्रेष्ठ विष्णुदासने कहा—'राजन्! आपको भक्तिका कुछ भी पता नहीं है, केवल राजलक्ष्मीके कारण आप घमण्ड कर रहे हैं। बतलाइये तो, आजसे पहले आपने कितने वैष्णवव्रतोंका पालन किया है?' तब नृपश्रेष्ठ चोलने हँसकर कहा—'तुम तो दरिद्र और निर्धन हो, तुम्हारी भगवान् विष्णुमें भक्ति ही कितनी है? तुमने भगवान् विष्णुको सन्तुष्ट करनेवाला कोई भी यज्ञ और दान आदि नहीं किया और न पहले कभी कोई देवमन्दिर ही बनवाया है। इतनेपर भी तुम्हें अपनी भक्तिका इतना गर्व है! अच्छा, तो ये सभी ब्राह्मण मेरी बात सुन लें। भगवान् विष्णुके दर्शन पहले मैं करता हूँ, या यह

ब्राह्मण। इस बातको आप सब लोग देखें। फिर हम दोनोंमेंसे किसकी भक्ति कैसी है, यह सब लोग स्वतः जान लेंगे।'

ऐसा कहकर राजा अपने राजभवनको चले गये। वहाँ उन्होंने महर्षि मुद्गलको आचार्य बनाकर वैष्णव यज्ञ प्रारम्भ किया। उधर सदैव भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाले शास्त्रोक्त नियमोंमें तत्पर विष्णुदास भी व्रतका पालन करते हुए, वहीं भगवान् विष्णुके मन्दिरमें टिक गये। उन्होंने माघ और कार्तिकके उत्तम व्रतका अनुष्ठान, तुलसीवनकी रक्षा, एकादशीको द्वादशाक्षर (**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**) मन्त्रका जप, नृत्य, गीत आदि मंगलमय आयोजनोंके साथ प्रतिदिन षोडशोपचारसे भगवान् विष्णुकी पूजा आदि नियमोंका आचरण किया। वे प्रतिदिन चलते, फिरते और सोते—सब समय भगवान् विष्णुका स्मरण किया करते थे। उनकी दृष्टि सर्वत्र सम हो गयी थी। वे सब प्राणियोंके भीतर एकमात्र भगवान् विष्णुको ही स्थित देखते थे। इस प्रकार राजा चोल और विष्णुदास दोनों ही भगवान् लक्ष्मीपतिकी आराधनामें संलग्न थे, दोनों ही अपने-अपने व्रतमें स्थित रहते थे और दोनोंकी ही सम्पूर्ण इन्द्रियाँ तथा समस्त कर्म भगवान् विष्णुको समर्पित हो चुके थे। इस अवस्थामें उन दोनोंने दीर्घकाल व्यतीत किया।

एक दिनकी बात है, विष्णुदासने नित्यकर्म करनेके पश्चात् भोजन तैयार किया। किंतु कोई अलक्षित रहकर उसको चुरा ले गया। विष्णुदासने देखा भोजन नहीं है, परन्तु उन्होंने दुबारा भोजन नहीं बनाया; क्योंकि ऐसा करनेपर सायंकालकी पूजाके लिये उन्हें अवकाश नहीं मिलता। अतः प्रतिदिनके नियमका भंग हो जानेका भय था। दूसरे दिन पुनः उसी समयपर भोजन बनाकर वे ज्यों-ही भगवान् विष्णुको भोग अर्पण करनेके लिये गये, त्योंही किसीने आकर फिर सारा भोजन हड़प लिया। इस प्रकार लगातार सात दिनोंतक कोई आ-आकर उनके भोजनका

अपहरण करता रहा। इससे विष्णुदासको बड़ा विस्मय हुआ। वे मन-ही-मन इस प्रकार विचार करने लगे—'अहो! कौन प्रतिदिन आकर मेरी रसोई चुरा ले जाता है। यदि दुबारा रसोई बनाकर भोजन करता हूँ तो सायंकालकी पूजा छूट जाती है! यदि रसोई बनाकर तुरन्त ही भोजन कर लेना उचित हो तो भी मुझसे यह न होगा; क्योंकि भगवान् विष्णुको सब कुछ अर्पण किये बिना कोई भी वैष्णव भोजन नहीं करता। आज उपवास करते मुझे सात दिन हो गये। इस प्रकार मैं व्रतमें कबतक स्थिर रह सकता हूँ। अच्छा आज मैं रसोईकी भलीभाँति रक्षा करूँगा।'

ऐसा निश्चय करके भोजन बनानेके पश्चात् वे वहीं कहीं छिपकर खड़े हो गये। इतनेमें ही उन्हें एक चाण्डाल दिखायी दिया, जो रसोईका अन्न हरकर जानेके लिये तैयार खड़ा था। भूखके मारे उसका सारा शरीर दुर्बल हो गया था, मुखपर दीनता छा रही थी, शरीरमें हाड़ और चामके सिवा और कुछ शेष नहीं बचा था। उसे देखकर श्रेष्ठ ब्राह्मण विष्णुदासका हृदय करुणासे भर आया। उन्होंने भोजन चुरानेवाले चाण्डालकी ओर देखकर कहा—'भैया! जरा ठहरो, ठहरो। क्यों रूखा-सूखा खाते हो? यह घी तो ले लो।' यों कहते हुए विप्रवर विष्णुदासको आते देख वह चाण्डाल भयके मारे बड़े वेगसे भागा और कुछ ही दूरपर मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। चाण्डालको भयभीत और मूर्च्छित देखकर द्विजश्रेष्ठ विष्णुदास बड़े वेगसे उसके समीप आये तथा दयावश अपने वस्त्रके छोरसे उसको हवा करने लगे। तदनन्तर जब वह उठकर खड़ा हुआ, तब विष्णुदासने देखा, वहाँ चाण्डाल नहीं है, साक्षात् भगवान् नारायण ही शंख, चक्र और गदा धारण किये सामने उपस्थित हैं। अपने प्रभुको प्रत्यक्ष देखकर विष्णुदास सात्त्विक भावोंके वशीभूत हो गये। वे स्तुति और नमस्कार करनेमें भी समर्थ न हो सके। तब भगवान् विष्णुने

सात्त्विक व्रतका पालन करनेवाले अपने भक्त विष्णुदासको छातीसे लगा लिया और उन्हें अपने ही जैसा रूप देकर वे वैकुण्ठधामको ले चले। उस समय यज्ञमें दीक्षित हुए राजा चोलने देखा— विष्णुदास एक श्रेष्ठ विमानपर बैठकर भगवान् विष्णुके समीप जा रहे हैं। विष्णुदासको वैकुण्ठधाममें जाते देख राजाने शीघ्र ही अपने गुरु महर्षि मुद्गलको बुलाया और इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—'जिसके साथ स्पर्धा करके मैंने इस यज्ञ, दान आदि कर्मका अनुष्ठान किया है, वह ब्राह्मण आज भगवान् विष्णुका रूप धारण करके मुझसे पहले ही वैकुण्ठधामको जा रहा है। मैंने इस वैष्णवयागमें भलीभाँति दीक्षित होकर अग्निमें हवन किया और दान आदिके द्वारा ब्राह्मणोंका मनोरथ पूर्ण किया। तथापि अभीतक भगवान् विष्णु मुझपर प्रसन्न नहीं हुए और इस विष्णुदासको केवल भक्तिके ही कारण श्रीहरिने प्रत्यक्ष दर्शन दिया है। अतः जान पड़ता है भगवान् विष्णु केवल दान और यज्ञोंसे प्रसन्न नहीं होते। उन प्रभुका दर्शन करानेमें भक्ति ही प्रधान कारण है।'

दोनों पार्षद कहते हैं—यों कहकर राजाने अपने भानजेको राजसिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया। वे बचपनसे ही यज्ञकी दीक्षा लेकर उसीमें संलग्न रहते थे, इसलिये उन्हें कोई पुत्र नहीं हुआ था। यही कारण है कि उस देशमें अबतक भानजे ही राज्यके उत्तराधिकारी होते हैं। भानजेको राज्य देकर राजा यज्ञशालामें गये और यज्ञकुण्डके सामने खड़े होकर भगवान् विष्णुको सम्बोधित करते हुए तीन बार उच्चस्वरसे निम्नांकित वचन बोले—'भगवान् विष्णु! आप मुझे मन, वाणी, शरीर और क्रियाद्वारा होनेवाली अविचल भक्ति प्रदान कीजिये।' यों कहकर वे सबके देखते-देखते अग्निकुण्डमें कूद पड़े। बस, उसी क्षण भक्तवत्सल भगवान्

विष्णु अग्निकुण्डमें प्रकट हो गये। उन्होंने राजाको छातीसे लगाकर एक श्रेष्ठ विमानपर बैठाया और उन्हें साथ ले वैकुण्ठधामको प्रस्थान किया।

नारदजी कहते हैं—राजन्! जो विष्णुदास थे, वे तो पुण्यशील नामसे प्रसिद्ध भगवान्‌के पार्षद हुए और जो राजा चोल थे, उनका नाम सुशील हुआ। इन दोनोंको अपने ही समान रूप देकर भगवान् लक्ष्मीपतिने अपना द्वारपाल बना लिया।

□□

जय-विजयका चरित्र

धर्मदत्तने पूछा—मैंने सुना है कि जय और विजय भी भगवान् विष्णुके द्वारपाल हैं। उन्होंने पूर्वजन्ममें कौन-सा पुण्य किया था, जिससे वे भगवान्‌के समान रूप धारण करके वैकुण्ठधामके द्वारपाल हुए?

दोनों पार्षदोंने कहा—ब्रह्मन्! पूर्वकालमें तृणविन्दुकी कन्या देवहूतिके गर्भसे महर्षि कर्दमकी दृष्टिमात्रसे दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमेंसे बड़ेका नाम जय था और छोटेका विजय। पीछे उसी देवहूतिके गर्भसे योगधर्मके जाननेवाले भगवान् कपिल उत्पन्न हुए। जय और विजय सदा भगवान् विष्णुकी भक्तिमें तत्पर रहते थे। वे नित्य अष्टाक्षर (**ॐ नमो नारायणाय**) मन्त्रका जप और वैष्णवव्रतोंका पालन करते थे। एक समय राजा मरुत्तने उन दोनोंको अपने यज्ञमें बुलाया। वहाँ जय ब्रह्मा बनाये गये और विजय आचार्य। उन्होंने यज्ञकी सम्पूर्ण विधि पूर्ण की। यज्ञान्तमें अवभृथ-स्नानके पश्चात् राजा मरुत्तने उन दोनोंको बहुत धन दिया। धन लेकर दोनों भाई अपने आश्रमपर गये। वहाँ उस धनका विभाग करते समय दोनोंमें परस्पर लाग-डाँट पैदा हो

गयी। जयने कहा—'इस धनको बराबर-बराबर बाँट लिया जाय।' विजयका कहना था—'नहीं। जिसको जो मिला है, वह उसीके पास रहे।' तब जयने क्रोधमें आकर लोभी विजयको शाप दिया—'तुम ग्रहण करके देते नहीं हो, इसलिये ग्राह हो जाओ।' जयके इस शापको सुनकर विजयने भी शाप दिया—'तुमने मदसे भ्रान्त होकर शाप दिया है, इसलिये मातंग (हाथी)-की योनिमें जाओ।' तत्पश्चात् उन्होंने भगवान्‌से शापनिवृत्तिके लिये प्रार्थना की। श्रीभगवान्‌ने कहा—'तुम मेरे भक्त हो, तुम्हारा वचन कभी असत्य नहीं होगा। तुम दोनों अपने ही दिये हुए इन शापोंको भोगकर फिर मेरे धामको प्राप्त होओगे।' ऐसा कहकर भगवान् विष्णु अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर वे दोनों गण्डकी नदीके तटपर ग्राह और गज हो गये। उस योनिमें भी उन्हें पूर्वजन्मका स्मरण बना रहा और वे विष्णुके व्रतमें तत्पर रहे। किसी समय वह गजराज कार्तिकमासमें स्नानके लिये गण्डकी नदीमें गया। उस समय ग्राहने शापके हेतुको स्मरण करते हुए उस गजको पकड़ लिया। ग्राहसे पकड़े जानेपर गजराजने भगवान् रमानाथका स्मरण किया। तब भगवान् विष्णु शंख, चक्र और गदा धारण किये वहाँ प्रकट हो गये। उन्होंने चक्र चलाकर ग्राह और गजराज दोनोंका उद्धार किया और उन्हें अपने ही जैसा रूप देकर वे वैकुण्ठधामको ले गये। तबसे वह स्थान हरिक्षेत्रके नामसे प्रसिद्ध है। वे ही दोनों विश्वविख्यात जय और विजय हैं, जो भगवान् विष्णुके द्वारपाल हुए हैं।

धर्मदत्त! तुम भी मात्सर्य और दम्भका त्याग करके सदा भगवान् विष्णुके व्रतमें स्थिर रहो, समदर्शी बनो, तुला (कार्तिक), मकर (माघ) और मेष (वैशाख)-के महीनोंमें सदैव प्रातःकाल स्नान करो। एकादशीव्रतके पालनमें स्थिर रहो। तुलसीके बगीचेकी रक्षा करते रहो। ऐसा करनेसे तुम भी शरीरका अन्त होनेपर भगवान् विष्णुके परमपदको प्राप्त होओगे। भगवान् विष्णुको

सन्तुष्ट करनेवाले तुम्हारे इस व्रतसे बढ़कर न यज्ञ हैं, न दान हैं और न तीर्थ ही हैं। विप्रवर! तुम धन्य हो, जिसके व्रतके आधे भागका फल पाकर यह स्त्री हमारे द्वारा वैकुण्ठधाममें ले जायी जा रही है।

नारदजी कहते हैं—राजन्! धर्मदत्तको इस प्रकार उपदेश करके वे दोनों विमानचारी पार्षद उस कलहाके साथ वैकुण्ठधामको चले गये। धर्मदत्त जीवनभर भगवान्‌के व्रतमें स्थिर रहे और देहावसानके बाद उन्होंने अपनी दोनों स्त्रियोंके साथ वैकुण्ठधाम प्राप्त कर लिया। इस प्राचीन इतिहासको जो सुनता और सुनाता है, वह जगद्गुरु भगवान्‌की कृपासे उनका सान्निध्य प्राप्त करानेवाली उत्तम गति पाता है।

❑❑

सांसर्गिक पुण्यसे धनेश्वरका उद्धार, दूसरोंके पुण्य और पापकी आंशिक प्राप्तिके कारण तथा मासोपवास-व्रतकी संक्षिप्त विधि

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—प्रिये! नारदजीके मुखसे यह कथा सुनकर राजा पृथुके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने नारदजीका भलीभाँति पूजन करनेके पश्चात् उन्हें विदा किया। पूर्वकालमें अवन्तिपुरीमें धनेश्वर नामक एक ब्राह्मण रहता था। वह क्रय-विक्रयके कार्यसे घूमता हुआ किसी समय माहिष्मतीपुरीमें जा पहुँचा, जहाँ पापनाशिनी नर्मदा सदैव शोभा पाती है। वहाँ कार्तिकका व्रत करनेवाले बहुत-से मनुष्य अनेक गाँवोंसे स्नान करनेके लिये आये हुए थे। धनेश्वरने उन सबको देखा और अपना सामान बेचता हुआ वह एक मासतक वहीं रहा। वह प्रतिदिन नर्मदाके किनारे घूम-घूमकर स्नान; जप और देवार्चनमें

लगे हुए ब्राह्मणोंको देखता और वैष्णवोंके मुखसे भगवान् विष्णुके नामोंका कीर्तन सुनता था। इस प्रकार नर्मदा-तटपर रहते हुए उसको जब एक मास बीत गया, तब एक दिन अकस्मात् उसे किसी काले साँपने डँस लिया। इससे विह्वल होकर वह भूमिपर गिर पड़ा। यमदूत उसे बाँधकर ले गये और कुम्भीपाकमें डाल दिया। वहाँ उसके गिरते ही सारा कुण्ड शीतल हो गया; ठीक उसी तरह, जैसे पूर्वकालमें प्रह्लादजीको डालनेसे दैत्योंकी जलायी हुई आग ठंडी हो गयी थी। तदनन्तर यमराज इस विषयमें पूछताछ करने लगे। इतनेमें ही वहाँ नारदजी आये और इस प्रकार बोले—'सूर्यनन्दन! यह नरकोंका उपभोग करने योग्य नहीं है। जो मनुष्य पुण्यकर्म करनेवाले लोगोंका दर्शन, स्पर्श और उनके साथ वार्तालाप करता है, वह उनके पुण्यका छठा अंश प्राप्त कर लेता है। यह धनेश्वर तो एक मासतक श्रीहरिके कार्तिकव्रतका अनुष्ठान करनेवाले असंख्य मनुष्योंके सम्पर्कमें रहा है, अतः यह उन सबके पुण्यांशका भागी हुआ है। इसको अनिच्छासे पुण्य प्राप्त हुआ है, इसलिये यह यक्षकी योनिमें रहे और पापभोगके रूपमें सब नरकोंका दर्शनमात्र करके ही यमयातनासे मुक्त हो जाय।'

प्रिये! यों कहकर देवर्षि नारद चले गये। तब प्रेतराजने धनेश्वरको नरकोंके समीप ले जाकर उन सबको दिखलाते हुए कहा—'धनेश्वर! महान् भय देनेवाले इन घोर नरकोंकी ओर दृष्टि डालो। इनमें पापी पुरुष सदा दूतोंद्वारा पकाये जाते हैं। इन नरकोंके पृथक्-पृथक् चौरासी भेद हैं। तुम्हें कार्तिकव्रत करनेवाले पुरुषोंका संसर्ग प्राप्त हुआ था, उससे पुण्यकी वृद्धि हो जानेके कारण ये सभी नरक तुम्हारे लिये निश्चय ही नष्ट हो गये हैं।' इस प्रकार धनेश्वरको नरकोंका दर्शन कराकर प्रेतराज उसे यक्षलोकमें ले गये। वहाँ जाकर वह यक्ष हुआ। वही कुबेरके अनुचर 'धनयक्ष' के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

सूतजी कहते हैं—इस प्रकार अपनी अत्यन्त प्रिय सत्यभामाको यह कथा सुनाकर भगवान् श्रीकृष्ण सन्ध्योपासना करनेके लिये माताके घरमें गये।

ब्रह्माजी कहते हैं—नारद! यदि कार्तिकव्रत करनेके लिये अपनेमें सामर्थ्य न हो तो अन्य उपायसे भी इसका फल प्राप्त हो सकता है। ब्राह्मणको धन देकर कार्तिकव्रतके उत्तम फलको ग्रहण करे। शिष्यसे, भृत्यवर्गसे, स्त्रियोंसे अथवा अपने किसी विश्वासपात्र मनुष्यसे भी व्रतका पालन करावे। ऐसा करनेसे भी मनुष्य फलका भागी होता है।

नारदजीने पूछा—पितामह! यह कार्तिकव्रत थोड़े परिश्रमद्वारा साध्य होनेवाला और महान् फल देनेवाला है, तो भी मनुष्य इसे क्यों नहीं करते हैं?

ब्रह्माजीने कहा—काम, क्रोध और लोभके वशीभूत होनेवाले मनुष्य व्रत आदि धर्मकृत्य नहीं कर पाते। जो इनसे मुक्त हैं, वे ही धर्मकार्य करते हैं। इस पृथ्वीपर श्रद्धा और मेधा—ये दो वस्तुएँ ऐसी हैं, जो काम, क्रोध आदिका विनाश करनेवाली हैं। इनसे व्याप्त मनुष्य भगवान् विष्णुका श्रवण, कीर्तन आदि करता है। पर जिसकी बुद्धि खोटी है, वह यह सब नहीं करता। इसीसे वह अन्धकारपूर्ण नरकमें गिरता है। पढ़ानेसे, यज्ञ करानेसे और एक पंक्तिमें बैठकर भोजन करनेसे मनुष्य दूसरोंके किये हुए पुण्य और पापका चौथाई भाग प्राप्त कर लेता है। एक आसनपर बैठने, एक सवारीपर यात्रा करने तथा श्वाससे शरीरका स्पर्श होनेसे मनुष्य निश्चय ही पुण्य और पापके छठे अंशके फलका भागी होता है। दूसरेके स्पर्शसे, भाषणसे तथा उसकी प्रशंसा करनेसे भी मानव सदा उसके पुण्य और पापके दसवें अंशको पाता है। दर्शन और श्रवणसे अथवा मनके द्वारा उसका चिन्तन करनेसे, वह दूसरेके पुण्य और पापका शतांश प्राप्त करता है।

जो दूसरेकी निन्दा करता, चुगली खाता तथा उसे धिक्कार देता है, वह उसके किये हुए पातकको स्वयं लेकर बदलेमें उसे अपना पुण्य देता है। जो मनुष्य किसी पुण्यकर्म करनेवाले पुरुषकी सेवा करता है, वह यदि उसकी पत्नी, भृत्य और शिष्योंसे भिन्न है तथा उसे उसकी सेवाके अनुरूप कुछ धन नहीं दिया जा रहा है तो वह भी सेवाके अनुसार उस पुण्यात्माके पुण्यफलका भागी होता है। जो एक पंक्तिमें बैठे हुए पुरुषको रसोई परोसते समय छोड़कर आगे बढ़ जाता है, उसके पुण्यका छठा अंश वह छूटा हुआ व्यक्ति पा लेता है। स्नान और सन्ध्या आदि करते समय जो दूसरेका स्पर्श अथवा दूसरेसे भाषण करता है, वह अपने कर्मजनित पुण्यका छठा अंश उसे निश्चय ही दे डालता है। जो धर्मके उद्देश्यसे दूसरोंके पास जाकर धनकी याचना करता है, उसके उस पुण्यकर्मजनित फलका भागी वह धन देनेवाला भी होता है। जो दूसरोंका धन चुराकर उसके द्वारा पुण्यकर्म करता है, वहाँ कर्म करनेवाला तो पापी होता है तथा जिसका धन चुराकर उस कर्ममें लगाया गया है, वही उसके पुण्यफलको प्राप्त करता है। जो दूसरोंका ऋण चुकाये बिना मर जाता है, उसके पुण्यमेंसे वह धनी अपने धनके अनुरूप हिस्सा बँटा लेता है। जो बुद्धि (सलाह) देनेवाला, अनुमोदन करनेवाला, साधनसामग्री देनेवाला तथा बल लगानेवाला है, वह भी पुण्य-पापमेंसे छठे अंशको ग्रहण करता है। प्रजाके पुण्य और पापमेंसे छठा अंश राजा लेता है। इसी प्रकार शिष्यसे गुरु, स्त्रीसे उसका पति और पुत्रसे उसका पिता पुण्य-पापका छठा अंश ग्रहण करता है। स्त्री भी यदि अपने पतिके मनके अनुकूल चलनेवाली और सदा उसे सन्तुष्ट रखनेवाली हो तो वह उसके पुण्यका आधा भाग प्राप्त कर लेती है। जो दूसरेके हाथसे दान आदि पुण्य कर्म करता है, उसके पुण्यका छठा अंश वह कर्ता ही ले

लेता है; परंतु यदि वह पुत्र अथवा भृत्य हो तो षष्ठांशका भागी नहीं होता है। वृत्ति देनेवाला पुरुष वृत्ति भोगनेवालेके पुण्यका छठा अंश ले लेता है। किंतु ऐसा तभी होता है जब वह उस वृत्ति भोगनेवालेसे अपनी या दूसरेकी सेवा न कराता हो। इस प्रकार दूसरोंके द्वारा संचित किये हुए पुण्य-पाप बिना दिये हुए भी आ जाते हैं। पूर्वकालमें एक दम्भी तपस्वी पतिव्रता स्त्रीके शुद्ध प्रभावसे, पिता-माताका पूजन देखनेसे, कार्तिकव्रतका सेवन करके उत्तम लोकको प्राप्त हो गया था।

नारदजीने कहा—भगवन्! मैं मासोपवासकी विधि और उसके फलका यथोचित वर्णन सुनना चाहता हूँ।

ब्रह्माजीने कहा—नारद! जैसे देवताओंमें भगवान् विष्णु श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार सम्पूर्ण व्रतोंमें यह मासोपवास व्रत श्रेष्ठ है। अपने शरीरके बलाबलको समझकर मासोपवास व्रत करना चाहिये। आश्विनके शुक्लपक्षकी एकादशीको उपवास करके तीस दिनोंके लिये इस व्रतको ग्रहण करना चाहिये और उतने दिनोंतक भगवान्‌के मन्दिरमें जाकर तीनों समय भक्तिपूर्वक नैवेद्य, धूप, दीप तथा नाना प्रकारके पुष्पोंसे मन, वाणी और क्रियाद्वारा भगवान् गरुडध्वजकी पूजा करनी चाहिये। स्वधर्मपरायण मनुष्य और अपनी इन्द्रियोंको वशमें रखनेवाली सौभाग्यवती अथवा विधवा स्त्री भगवान् वासुदेवकी पूजा करे। दूसरेका अन्न ग्रहण न करे, परंतु स्वयं दूसरोंको अन्न दे। व्रतस्थ पुरुष शरीरमें उबटन लगाना, मस्तकमें तेल मलना, पान खाना और चन्दन आदिका लेप करना छोड़ दे। इसके सिवा अन्य निषिद्ध वस्तुओंका भी त्याग करे। व्रतका पालन करनेवाला मनुष्य विपरीत कर्ममें लगे रहनेवाले किसी मनुष्यका न तो स्पर्श करे और न उससे वार्तालाप ही करे। गृहस्थ भी देवमन्दिरमें रहकर व्रतका आचरण करे। यथोक्त विधिसे मासोपवासव्रत पूरा करके द्वादशीमें परम पवित्र भगवान् विष्णुका पूजन करे, दक्षिणा

दे। मासोपवासके अन्तमें तेरह ब्राह्मणोंका वरण करके वैष्णव यज्ञ करावे। तत्पश्चात् ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें ताम्बूलसहित दो-दो वस्त्र देकर पूजनपूर्वक विदा करे। इस प्रकार मासोपवासकी विधि बतायी गयी।

❑❑

तुलसीविवाह और भीष्मपंचक-व्रतकी विधि एवं महिमा

ब्रह्माजी कहते हैं—कार्तिक शुक्ला नवमीको द्वापर युगका प्रारम्भ हुआ है। अतः वह तिथि दान और उपवासमें क्रमशः पूर्वाह्णव्यापिनी तथा पराह्णव्यापिनी हो तो ग्राह्य है। इसी तिथिको (नवमीसे एकादशीतक) मनुष्य शास्त्रोक्त विधिसे तुलसीके विवाहका उत्सव करे तो उसे कन्यादानका फल होता है। पूर्वकालमें कनककी पुत्री किशोरीने एकादशी तिथिमें सन्ध्याके समय तुलसीकी वैवाहिक विधि सम्पन्न की। इससे वह किशोरी वैधव्य दोषसे मुक्त हो गयी। अब मैं उसकी विधि बतलाता हूँ—एक तोला सुवर्णकी भगवान् विष्णुकी सुन्दर प्रतिमा तैयार करावे अथवा अपनी शक्तिके अनुसार आधे या चौथाई तोलेकी ही प्रतिमा बनवा ले। फिर तुलसी और भगवान् विष्णुकी प्रतिमामें प्राणप्रतिष्ठा करके स्तुति आदिके द्वारा भगवान्‌को उठावे। पुनः पुरुषसूक्तके मन्त्रोंद्वारा षोडशोपचारसे पूजा करे। पहले देश-कालका स्मरण करके गणेशपूजन करे, फिर पुण्याहवाचन कराकर नान्दीश्राद्ध करे। तत्पश्चात् वेदमन्त्रोंके उच्चारण और बाजे आदिकी ध्वनिके साथ भगवान् विष्णुकी प्रतिमाको तुलसीजीके निकट लाकर रखे। प्रतिमाको वस्त्रोंसे आच्छादित किये रहे। उस समय भगवान्‌का इस प्रकार आवाहन करे—

आगच्छ भगवन् देव अर्चयिष्यामि केशव।
तुभ्यं दास्यामि तुलसीं सर्वकामप्रदो भव॥

'भगवान् केशव! आइये, देव! मैं आपकी पूजा करूँगा। आपकी सेवामें तुलसीको समर्पित करूँगा। आप मेरे सम्पूर्ण मनोरथोंको पूर्ण करें।'

इस प्रकार आवाहनके पश्चात् तीन-तीन बार अर्घ्य, पाद्य और विष्टरका उच्चारण करके इन्हें बारी-बारीसे भगवान्को समर्पित करे। फिर आचमनीय पदका तीन बार उच्चारण करके भगवान्को आचमन करावे। इसके बाद कांस्यके पात्रमें दही, घी और मधु रखकर उसे कांस्यके पात्रसे ही ढक दे तथा भगवान्को अर्पण करते हुए इस प्रकार कहे—'वासुदेव! आपको नमस्कार है, यह मधुपर्क ग्रहण कीजिये।' तदनन्तर हरिद्रालेपन और अभ्यंग-कार्य सम्पन्न करके गोधूलिकी बेलामें तुलसी और श्रीविष्णुका पूजन पृथक्-पृथक् करना चाहिये। दोनोंको एक-दूसरेके सम्मुख रखकर मंगल-पाठ करे। जब भगवान् सूर्य कुछ-कुछ दिखायी देते हों, तब कन्यादानका संकल्प करे। अपने गोत्र और प्रवरका उच्चारण करके आदिकी तीन पीढ़ियोंका भी आवर्तन करे। तत्पश्चात् भगवान्से इस प्रकार कहे—

अनादिमध्यनिधन त्रैलोक्यप्रतिपालक।
इमां गृहाण तुलसीं विवाहविधिनेश्वर॥
पार्वतीबीजसम्भूतां वृन्दाभस्मनि संस्थिताम्।
अनादिमध्यनिधनां वल्लभां ते ददाम्यहम्॥
पयोघटैश्च सेवाभिः कन्यावद्वर्द्धिता मया।
त्वत्प्रियां तुलसीं तुभ्यं ददामि त्वं गृहाण भोः॥

'आदि, मध्य और अन्तसे रहित त्रिभुवनप्रतिपालक परमेश्वर! इस तुलसीको आप विवाहकी विधिसे ग्रहण करें। यह पार्वतीके बीजसे प्रकट हुई है, वृन्दाकी भस्ममें स्थित रही है तथा आदि, मध्य और अन्तसे शून्य है। आपको तुलसी बहुत ही प्रिय है, अतः इसे मैं आपकी सेवामें अर्पित करता हूँ। मैंने जलके घड़ोंसे

सींचकर और अन्य प्रकारकी सेवाएँ करके अपनी पुत्रीकी भाँति इसे पाला, पोसा और बढ़ाया है, आपकी प्रिया तुलसी मैं आपको ही दे रहा हूँ। प्रभो! आप इसे ग्रहण करें।'

इस प्रकार तुलसीका दान करके फिर उन दोनों (तुलसी और विष्णु)-की पूजा करे। विवाहका उत्सव मनाये। सबेरा होनेपर पुनः तुलसी और विष्णुका पूजन करे। अग्निकी स्थापना करके उसमें द्वादशाक्षरमन्त्रसे खीर, घी, मधु और तिलमिश्रित हवनीय द्रव्यकी एक सौ आठ आहुति दे। फिर 'स्विष्टकृत्' होम करके पूर्णाहुति दे। आचार्यकी पूजा करके होमकी शेष विधि पूरी करे। उसके बाद भगवान्से इस प्रकार प्रार्थना करे—'देव! प्रभो! आपकी प्रसन्नताके लिये मैंने यह व्रत किया है। जनार्दन! इसमें जो न्यूनता हो, वह आपके प्रसादसे पूर्णताको प्राप्त हो जाय।'

यदि द्वादशीमें रेवतीका चौथा चरण बीत रहा हो तो उस समय पारण न करे। जो उस समय भी पारण करता है, वह अपने व्रतको निष्फल कर देता है। भोजनके पश्चात् तुलसीके स्वतः गलकर गिरे हुए पत्तोंको खाकर मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। भोजनके अन्तमें ऊख, आँवला और बेरका फल खा लेनेसे उच्छिष्ट-दोष मिट जाता है।

तदनन्तर भगवान्का विसर्जन करते हुए कहे—'भगवन्! आप तुलसीके साथ वैकुण्ठधाममें पधारें। प्रभो! मेरे द्वारा की हुई पूजा ग्रहण करके आप सदा सन्तुष्ट रहें।' इस प्रकार देवेश्वर विष्णुका विसर्जन करके मूर्ति आदि सब सामग्री आचार्यको अर्पण करे। इससे मनुष्य कृतार्थ हो जाता है।

कार्तिक शुक्लपक्षमें एकादशीको प्रातःकाल विधिपूर्वक स्नान करके पाँच दिनका व्रत ग्रहण करे। बाणशय्यापर सोये हुए महात्मा भीष्मने राजधर्म, मोक्षधर्म और दानधर्मका वर्णन किया, जिसे पाण्डवोंके साथ ही भगवान् श्रीकृष्णने भी सुना। उससे

प्रसन्न होकर भगवान् वासुदेवने कहा—'भीष्म! तुम धन्य हो, धन्य हो, तुमने धर्मोंका स्वरूप अच्छी तरह श्रवण कराया है। कार्तिककी एकादशीको तुमने जलके लिये याचना की और अर्जुनने बाणके वेगसे गंगाजल प्रस्तुत किया, जिससे तुम्हारे तन, मन, प्राण सन्तुष्ट हुए। इसलिये आजसे लेकर पूर्णिमातक तुम्हें सब लोग अर्घ्यदानसे तृप्त करें और मुझको सन्तुष्ट करनेवाले इस भीष्मपंचक नामक व्रतका पालन प्रतिवर्ष करते रहें।'

निम्नांकित मन्त्र पढ़कर सव्यभावसे महात्मा भीष्मके लिये तर्पण करना चाहिये। यह भीष्मतर्पण सभी वर्णोंके लोगोंके लिये कर्तव्य है*। मन्त्र इस प्रकार है—

सत्यव्रताय शुचये गांगेयाय महात्मने।
भीष्मायैतद् ददाम्यर्घ्यमाजन्मब्रह्मचारिणे॥

'आजन्म ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले परम पवित्र सत्यव्रतपरायण गंगानन्दन महात्मा भीष्मको मैं यह अर्घ्य देता हूँ।'

जो मनुष्य पुत्रकी कामनासे स्त्रीसहित भीष्मपंचकव्रतका पालन करता है, वह वर्षके भीतर ही पुत्र प्राप्त करता है। जो भीष्मपंचकव्रतका पालन करता है, उसके द्वारा सब प्रकारके शुभकृत्योंका पालन हो जाता है। यह महापुण्यमय व्रत महापातकोंका नाश करनेवाला है। अतः मनुष्योंको प्रयत्नपूर्वक इसका अनुष्ठान करना चाहिये। इसमें भीष्मजीके लिये जलदान और अर्घ्यदान विशेष यत्नसे करना चाहिये। जो नीचे लिखे मन्त्रसे भीष्मजीके लिये अर्घ्यदान करता है, वह मोक्षका भागी होता है।

अर्घ्य-मन्त्र

वैयाघ्रपदगोत्राय सांकृतप्रवराय च।
अपुत्राय ददाम्येतदुदकं भीष्मवर्मणे॥

* सव्येनानेन मन्त्रेण तर्पणं सार्ववर्णिकम्। (स्क० पु०, वै० का० मा० ३२। १०)

वसूनामवताराय शन्तनोरात्मजाय च।
अर्घ्यं ददामि भीष्माय आजन्मब्रह्मचारिणे॥

'जिनका व्याघ्रपद गोत्र और सांकृत प्रवर है, उन पुत्ररहित भीष्मवर्माको मैं यह जल देता हूँ। वसुओंके अवतार, शन्तनुके पुत्र, आजन्म ब्रह्मचारी भीष्मको मैं अर्घ्य देता हूँ।'

पंचगव्य, सुगन्धित चन्दनके जल, चन्दन, उत्तम गन्ध और कुंकुमके द्वारा भक्तिपूर्वक सर्वपापहारी श्रीहरिका पूजन करे। कर्पूर और खस मिले हुए कुंकुमसे भगवान् गरुडध्वजके अंगोंमें लेप करे। सुन्दर पुष्प एवं गन्ध, धूप आदिके द्वारा भगवान्की अर्चना करे। पाँच दिनोंतक भगवान्के समीप दिन-रात दीपक जलाता रहे। देवाधिदेव भगवान्के लिये उत्तम-से-उत्तम नैवेद्य निवेदन करे। इस प्रकार भगवान्की पूजा-अर्चा, ध्यान और नमस्कारके पश्चात् '**ॐ नमो वासुदेवाय**' इस मन्त्रका एक सौ आठ बार जप करे। फिर घी मिलाये हुए तिल, चावल और जौ आदिके द्वारा स्वाहाविशिष्ट षडक्षर (**ॐ रामाय नमः**) मन्त्रसे आहुति दे। इसके बाद सायं-सन्ध्या करके भगवान् विष्णुको प्रणाम करे तथा पूर्ववत् मन्त्र जपकर धरतीपर ही शयन करे। भक्तिपूर्वक भगवान्में ही मनको लगावे। व्रतके समय बुद्धिमान् पुरुष ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए पापपूर्ण विचार तथा पापके कारणभूत मैथुनका परित्याग करे। शाकाहार तथा मुनियोंके अन्नसे निर्वाह करते हुए सदा भगवान् विष्णुके पूजनमें तत्पर रहे। रात्रिमें पंचगव्य लेकर भोजन करे। इस प्रकार भलीभाँति व्रतको समाप्त करे। ऐसा करनेसे मनुष्य शास्त्रोक्त फलको पाता है। स्त्रियोंको अपने पतिकी आज्ञा लेकर पुण्यकी वृद्धि करनी चाहिये। विधवाओंको भी मोक्षसुखकी वृद्धिके लिये व्रतका अनुष्ठान करना चाहिये। पहले अयोध्यापुरीमें कोई अतिथि नामके राजा हो गये हैं। उन्होंने वसिष्ठजीके वचनसे

इस परम दुर्लभ व्रतका अनुष्ठान किया था, जिससे इस लोकमें सम्पूर्ण भोगोंका उपभोग करके अन्तमें वे भगवान् विष्णुके परम धाममें गये। इस प्रकार नियम, उपवास और पंचगव्यसे तथा दूध, फल, मूल एवं हविष्यके आहारसे निर्वाह करते हुए भीष्मपंचकव्रतका पालन करे। पौर्णमासी आनेपर पहलेके समान पूजन करके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और बछड़ेसहित गौका दान करे। एकादशीसे लेकर पूर्णिमातक पाँच दिनोंका भीष्मपंचकव्रत समस्त भूमण्डलमें प्रसिद्ध है। अन्न भोजन करनेवाले पुरुषके लिये यह व्रत नहीं कहा गया है, इसमें अन्नका निषेध है। इस व्रतका पालन करनेपर भगवान् विष्णु शुभ फल प्रदान करते हैं।

❑❑

एकादशीको भगवान्के जगानेकी विधि, कार्तिकव्रतका उद्यापन और अन्तिम तीन तिथियोंकी महिमाके साथ ग्रन्थका उपसंहार

ब्रह्माजी कहते हैं—जो पुरुष कार्तिकमासमें प्रतिदिन पुरुषसूक्तके मन्त्रोंद्वारा अथवा पांचरात्र आगममें बतायी हुई विधिके अनुसार भगवान् विष्णुका पूजन करता है, वह मोक्षका भागी होता है। जो कार्तिकमें '**ॐ नमो नारायणाय**'—इस मन्त्रसे श्रीहरिकी आराधना करता है, वह नरकके दुःखोंसे मुक्त हो, रोग-शोकसे रहित वैकुण्ठधामको प्राप्त होता है। कार्तिकमासमें जो मनुष्य विष्णुसहस्रनाम तथा गजेन्द्रमोक्षका पाठ करता है, उसका फिर संसारमें जन्म नहीं होता। सुव्रत! जो कार्तिकमासमें रात्रिके पिछले पहरमें भगवान्की स्तुतिका गान करता है, वह पितरोंसहित श्वेतद्वीपमें निवास करता है। आषाढ़के शुक्लपक्षमें एकादशी तिथिको शंखासुर दैत्य मारा

गया है। अतः उसी दिनसे आरम्भ करके भगवान् चार मासतक क्षीरसमुद्रमें शयन करते हैं और कार्तिक शुक्ला एकादशीको जागते हैं। इस कारण वैष्णवोंको एकादशीमें निम्नांकित मन्त्रका उच्चारण करके भगवान्‌को जगाना चाहिये—

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज।
उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्यमंगलं कुरु॥

'हे गोविन्द! उठिये, उठिये, हे गरुड़ध्वज! उठिये, हे कमलाकान्त! निद्राका त्याग कर तीनों लोकोंका मंगल कीजिये।'

ऐसा कहकर प्रातःकाल शंख और नगाड़े आदि बजवाये। वीणा, वेणु और मृदंग आदिकी मधुर ध्वनिके साथ नृत्य-गीत और कीर्तन आदि करे। देवेश्वर श्रीविष्णुको उठाकर उनकी पूजा करे और सायंकालमें तुलसीकी वैवाहिक विधिको सम्पन्न करे। एकादशी सदा ही पवित्र है, विशेषतः कार्तिककी एकादशी परम पुण्यमयी मानी गयी है। उत्तम बुद्धिवाला मनुष्य वृद्ध माता-पिताका विधिपूर्वक पूजन करके अपनी स्त्रियोंके साथ भगवान् विष्णुके प्रसादको भक्षण करे। जो इस प्रकार विधिसे द्वादशी व्रतका अनुष्ठान करता है, वह मनुष्य उत्तम सुखोंका उपभोग करके अन्तमें मोक्षको प्राप्त होता है। मुनिश्रेष्ठ! जो मनुष्य द्वादशी तिथिके इस परम उत्तम पुण्यमय माहात्म्यका पाठ अथवा श्रवण करता है, वह उत्तम गतिको प्राप्त होता है।

अब मैं कार्तिकव्रतके उद्यापनका वर्णन करता हूँ, जो सब पापोंका नाश करनेवाला है। व्रतका पालन करनेवाला मनुष्य कार्तिक शुक्ला चतुर्दशीको व्रतकी पूर्ति और भगवान् विष्णुकी प्रीतिके लिये उद्यापन करे। तुलसीके ऊपर एक सुन्दर मण्डप बनवाये। उसे केलेके खम्भोंसे संयुक्त करके नाना प्रकारकी धातुओंसे उसकी विचित्र शोभा बढ़ावे। मण्डपके चारों ओर

दीपकोंकी श्रेणी सुन्दर ढंगसे सजाकर रखे। उस मण्डपमें सुन्दर बंदनवारोंसे सुशोभित चार दरवाजे बनावे और उन्हें फूलों तथा चँवरसे सुसज्जित करे। द्वारोंपर पृथक्-पृथक् मिट्टीके द्वारपाल बनाकर उनकी पूजा करे। उनके नाम इस प्रकार हैं—जय, विजय, चण्ड, प्रचण्ड, नन्द, सुनन्द, कुमुद और कुमुदाक्ष। उन्हें चारों दरवाजोंपर दो-दोके क्रमसे स्थापित कर भक्तिपूर्वक पूजन करे। तुलसीकी जड़के समीप चार रंगोंसे सुशोभित सर्वतोभद्रमण्डल बनावे और उसके ऊपर पूर्णपात्र तथा पंचरत्नसे संयुक्त कलशकी स्थापना करे। कलशके ऊपर शंख-चक्र-गदाधारी भगवान् विष्णुका पूजन करे। भक्तिपूर्वक उस तिथिमें उपवास करे तथा रात्रिमें गीत, वाद्य, कीर्तन आदि मंगलमय आयोजनोंके साथ जागरण करे। जो भगवान् विष्णुके लिये जागरण करते समय भक्तिपूर्वक भगवत्सम्बन्धी पदोंका गान करते हैं, वे सैकड़ों जन्मोंकी पापराशिसे मुक्त हो जाते हैं। उसके बाद पूर्णमासीमें एक सपत्नीक ब्राह्मणको निमन्त्रित करे। प्रातःकाल स्नान और देवपूजन करके वेदीपर अग्निकी स्थापना करे और '**अतो देव०**' इत्यादि मन्त्रके द्वारा देवाधिदेव भगवान्की प्रीतिके लिये तिल और खीरकी आहुति दे। होमकी शेष विधि पूरी करके भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंका पूजन करे और उन्हें यथाशक्ति दक्षिणा दे। भगवान् द्वादशी तिथिको शयनसे उठे, त्रयोदशीको देवताओंसे मिले और चतुर्दशीको सबने उनका दर्शन एवं पूजन किया, इसलिये उस तिथिमें भगवान्की पूजा करनी चाहिये। गुरुकी आज्ञासे भगवान् विष्णुकी सुवर्णमयी प्रतिमाका पूजन करे। इस पूर्णिमाको पुष्करतीर्थकी यात्रा श्रेष्ठ मानी गयी है। नारद! कार्तिकमासमें इस विधिका पालन करना चाहिये। जो इस प्रकार कार्तिकके व्रतका पालन करते हैं, वे धन्य और पूजनीय हैं; उन्हें उत्तम फलकी प्राप्ति होती है। जो भगवान्

विष्णुकी भक्तिमें तत्पर हो कार्तिकमें व्रतका पालन करते हैं, उनके शरीरमें स्थित सभी पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं। जो श्रद्धापूर्वक कार्तिकके उद्यापनका माहात्म्य सुनता है या सुनाता है, वह भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त करता है।

भगवान् विष्णुकी पूजामें रात्रिकालव्यापिनी चतुर्दशी ग्रहण करनी चाहिये और अरुणोदयके समय भगवान् शिवकी पूजा करनी चाहिये। सायंकाल काशीके पंचगंगातीर्थमें स्नान करके भगवान् बिन्दुमाधवकी पूजा करे। पहले विष्णुकांचीमें स्नान करके भगवान् अनन्तसेनकी पूजा करे। फिर रुद्रकांचीमें स्नान करके ओंकारेश्वरके अग्नितीर्थमें नहाकर भगवान् नारायणकी, रेतोदकमें स्नान करके केदारेश्वरकी, प्रयागकी यमुनामें नहाकर भगवान् वेणीमाधवकी और फिर गंगामें स्नान करके संगमेश्वरकी पूजा करे। जो ऐसा करता है, उसके सब प्रकारकी सम्पत्तियाँ अधीन हो जाती हैं।

कार्तिकमासके शुक्लपक्षमें जो अन्तिम तीन पुण्यमयी तिथियाँ हैं, वे त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा कल्याण करनेवाली मानी गयी हैं। उनकी अति पुष्करिणी संज्ञा है। वे सब पापोंका नाश करनेवाली हैं। जो पूरे कार्तिकमासमें स्नान करता है, वह इन्हीं तीन तिथियोंमें स्नान करके पूर्ण फलका भागी होता है। त्रयोदशीमें समस्त वेद जाकर प्राणियोंको पवित्र करते हैं, चतुर्दशीमें यज्ञ और देवता सब जीवोंको पावन बनाते हैं और पूर्णिमामें भगवान् विष्णुसे अधिष्ठित सम्पूर्ण श्रेष्ठ तीर्थ ब्रह्मघाती और शराबी आदि सब पापी प्राणियोंको शुद्ध करते हैं। जो गृहस्थ उक्त तीन तिथियोंमें ब्राह्मणकुटुम्बको भोजन कराता है, वह अपने समस्त पितरोंका उद्धार करके परमपदको प्राप्त होता है। जो कार्तिकके अन्तिम तीन दिनोंमें गीतापाठ करता है, उसे प्रतिदिन अश्वमेध-

यज्ञका फल प्राप्त होता है। जो उक्त तीनों दिन विष्णुसहस्रनामका पाठ करता है, वह जलसे कमलके पत्तोंकी भाँति पापोंसे कभी लिप्त नहीं होता। वैसा करनेवाले कुछ मनुष्य देवता और कुछ सिद्ध होते हैं। कार्तिकमासकी अन्तिम तीन तिथियोंमें सब पुण्योंका उदय होता है। उनमें भी पूर्णिमाका महत्त्व विशेष है। पूर्णिमाको प्रातःकाल उठकर शौच-स्नानादिसे निवृत्त हो समस्त नित्यकर्मोंकी समाप्ति करके भगवान् विष्णुका पूजन करे। बगीचेमें अथवा घरपर भगवद्भक्त पुरुष कार्तिक-पूर्णिमाके दिन मण्डप बनावे। उसे केलेके खम्भोंसे सुशोभित करे। उसमें आमके पल्लवोंकी बंदनवार लगावे और ऊखके डंडे खड़े करके उस मण्डपको सजावे। विचित्र वस्त्रोंसे मण्डपको अलंकृत करके उसमें भगवान् विष्णुकी पूजा करे। पवित्र, चतुर, शान्त, ईर्ष्यारहित, साधु, दयालु, उत्तम वक्ता और श्रेष्ठ बुद्धिवाला पुराणज्ञ विद्वान् वहाँ बैठकर पवित्र कथा कहे। पौराणिक विद्वान् जब व्यासासनपर बैठ जाय, तबसे लेकर उस प्रसंगकी समाप्ति होनेतक किसीको नमस्कार न करे। जहाँ दुष्ट मनुष्य भरे हुए हों, जो शूद्र और हिंसक प्राणियोंसे घिरा हुआ हो अथवा जहाँ जुएका अड्डा हो— ऐसे स्थानमें बुद्धिमान् पुरुष पुण्यकथा न कहे। जो शुद्ध और भक्तिसे संयुक्त, अन्य कार्योंकी अभिलाषा न रखनेवाले, मौन, पवित्र एवं चतुर हों, वे ही श्रोता पुण्यके भागी होते हैं। जो मनुष्य बिना भक्तिके तथा अधम भाव लेकर पवित्र कथाको सुनते हैं, उनको पुण्यफल नहीं प्राप्त होता। मासके अन्तमें गन्ध-माल्य-वस्त्र-आभूषण तथा धनके द्वारा भक्तिपूर्वक पौराणिक विद्वान्का पूजन करे। जो मनुष्य कल्याणमयी पुराणकथाको सुनाते हैं, वे सौ कोटि कल्पोंसे अधिक कालतक ब्रह्मलोकमें निवास करते हैं। जो पौराणिक विद्वान्के बैठनेके लिये कम्बल, मृगचर्म, वस्त्र,

चौकी अथवा पलंग देते हैं, जो पहननेके लिये कपड़े देते हैं, वे ब्रह्मलोकमें निवास करते हैं। यह कार्तिक-माहात्म्य सब रोगों और सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाला है। जो मनुष्य इस माहात्म्यको भक्तिपूर्वक पढ़ता और जो सुनकर धारण करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। जिसकी बुद्धि खोटी हो तथा जो श्रद्धासे हीन हो, ऐसे किसी भी मनुष्यको यह माहात्म्य नहीं सुनाना चाहिये।

सूतजी कहते हैं—ब्रह्माजीके मुखसे इस प्रकार कार्तिक-माहात्म्यकी कथा सुनकर नारदजी प्रेममें मग्न हो गये। उन्होंने ब्रह्माजीको बारम्बार प्रणाम किया और स्वेच्छानुसार वहाँसे चले गये।

स्कन्दपुराणान्तर्गत कार्तिकमास-माहात्म्य सम्पूर्ण

❑❑

कार्तिक-व्रतका माहात्म्य—गुणवतीको कार्तिक-व्रतके पुण्यसे भगवान्‌की प्राप्ति

सूतजी कहते हैं—एक समयकी बात है, देवर्षि नारद कल्पवृक्षके दिव्य पुष्प लेकर द्वारकामें भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिये आये। श्रीकृष्णने स्वागतपूर्वक नारदजीका सत्कार करते हुए उन्हें पाद्य-अर्घ्य निवेदन करनेके पश्चात् बैठनेको आसन दिया। नारदजीने वे दिव्य पुष्प भगवान्‌को भेंट कर दिये। भगवान्‌ने अपनी सोलह हजार रानियोंमें उन फूलोंको बाँट दिया।

तदनन्तर एक दिन सत्यभामाने पूछा—'प्राणनाथ! मैंने पूर्वजन्ममें कौन-सा दान, तप अथवा व्रत किया था, जिससे मैं मर्त्यलोकमें जन्म लेकर भी मर्त्यभावसे ऊपर उठ गयी, आपकी अर्द्धांगिनी हुई।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—प्रिये! एकाग्रचित्त होकर सुनो—तुम पूर्वजन्ममें जो कुछ थीं और जिस पुण्यकारक व्रतका तुमने अनुष्ठान किया था, वह सब मैं बताता हूँ। सत्ययुगके अन्तमें मायापुरी (हरद्वार)-के भीतर अत्रिकुलमें उत्पन्न एक ब्राह्मण रहते थे, जो देवशर्मा नामसे प्रसिद्ध थे। वे वेद-वेदांगोंके पारंगत विद्वान्, अतिथिसेवी, अग्निहोत्रपरायण और सूर्यव्रतके पालनमें तत्पर रहनेवाले थे। प्रतिदिन सूर्यकी आराधना करनेके कारण वे साक्षात् दूसरे सूर्यकी भाँति तेजस्वी जान पड़ते थे। उनकी अवस्था अधिक हो चली थी। ब्राह्मणके कोई पुत्र नहीं था; केवल एक पुत्री थी, जिसका नाम गुणवती था। उन्होंने अपने चन्द्र नामक शिष्यके साथ उसका विवाह कर दिया। वे उस शिष्यको ही पुत्रकी भाँति मानते थे और वह जितेन्द्रिय शिष्य भी उन्हें पिताके ही तुल्य समझता था। एक दिन वे दोनों गुरु-शिष्य कुश और समिधा लानेके लिये गये और हिमालयके शाखाभूत पर्वतके वनमें इधर-उधर भ्रमण करने लगे; इतनेमें ही उन्होंने एक भयंकर राक्षसको अपनी ओर आते देखा। उनके सारे अंग भयसे काँपने

लगे। वे भागनेमें भी असमर्थ हो गये। तबतक उस कालरूपी राक्षसने उन दोनोंको मार डाला। उस क्षेत्रके प्रभावसे तथा स्वयं धर्मात्मा होनेके कारण उन दोनोंको मेरे पार्षदोंने वैकुण्ठधाममें पहुँचा दिया। उन्होंने जो जीवनभर सूर्यपूजन आदि किया था, उस कर्मसे मैं उनके ऊपर बहुत संतुष्ट था। सूर्य, शिव, गणेश, विष्णु तथा शक्तिके उपासक भी मुझे ही प्राप्त होते हैं। जैसे वर्षाका जल सब ओरसे समुद्रमें ही जाता है, उसी प्रकार इन पाँचोंके उपासक मेरे ही पास आते हैं। मैं एक ही हूँ तथापि लीलाके अनुसार भिन्न-भिन्न नाम धारण करके पाँच रूपोंमें प्रकट हुआ हूँ। ठीक उसी तरह, जैसे कोई देवदत्त नामक एक ही व्यक्ति पुत्र-पिता आदि भिन्न-भिन्न नामोंसे पुकारा जाता है।*

तदनन्तर गुणवतीने जब राक्षसके हाथसे उन दोनोंके मारे जानेका हाल सुना, तब वह पिता और पतिके वियोग-दुःखसे पीड़ित होकर करुणस्वरमें विलाप करने लगी—'हा नाथ! हा तात! आप दोनों मुझे अकेली छोड़कर कहाँ चले गये? मैं अनाथ बालिका आपके बिना अब क्या करूँगी। अब कौन घरमें बैठी हुई मुझ कुशलहीन दुःखिनी स्त्रीका भोजन और वस्त्र आदिके द्वारा पालन करेगा।' इस प्रकार बारम्बार करुणाजनक विलाप करके वह बहुत देरके बाद चुप हुई। गुणवती शुभकर्म करनेवाली थी। उसने घरका सारा सामान बेंचकर अपनी शक्तिके अनुसार पिता और पतिका पारलौकिक कर्म किया। तत्पश्चात् वह उसी नगरमें निवास करने लगी। शान्तभावसे सत्य-शौच आदिके पालनमें तत्पर हो भगवान् विष्णुके भजनमें समय बिताने लगी। उसने

---

* सौराश्च शैवा गाणेशा वैष्णवाः शक्तिपूजकाः। मामेव प्राप्नुवन्तीह वर्षापः सागरं यथा॥
एकोऽहं पञ्चधा जातः क्रीडया नामभिःकिल। देवदत्तो यथा कश्चित्पुत्राद्याह्वाननामभिः॥
(९०। ६३-६४)

अपने जीवनभर दो व्रतोंका विधिपूर्वक पालन किया—एक तो एकादशीका उपवास और दूसरा कार्तिकमासका भलीभाँति सेवन। प्रिये! ये दो व्रत मुझे बहुत ही प्रिय हैं। ये पुण्य उत्पन्न करनेवाले, पुत्र और सम्पत्तिके दाता तथा भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं। जो कार्तिकके महीनेमें सूर्यके तुला राशिपर रहते समय प्रातःकाल स्नान करते हैं, वे महापातकी होनेपर भी मुक्त हो जाते हैं। जो मनुष्य कार्तिकमें स्नान, जागरण, दीपदान और तुलसीवनका पालन करते हैं, वे साक्षात् भगवान् विष्णुके स्वरूप हैं। जो लोग श्रीविष्णुमन्दिरमें झाड़ू देते, स्वस्तिक आदि निवेदन करते और श्रीविष्णुकी पूजा करते रहते हैं, वे जीवन्मुक्त हैं। जो कार्तिकमें तीन दिन भी इस नियमका पालन करते हैं, वे देवताओंके लिये वन्दनीय हो जाते हैं। फिर जिन लोगोंने आजन्म इस कार्तिकव्रतका अनुष्ठान किया है उनके लिये तो कहना ही क्या है।

इस प्रकार गुणवती प्रतिवर्ष कार्तिकका व्रत किया करती थी। वह श्रीविष्णुकी परिचर्यामें नित्य-निरन्तर भक्तिपूर्वक मन लगाये रहती थी। एक समय, जब कि जरावस्थासे उसके सारे अंग दुर्बल हो गये थे और वह स्वयं भी ज्वरसे पीड़ित थी, किसी तरह धीरे-धीरे चलकर गंगाके तटपर स्नान करनेके लिये गयी। ज्यों ही उसने जलके भीतर पैर रखा, त्यों ही वह शीतसे पीड़ित हो काँपती हुई गिर पड़ी। उस घबराहटकी दशामें ही उसने देखा, आकाशसे विमान उतर रहा है, जो शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण करनेवाले श्रीविष्णुरूपधारी पार्षदोंसे सुशोभित है और उसमें गरुड़चिह्नसे अंकित ध्वजा फहरा रही है। विमानके निकट आनेपर वह दिव्यरूप धारण करके उसपर बैठ गयी। उसके लिये चँवर डुलाया जाने लगा। मेरे पार्षद उसे वैकुण्ठ ले चले। विमानपर बैठी हुई गुणवती प्रज्वलित अग्निशिखाके समान

तेजस्विनी जान पड़ती थी, कार्तिकव्रतके पुण्यसे उसे मेरे निकट स्थान मिला।

तदनन्तर जब मैं ब्रह्मा आदि देवताओंकी प्रार्थनासे इस पृथ्वीपर आया, तब मेरे पार्षदगण भी मेरे साथ ही आये। भामिनि! समस्त यादव मेरे पार्षदगण ही हैं। ये मेरे समान गुणोंसे शोभा पानेवाले और मेरे प्रियतम हैं। जो तुम्हारे पिता देवशर्मा थे, वे ही अब सत्राजित् हुए हैं। शुभे! चन्द्रशर्मा ही अक्रूर हैं और तुम गुणवती हो। कार्तिकव्रतके पुण्यसे तुमने मेरी प्रसन्नताको बहुत बढ़ाया है। पूर्वजन्ममें तुमने मेरे मन्दिरके द्वारपर जो तुलसीकी वाटिका लगा रखी थी, इसीसे तुम्हारे आँगनमें कल्पवृक्ष शोभा पा रहा है। पूर्वकालमें तुमने जो कार्तिकमें दीपदान किया था, उसीके प्रभावसे तुम्हारे घरमें यह स्थिर लक्ष्मी प्राप्त हुई है तथा तुमने जो अपने व्रत आदि सब कर्मोंको पतिस्वरूप श्रीविष्णुकी सेवामें निवेदन किया था, इसीलिये तुम मेरी पत्नी हुई हो। मृत्युपर्यन्त जो कार्तिकव्रतका अनुष्ठान किया है, उसके प्रभावसे तुम्हारा मुझसे कभी भी वियोग नहीं होगा। इस प्रकार जो मनुष्य कार्तिकमासमें व्रतपरायण होते हैं, वे मेरे समीप आते हैं, जिस प्रकार कि तुम मुझे प्रसन्नता देती हुई यहाँ आयी हो। केवल यज्ञ, दान, तप और व्रत करनेवाले मनुष्य कार्तिकव्रतके पुण्यकी एक कला भी नहीं पा सकते।

सूतजी कहते हैं—इस प्रकार जगत्के स्वामी भगवान् श्रीकृष्णके मुखसे अपने पूर्वजन्मके पुण्यमय वैभवकी बात सुनकर उस समय महारानी सत्यभामाको बड़ा हर्ष हुआ।

❑❑

कार्तिककी श्रेष्ठताके प्रसंगमें शंखासुरके वध, वेदोंके उद्धार तथा 'तीर्थराज' के उत्कर्षकी कथा

सत्यभामाने पूछा—देवदेवेश्वर! तिथियोंमें एकादशी और महीनोंमें कार्तिकमास आपको विशेष प्रिय क्यों हैं? इसका कारण बताइये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—सत्ये! तुमने बहुत अच्छी बात पूछी है। एकाग्रचित्त होकर सुनो। प्रिये! पूर्वकालमें राजा पृथुने भी देवर्षि नारदसे ऐसा ही प्रश्न किया था। उस समय सर्वज्ञ मुनिने उन्हें कार्तिकमासकी श्रेष्ठताका कारण बताया था।

नारदजी बोले—पूर्वकालमें शंख नामक एक असुर था, जो त्रिलोकीका नाश करनेमें समर्थ तथा महान् बल एवं पराक्रमसे युक्त था। वह समुद्रका पुत्र था। उस महान् असुरने समस्त देवताओंको परास्त करके स्वर्गसे बाहर कर दिया और इन्द्र आदि लोकपालोंके अधिकार छीन लिये। देवता मेरुगिरिकी दुर्गम कन्दराओंमें छिपकर रहने लगे। शत्रुके अधीन नहीं हुए। तब दैत्यने सोचा कि 'देवता वेदमन्त्रोंके बलसे प्रबल प्रतीत होते हैं। यह बात मेरी समझमें आ गयी है, अतः मैं वेदोंका ही अपहरण करूँगा। इससे समस्त देवता निर्बल हो जायँगे।' ऐसा निश्चय करके वह वेदोंको हर ले आया। इधर ब्रह्माजी पूजाकी सामग्री लेकर देवताओंके साथ वैकुण्ठलोकमें जा भगवान् विष्णुकी शरणमें गये। उन्होंने भगवान्‌को जगानेके लिये गीत गाये और बाजे बजाये। तब भगवान् विष्णु उनकी भक्तिसे सन्तुष्ट हो जाग उठे। देवताओंने उनका दर्शन किया। वे सहस्रों सूर्योंके समान कान्तिमान् दिखायी देते थे। उस समय षोडशोपचारसे भगवान्‌की पूजा करके देवता उनके चरणोंमें पड़ गये। तब भगवान् लक्ष्मीपतिने उनसे इस प्रकार कहा।

श्रीविष्णु बोले—देवताओ! तुम्हारे गीत, वाद्य आदि मंगलमय कार्योंसे सन्तुष्ट हो मैं वर देनेको उद्यत हूँ। तुम्हारी सभी मनोवांछित कामनाओंको पूर्ण करूँगा। कार्तिकके शुक्लपक्षमें 'प्रबोधिनी' एकादशीके दिन जब एक पहर रात बाकी रहे, उस समय गीत-वाद्य आदि मंगलमय विधानोंके द्वारा जो लोग तुम्हारे ही समान मेरी आराधना करेंगे, वे मुझे प्रसन्न करनेके कारण मेरे समीप आ जायँगे। शंखासुरके द्वारा हरे गये सम्पूर्ण वेद जलमें स्थित हैं। मैं सागरपुत्र शंखका वध करके उन्हें ले आऊँगा। आजसे लेकर सदा ही प्रतिवर्ष कार्तिकमासमें मन्त्र, बीज और यज्ञोंसे युक्त वेद जलमें विश्राम करेंगे। आजसे मैं भी इस महीनेमें जलके भीतर निवास करूँगा। तुमलोग भी मुनीश्वरोंको साथ लेकर मेरे साथ आओ। इस समय जो श्रेष्ठ द्विज प्रातःस्नान करते हैं, वे निश्चय ही सम्पूर्ण यज्ञोंका अवभृथ-स्नान कर चुके। जिन्होंने जीवनभर शास्त्रोक्त विधिसे कार्तिकके उत्तम व्रतका पालन किया हो, वे तुमलोगोंके भी माननीय हों। तुमने एकादशीको मुझे जगाया है; इसलिये यह तिथि मेरे लिये अत्यन्त प्रीतिदायिनी और माननीय होगी। कार्तिकमास और एकादशी तिथि—इन दो व्रतोंका यदि मनुष्य अनुष्ठान करें तो ये मेरे सान्निध्यकी प्राप्ति करानेवाले हैं। इनके समान दूसरा कोई साधन नहीं है।

नारदजी कहते हैं—यह कहकर भगवान् विष्णु मछलीके समान रूप धारण करके आकाशमें विन्ध्यपर्वतनिवासी कश्यप मुनिकी अंजलिमें गिरे। मुनिने करुणावश उस मत्स्यको अपने कमण्डलुमें रख लिया; किन्तु वह उसमें अँट न सका। तब उन्होंने उसे कुएँमें ले जाकर डाल दिया। जब उसमें भी वह न आ सका, तब मुनिने उसे तालाबमें पहुँचा दिया; किन्तु वहाँ भी यही दशा हुई। इस प्रकार उसे अनेक स्थानोंमें रखते हुए अन्ततोगत्वा उन्होंने समुद्रमें डाल दिया। वहाँ भी बढ़कर वह

विशालकाय हो गया। तदनन्तर उन मत्स्यरूपधारी भगवान् विष्णुने शंखासुरका वध किया और उस शंखको अपने हाथमें लिये वे बदरीवनमें गये। वहाँ सम्पूर्ण ऋषियोंको बुलाकर भगवान्ने इस प्रकार आदेश दिया।

श्रीविष्णु बोले—महर्षियो! जलके भीतर बिखरे हुए वेदोंकी खोज करो और रहस्योंसहित उनका पता लगाकर शीघ्र ही ले आओ। तबतक मैं देवताओंके साथ प्रयागमें ठहरता हूँ।

तब तेज और बलसे सम्पन्न समस्त मुनियोंने यज्ञ और बीजसहित वेदमन्त्रोंका उद्धार किया। जिस वेदके जितने मन्त्रको जिस ऋषिने उपलब्ध किया, वही उतने भागका तबसे ऋषि माना जाने लगा। तदनन्तर सब मुनि एकत्रित होकर प्रयागमें गये तथा ब्रह्माजीसहित भगवान् विष्णुको उन्होंने प्राप्त किये हुए वेद अर्पण कर दिये। यज्ञसहित वेदोंको पाकर ब्रह्माजीको बड़ा हर्ष हुआ तथा उन्होंने देवताओं और ऋषियोंके साथ प्रयागमें अश्वमेध-यज्ञ किया। यज्ञकी समाप्ति होनेपर देवता, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर तथा गुह्यकोंने पृथ्वीपर साष्टांग प्रणाम करके यह प्रार्थना की।

देवता बोले—देवाधिदेव जगन्नाथ! प्रभो!! हमारा निवेदन सुनिये। हमलोगोंके लिये यह बड़े हर्षका समय है, अतः आप हमें वरदान दें। रमापते! इस स्थानपर ब्रह्माजीको खोये हुए वेदोंकी प्राप्ति हुई है तथा आपकी कृपासे हमें भी यज्ञभाग उपलब्ध हुआ है; अतः यह स्थान पृथ्वीपर सबसे अधिक श्रेष्ठ और पुण्यवर्धक हो। इतना ही नहीं, आपके प्रसादसे यह भोग और मोक्षका भी दाता हो। साथ ही यह समय भी महान् पुण्यदायक और ब्रह्महत्यारे आदिकी भी शुद्धि करनेवाला हो। इसमें दिया हुआ सब कुछ अक्षय हो। यही वर हमें दीजिये।

भगवान् विष्णुने कहा—देवताओ! तुमने जो कुछ कहा है, उसमें मेरी भी सम्मति है; अतः तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो, यह स्थान

आजसे 'ब्रह्मक्षेत्र' नाम धारण करे। सूर्यवंशमें उत्पन्न राजा भगीरथ यहाँ गंगाको ले आयेंगे और वह सूर्यकन्या यमुनाजीके साथ यहाँ मिलेगी। ब्रह्माजीसहित तुम सम्पूर्ण देवता भी मेरे साथ यहाँ निवास करो। आजसे यह तीर्थ 'तीर्थराज' के नामसे विख्यात होगा। यहाँ किये हुए दान, व्रत, तप, होम, जप और पूजा आदि कर्म अक्षय फलके दाता और सदा मेरी समीपताकी प्राप्ति करानेवाले हों। सात जन्मोंमें किये हुए ब्रह्महत्या आदि पाप भी इस तीर्थका दर्शन करनेसे तत्काल नष्ट हो जायँ। जो धीर पुरुष इस तीर्थमें मेरे समीप मृत्युको प्राप्त होंगे, वे मुझमें ही प्रवेश कर जायँगे, उनका पुनर्जन्म नहीं होगा। जो यहाँ मेरे आगे पितरोंके उद्देश्यसे श्राद्ध करेंगे, उनके समस्त पितर मेरे लोकमें चले जायँगे। यह काल भी मनुष्योंके लिये महान् पुण्यमय तथा उत्तम फल प्रदान करनेवाला होगा। सूर्यके मकर राशिपर स्थित रहते हुए जो लोग यहाँ प्रातःकाल स्नान करेंगे, उनके लिये यह स्थान पापनाशक होगा। मकर राशिपर सूर्यके रहते समय माघमें प्रातःस्नान करनेवाले मनुष्योंके दर्शनमात्रसे सारे पाप उसी प्रकार भाग जाते हैं, जैसे सूर्योदयसे अन्धकार। माघमें जब सूर्य मकर राशिपर स्थित हों, उस समय यहाँ प्रातःस्नान करनेपर मैं मनुष्योंको क्रमशः सालोक्य, सामीप्य और सारूप्य—तीनों प्रकारकी मुक्ति दूँगा। मुनीश्वरो! तुम सब लोग मेरी बात सुनो। यद्यपि मैं सर्वत्र व्यापक हूँ तो भी बदरीवनमें सदा विशेषरूपसे निवास करता हूँ; अन्यत्र दस वर्षोंतक तपस्या करनेसे जिस फलकी प्राप्ति होती है, वही वहाँ एक दिनकी तपस्यासे तुमलोग प्राप्त कर सकते हो। जो नरश्रेष्ठ उस स्थानका दर्शन करते हैं, वे सदाके लिये जीवन्मुक्त हैं। उनके शरीरमें पाप नहीं रहता।

नारदजी कहते हैं—देवदेव भगवान् विष्णु देवताओंसे इस प्रकार कहकर ब्रह्माजीके साथ वहीं अन्तर्धान हो गये तथा इन्द्र

आदि सम्पूर्ण देवता भी अपने अंशोंसे वहाँ रहकर स्वरूपसे अन्तर्धान हो गये। जो शुद्ध चित्तवाला श्रेष्ठ पुरुष इस कथाको सुनता या सुनाता है, वह तीर्थराज प्रयाग और बदरीवनकी यात्रा करनेका फल प्राप्त कर लेता है।

❑❑

कार्तिकमासमें स्नान और पूजनकी विधि

राजा पृथुने कहा—मुने! आपने कार्तिक और माघके स्नानका महान् फल बतलाया; अब उनमें किये जानेवाले स्नानकी विधि और नियमोंका भी वर्णन कीजिये, साथ ही उनकी उद्यापन-विधिको भी ठीक-ठीक बताइये।

नारदजी बोले—राजन्! तुम भगवान् विष्णुके अंशसे उत्पन्न हुए हो, तुम्हारे लिये कोई बात अज्ञात नहीं है। तथापि तुम पूछते हो, इसलिये मैं कार्तिकके परम उत्तम माहात्म्यका वर्णन करता हूँ; सुनो। आश्विनमासके शुक्लपक्षमें जो एकादशी आती है, उसी दिन आलस्य छोड़कर कार्तिकके उत्तम व्रतोंका नियम ग्रहण करे। व्रत करनेवाला पुरुष पहरभर रात बाकी रहे तभी उठे और जलसहित लोटा लेकर गाँवसे बाहर नैर्ऋत्यकोणकी ओर जाय। दिन और सन्ध्याके समय उत्तर दिशाकी ओर मुँह करके तथा रात हो तो दक्षिणकी ओर मुँह करके मल-मूत्रका त्याग करे। पहले जनेऊको दाहिने कानपर चढ़ा ले और भूमिको तिनकेसे ढककर अपने मस्तकको वस्त्रसे आच्छादित कर ले। शौचके समय मुखको यत्नपूर्वक मूँदे रखे। न तो थूके और न मुँहसे ऊपरको साँस ही खींचें। मलत्यागके पश्चात् गुदाभाग तथा हाथको इस प्रकार धोये, जिससे मलका लेप और दुर्गन्ध दूर हो जाय। इस कार्यमें आलस्य नहीं करना चाहिये। पाँच बार गुदामें, दस

बार बायें हाथमें तथा सात-सात बार दोनों हाथोंमें मिट्टी लगाकर धोये। फिर एक बार लिंगमें, तीन बार बायें हाथमें और दो-दो बार दोनों हाथोंमें मिट्टी लगाकर धोये। यह गृहस्थके लिये शौचकी विधि बतायी गयी। ब्रह्मचारीके लिये इससे दूना, वानप्रस्थके लिये तिगुना और संन्यासीके लिये चौगुना करनेका विधान है। रातको दिनकी अपेक्षा आधे शौच (मिट्टी लगाकर धोने)-का नियम है। रास्ता चलनेवाले व्यक्तिके लिये, स्त्रीके लिये तथा शूद्रोंके लिये उससे भी आधे शौचका विधान है। शौचकर्मसे हीन पुरुषकी समस्त क्रियाएँ निष्फल होती हैं। जो अपने मुँहको अच्छी तरह साफ नहीं रखता, उसके उच्चारण किये हुए मन्त्र फलदायक नहीं होते; इसलिये प्रयत्नपूर्वक दाँत और जीभकी शुद्धि करनी चाहिये। गृहस्थ पुरुष किसी दूधवाले वृक्षकी बारह अंगुलकी लकड़ी लेकर दाँतुन करे; किन्तु यदि घरमें पिताकी क्षयाह तिथि या व्रत हो तो दाँतुन न करे। दाँतुन करनेके पहले वनस्पति-देवतासे इस प्रकार प्रार्थना करे—

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च।
ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते॥

(९४। ११)

'हे वनस्पते! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, संतति, पशु, धन, ब्रह्मज्ञान और स्मरणशक्ति प्रदान करें।'

इस मन्त्रका उच्चारण करके दाँतुनसे दाँत साफ करना चाहिये। प्रतिपदा, अमावास्या, नवमी, षष्ठी, रविवार तथा चन्द्रमा और सूर्यके ग्रहणके दिन दाँतुन नहीं करना चाहिये। व्रत और श्राद्धके दिन भी लकड़ीकी दाँतुन करना मना है, उन दिनों जलके बारह कुल्ले करके मुख शुद्ध करनेका विधान है। काँटेदार वृक्ष, कपास, सिन्धुवार, ब्रह्मवृक्ष (पलाश), बरगद, एरण्ड (रेंड़) और दुर्गन्धियुक्त वृक्षोंकी लकड़ीको दाँतुनके काममें नहीं लेना

चाहिये। फिर स्नान करनेके पश्चात् भक्तिपरायण एवं प्रसन्नचित्त होकर चन्दन, फूल और ताम्बूल आदि पूजाकी सामग्री ले भगवान् विष्णु अथवा शिवके मन्दिरमें जाय। वहाँ भगवान्को पृथक्-पृथक् पाद्य-अर्घ्य आदि उपचार अर्पण करके स्तुति करे तथा पुनः नमस्कार करके गीत आदि मांगलिक उत्सवका प्रबन्ध करे। ताल, वेणु और मृदंग आदि बाजोंके साथ भगवान्के सामने नृत्य और गान करनेवाले लोगोंका भी ताम्बूल आदिके द्वारा सत्कार करे। जो भगवान्के मन्दिरमें गान करते हैं, वे साक्षात् विष्णुरूप हैं। कलियुगमें किये हुए यज्ञ, दान और तप भक्तिसे युक्त होनेपर ही जगद्गुरु भगवान्को संतोष देनेवाले होते हैं। राजन्! एक बार मैंने भगवान्से पूछा—'देवेश्वर! आप कहाँ निवास करते हैं?' तो वे मेरी भक्तिसे सन्तुष्ट होकर बोले—'नारद! न तो मैं वैकुण्ठमें निवास करता हूँ और न योगियोंके हृदयमें। मेरे भक्त जहाँ मेरा गुण-गान करते हैं वहीं मैं भी रहता हूँ।'* यदि मनुष्य गन्ध, पुष्प आदिके द्वारा मेरे भक्तोंका पूजन करते हैं तो उससे मुझे जितनी अधिक प्रसन्नता होती है उतनी स्वयं मेरी पूजा करनेसे भी नहीं होती। जो मूर्ख मानव मेरी पुराण-कथा और मेरे भक्तोंका गान सुनकर निन्दा करते हैं, वे मेरे द्वेषके पात्र होते हैं।

शिरीष (सिरस), उन्मत्त (धतूरा), गिरिजा (मातुलुंगी), मल्लिका (मालती), सेमल, मदार और कनेरके फूलोंसे तथा अक्षतोंके द्वारा श्रीविष्णुकी पूजा नहीं करनी चाहिये। जवा, कुन्द, सिरस, जूही, मालती और केवड़ेके फूलोंसे श्रीशंकरजीका पूजन नहीं करना चाहिये। लक्ष्मी-प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाला पुरुष तुलसीदलसे

---

* नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न वै । मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥ (९४। २३)

गणेशका, दूर्वादलसे दुर्गाका तथा अगस्त्यके फूलोंसे सूर्यदेवका पूजन न करे।* इनके अतिरिक्त जो उत्तम पुष्प हैं, वे सदा सब देवताओंकी पूजाके लिये प्रशस्त माने गये हैं। इस प्रकार पूजा-विधि पूर्ण करके देवदेव भगवान्‌से क्षमा-प्रार्थना करे—

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे॥

(९४।३०)

'देवेश्वर! देव! मेरे द्वारा किये गये आपके पूजनमें जो मन्त्र, विधि तथा भक्तिकी न्यूनता हुई हो, वह सब आपकी कृपासे पूर्ण हो जाय।'

तदनन्तर प्रदक्षिणा करके दण्डवत् प्रणाम करे तथा पुनः भगवान्‌से त्रुटियोंके लिये क्षमा-याचना करते हुए गायन आदि समाप्त करे। जो इस कार्तिककी रात्रिमें भगवान् विष्णु अथवा शिवकी भलीभाँति पूजा करते हैं वे मनुष्य पापहीन हो अपने पूर्वजोंके साथ श्रीविष्णुके धाममें जाते हैं।

नारदजी कहते हैं—जब दो घड़ी रात बाकी रहे तब तिल, कुश, अक्षत, फूल और चन्दन आदि लेकर पवित्रतापूर्वक जलाशयके तटपर जाय। मनुष्योंका खुदवाया हुआ पोखरा हो अथवा कोई देवकुण्ड हो या नदी अथवा उसका संगम हो—इनमें उत्तरोत्तर दसगुने पुण्यकी प्राप्ति होती है तथा यदि तीर्थमें स्नान करे तो उसका अनन्त फल माना गया है। तत्पश्चात् भगवान् विष्णुका स्मरण करके स्नानका संकल्प करे तथा तीर्थ आदिके देवताओंको क्रमशः अर्घ्य आदि निवेदन करे। फिर भगवान् विष्णुको अर्घ्य देते हुए निम्नांकित मन्त्रका पाठ करे—

---

* शिरीषोन्मत्तगिरिजामल्लिकाशाल्मलीभवैः । अर्कजैः कर्णिकारैश्च विष्णुर्नार्च्यस्तथाक्षतैः॥
जपाकुन्दशिरीषैश्च यूथिकामालतीभवैः । केतकीभवपुष्पैश्च नैवार्च्यः शंकरस्तथा॥
गणेशं तुलसीपत्रैर्दुर्गां नैव तु दूर्वया । मुनिपुष्पैस्तथा सूर्यं लक्ष्मीकामो न चार्चयेत्॥
(९४।२६—२८)

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥

× × ×

कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥
ध्यात्वाऽहं त्वां च देवेश जलेऽस्मिन् स्नातुमुद्यतः।
तव प्रसादात्पापं मे दामोदर विनश्यतु॥

(९५। ४, ७, ८)

'भगवान् पद्मनाभको नमस्कार है। जलमें शयन करनेवाले श्रीनारायणको नमस्कार है। हृषीकेश! आपको बारम्बार नमस्कार है। यह अर्घ्य ग्रहण कीजिये। जनार्दन! देवेश! लक्ष्मीसहित दामोदर! मैं आपकी प्रसन्नताके लिये कार्तिकमें प्रातःस्नान करूँगा। देवेश्वर! आपका ध्यान करके मैं इस जलमें स्नान करनेको उद्यत हूँ। दामोदर! आपकी कृपासे मेरा पाप नष्ट हो जाय।'

तत्पश्चात् राधासहित भगवान् श्रीकृष्णको निम्नांकित मन्त्रसे अर्घ्य दे—

नित्ये नैमित्तिके कृष्ण कार्तिके पापनाशने।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे॥

(९५। ९)

'श्रीराधासहित भगवान् श्रीकृष्ण! नित्य और नैमित्तिक कर्मरूप इस पापनाशक कार्तिकस्नानके व्रतके निमित्त मेरा दिया हुआ यह अर्घ्य स्वीकार करें।'

इसके बाद व्रत करनेवाला पुरुष भागीरथी, श्रीविष्णु, शिव और सूर्यका स्मरण करके नाभिके बराबर जलमें खड़ा हो विधिपूर्वक स्नान करे। गृहस्थ पुरुषको तिल और आँवलेका चूर्ण लगाकर स्नान करना चाहिये। वनवासी संन्यासी तुलसीके मूलकी

मिट्टी लगाकर स्नान करे। सप्तमी, अमावास्या, नवमी, द्वितीया, दशमी और त्रयोदशीको आँवलेके फल और तिलके द्वारा स्नान करना निषिद्ध है। पहले मल-स्नान करे अर्थात् शरीरको खूब मल-मलकर उसकी मैल छुड़ाये। उसके बाद मन्त्रस्नान करे। स्त्री और शूद्रोंको वेदोक्त मन्त्रोंसे स्नान नहीं करना चाहिये। उनके लिये पौराणिक मन्त्रोंका उपयोग बताया गया है।

व्रती पुरुष अपने हाथमें पवित्रक धारण करके निम्नांकित मन्त्रोंका उच्चारण करते हुए स्नान करे—

त्रिधाभूद्देवकार्यार्थं यः पुरा भक्तिभावितः।
स विष्णुः सर्वपापघ्नः पुनातु कृपयात्र माम्॥
विष्णोराज्ञामनुप्राप्य कार्तिकव्रतकारणात्।
क्षमन्तु देवास्ते सर्वे मां पुनन्तु सवासवाः॥
वेदमन्त्राः सबीजाश्च सरहस्या मखान्विताः।
कश्यपाद्याश्च मुनयो मां पुनन्तु सदैव ते॥
गङ्गाद्याः सरितः सर्वास्तीर्थानि जलदा नदाः।
ससप्तसागराः सर्वे मां पुनन्तु सदैव ते॥
पतिव्रतास्त्वदित्याद्या यक्षाः सिद्धाः सपन्नगाः।
ओषध्यः पर्वताश्चापि मां पुनन्तु त्रिलोकजाः॥

(९५।१४—१८)

'जो पूर्वकालमें भक्तिपूर्वक चिन्तन करनेपर देवताओंके कार्यकी सिद्धिके लिये तीन स्वरूपोंमें प्रकट हुए तथा जो समस्त पापोंका नाश करनेवाले हैं, वे भगवान् विष्णु यहाँ कृपापूर्वक मुझे पवित्र करें। श्रीविष्णुकी आज्ञा प्राप्त करके कार्तिकका व्रत करनेके कारण यदि मुझसे कोई त्रुटि हो जाय तो उसके लिये समस्त देवता मुझे क्षमा करें तथा इन्द्र आदि देवता मुझे पवित्र करें। बीज, रहस्य और यज्ञोंसहित वेदमन्त्र और कश्यप आदि मुनि मुझे सदा ही पवित्र करें। गंगा आदि सम्पूर्ण नदियाँ, तीर्थ, मेघ,

नद और सात समुद्र—ये सभी मुझे सर्वदा पवित्र करें। अदिति आदि पतिव्रताएँ, यक्ष, सिद्ध, नाग तथा त्रिभुवनकी ओषधि और पर्वत भी मुझे पवित्र करें।'

स्नानके पश्चात् विधिपूर्वक देवता, ऋषि, मनुष्य (सनकादि) तथा पितरोंका तर्पण करे। कार्तिकमासमें पितृ-तर्पणके समय जितने तिलोंका उपयोग किया जाता है उतने ही वर्षोंतक पितर स्वर्गलोकमें निवास करते हैं। तदनन्तर जलसे बाहर निकलकर व्रती मनुष्य पवित्र वस्त्र धारण करे और प्रातःकालोचित नित्यकर्म पूरा करके श्रीहरिका पूजन करे। फिर भक्तिसे भगवान्‌में मन लगाकर तीर्थों और देवताओंका स्मरण करते हुए पुनः गन्ध, पुष्प और फलसे युक्त अर्घ्य निवेदन करे। अर्घ्यका मन्त्र इस प्रकार है—

व्रतिनः कार्तिके मासि स्नातस्य विधिवन्मम।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे॥

(९५।२३)

'भगवन्! मैं कार्तिकमासमें स्नानका व्रत लेकर विधिपूर्वक स्नान कर चुका हूँ। मेरे दिये हुए इस अर्घ्यको आप श्रीराधिकाजीके साथ स्वीकार करें।'

इसके बाद वेदविद्याके पारंगत ब्राह्मणोंका गन्ध, पुष्प और ताम्बूलके द्वारा भक्तिपूर्वक पूजन करे और बारम्बार उनके चरणोंमें मस्तक झुकावे। ब्राह्मणके दाहिने पैरमें सम्पूर्ण तीर्थ, मुखमें वेद और समस्त अंगोंमें देवता निवास करते हैं; अतः ब्राह्मणके पूजन करनेसे इन सबकी पूजा हो जाती है। इसके पश्चात् हरिप्रिया भगवती तुलसीकी पूजा करे। प्रयागमें स्नान करने, काशीमें मृत्यु होने और वेदोंके स्वाध्याय करनेसे जो फल प्राप्त होता है; वह सब श्रीतुलसीके पूजनसे मिल जाता है, अतः एकाग्रचित्त होकर निम्नांकित मन्त्रसे तुलसीकी प्रदक्षिणा और नमस्कार करे—

देवैस्त्वं निर्मिता पूर्वमर्चिताऽसि मुनीश्वरैः।
नमो नमस्ते तुलसि पापं हर हरिप्रिये॥

(९५।३०)

'हरिप्रिया तुलसीदेवी! पूर्वकालमें देवताओंने तुम्हें उत्पन्न किया और मुनीश्वरोंने तुम्हारी पूजा की। तुम्हें बारम्बार नमस्कार है। मेरे सारे पाप हर लो।'

तुलसी-पूजनके पश्चात् व्रत करनेवाला भक्तिमान् पुरुष चित्तको एकाग्र करके भगवान् विष्णुकी पौराणिक कथा सुने तथा कथावाचक विद्वान् ब्राह्मण अथवा मुनिकी पूजा करे। जो मनुष्य भक्तियुक्त होकर पूर्वोक्त सम्पूर्ण विधियोंका भलीभाँति पालन करता है, वह अन्तमें भगवान् नारायणके परमधाममें जाता है।

❑❑

कार्तिक-व्रतके नियम और उद्यापनकी विधि

नारदजी कहते हैं—राजन्! कार्तिकका व्रत करनेवाले पुरुषोंके लिये जो नियम बताये गये हैं, उनका मैं संक्षेपसे वर्णन करता हूँ। ध्यान देकर सुनो। अन्नदान देना, गौओंको ग्रास अर्पण करना, वैष्णव पुरुषोंके साथ वार्तालाप करना तथा दूसरेके दीपकको जलाना या उकसाना—इन सब कार्योंसे मनीषी पुरुष धर्मकी प्राप्ति बतलाते हैं। बुद्धिमान् पुरुष दूसरेके अन्न, दूसरेकी शय्या, दूसरेकी निन्दा और दूसरेकी स्त्रीका सदा ही परित्याग करे तथा कार्तिकमें तो इन्हें त्यागनेकी विशेषरूपसे चेष्टा करे। उड़द, मधु, सौवीरक तथा राजमाष (किराव) आदि अन्न कार्तिकका व्रत करनेवाले मनुष्यको नहीं खाने चाहिये। दाल, तिलका तेल, भाव-दूषित तथा शब्द-दूषित अन्नका भी व्रती मनुष्य परित्याग करे। कार्तिकका व्रत करनेवाला पुरुष देवता, वेद, द्विज, गुरु, गौ,

व्रती, स्त्री, राजा तथा महापुरुषोंकी निन्दा छोड़ दे। बकरी, गाय और भैंसके दूधको छोड़कर अन्य सभी पशुओंका दूध मांसके समान वर्जित है। ब्राह्मणोंके खरीदे हुए सभी प्रकारके रस, ताँबेके पात्रमें रखा हुआ गायका दूध, दही और घी, गढ़ेका पानी और केवल अपने लिये बनाया हुआ भोजन—इन सबको विद्वान् पुरुषोंने आमिषके तुल्य माना है। व्रती मनुष्योंको सदा ही ब्रह्मचर्यका पालन, भूमिपर शयन, पत्तलमें भोजन और दिनके चौथे पहरमें एक बार अन्न ग्रहण करना चाहिये। कार्तिकका व्रत करनेवाला मानव प्याज, लहसुन, हींग, छत्राक (गोबर-छत्ता), गाजर, नालिक (भसींड़), मूली और साग खाना छोड़ दे। लौकी, भाँटा (बैगन), कोंहड़ा, भतुआ, लसोड़ा और कैथ भी त्याग दे। व्रती पुरुष रजस्वलाका स्पर्श न करे; म्लेच्छ, पतित, व्रतहीन, ब्राह्मणद्रोही तथा वेदके अनधिकारी पुरुषोंसे कभी वार्तालाप न करे। इन लोगोंने जिस अन्नको देख लिया हो, उस अन्नको भी न खाय; कौओंका जूठा किया हुआ, सूतकयुक्त घरका बना हुआ, दो बार पकाया तथा जला हुआ अन्न भी वैष्णवव्रतका पालन करनेवाले पुरुषोंके लिये अखाद्य है। जो कार्तिकमें तेल लगाना, खाटपर सोना, दूसरेका अन्न लेना और काँसके बर्तनमें भोजन करना छोड़ देता है, उसीका व्रत परिपूर्ण होता है। व्रती पुरुष प्रत्येक व्रतमें सदा ही पूर्वोक्त निषिद्ध वस्तुओंका त्याग करे तथा अपनी शक्तिके अनुसार भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये कृच्छ्र आदि व्रतोंका अनुष्ठान करता रहे। गृहस्थ पुरुष रविवारके दिन सदा ही आँवलेके फलका त्याग करे।

इसी प्रकार माघमें भी व्रती पुरुष उक्त नियमोंका पालन करे और श्रीहरिके समीप शास्त्रविहित जागरण भी करे। यथोक्त नियमोंके पालनमें लगे हुए कार्तिकव्रत करनेवाले मनुष्यको देखकर यमदूत उसी प्रकार भागते हैं, जैसे सिंहसे पीड़ित हाथी। भगवान् विष्णुके

इस व्रतको सौ यज्ञोंकी अपेक्षा भी श्रेष्ठ जानना चाहिये; क्योंकि यज्ञ करनेवाला पुरुष स्वर्गलोकको पाता है और कार्तिकका व्रत करनेवाला मनुष्य वैकुण्ठधामको। इस पृथ्वीपर भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले जितने भी क्षेत्र हैं, वे सभी कार्तिकका व्रत करनेवाले पुरुषके शरीरमें निवास करते हैं। मन, वाणी, शरीर और क्रियाद्वारा होनेवाला जो कुछ भी दुष्कर्म या दुःस्वप्न होता है, वह कार्तिक-व्रतमें लगे हुए पुरुषको देखकर तत्काल नष्ट हो जाता है। इन्द्र आदि देवता भगवान् विष्णुकी आज्ञासे प्रेरित होकर कार्तिकका व्रत करनेवाले पुरुषकी निरन्तर रक्षा करते रहते हैं— ठीक उसी तरह, जैसे सेवक राजाकी रक्षा करते हैं। जहाँ सबके द्वारा सम्मानित वैष्णव-व्रतका अनुष्ठान करनेवाला पुरुष नित्य निवास करता है, वहाँ ग्रह, भूत, पिशाच आदि नहीं रहते।

राजन्! अब मैं कार्तिक-व्रतके अनुष्ठानमें लगे हुए पुरुषके लिये उत्तम उद्यापन-विधिका संक्षेपसे वर्णन करता हूँ। तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो। व्रती मनुष्य कार्तिक शुक्लपक्षकी चतुर्दशीको व्रतकी पूर्ति तथा भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये उद्यापन करे। तुलसीजीके ऊपर एक सुन्दर मण्डप बनाये, जिसमें चार दरवाजे बने हों; उस मण्डपमें सुन्दर बंदनवार लगाकर उसे पुष्पमय चँवरसे सुशोभित करे। चारों दरवाजोंपर पृथक्-पृथक् मिट्टीके चार द्वारपाल—पुण्यशील, सुशील, जय और विजयकी स्थापना करके उन सबका पूजन करे। तुलसीके मूलभागमें वेदीपर सर्वतोभद्र मण्डल बनाये, जो चार रंगोंसे रंजित होकर सुन्दर शोभासम्पन्न और अत्यन्त मनोहर प्रतीत होता हो। सर्वतोभद्रके ऊपर पंचरत्नयुक्त कलशकी स्थापना करे। उसके ऊपर नारियलका महान् फल रख दे। इस प्रकार कलश स्थापित करके उसके ऊपर समुद्रकन्या लक्ष्मीजीके साथ शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले पीताम्बरधारी देवेश्वर श्रीविष्णुकी पूजा करे। सर्वतोभद्रके मण्डलमें इन्द्र आदि लोकपालोंका

भी पूजन करना चाहिये। भगवान् द्वादशीको शयनसे उठे, त्रयोदशीको देवताओंने उनका दर्शन किया और चतुर्दशीको सबने उनकी पूजा की; इसीलिये इस समय भी उसी तिथिको इनकी पूजा की जाती है। उस दिन शान्त एवं शुद्धचित्त होकर भक्तिपूर्वक उपवास करना चाहिये तथा आचार्यकी आज्ञासे देवदेवेश्वर श्रीविष्णुकी सुवर्णमयी प्रतिमाका षोडशोपचारद्वारा नाना प्रकारके भक्ष्य-भोज्य पदार्थ प्रस्तुत करते हुए पूजन करना चाहिये। रात्रिमें गीत और वाद्य आदि मांगलिक उत्सवोंके साथ भगवान्‌के समीप जागरण करना चाहिये। जो भगवान् विष्णुके समीप जागरणकालमें भक्तिपूर्वक गान करते हैं, वे सौ जन्मोंकी पापराशिसे मुक्त हो जाते हैं। भगवान् विष्णुके निमित्त जागरणकालमें गीत-वाद्य करनेवालों तथा सहस्र गोदान करनेवालोंको भी समान फलकी ही प्राप्ति बतलायी गयी है। जो रात्रिमें वासुदेवके समक्ष जागरण करते समय भगवान् विष्णुके चरित्रोंका पाठ करके वैष्णव पुरुषोंका मनोरंजन करता है तथा मनमानी बातें नहीं करता, उसे प्रतिदिन कोटि तीर्थोंके सेवनके समान पुण्य प्राप्त होता है।

रात्रि-जागरणके पश्चात् पूर्णिमाको प्रातःकाल अपनी शक्तिके अनुसार तीस या एक सपत्नीक ब्राह्मणको भोजनके लिये निमन्त्रित करे। उस दिन किया हुआ दान, होम और जप अक्षय फल देनेवाला माना गया है; अतः व्रती पुरुष खीर आदिके द्वारा ब्राह्मणोंको भलीभाँति भोजन कराये। **'अतो देवाः०'** आदि दो मन्त्रोंसे देवदेव भगवान् विष्णु तथा अन्य देवताओंकी प्रसन्नताके लिये पृथक्-पृथक् तिल और खीरकी आहुति छोड़े। फिर यथाशक्ति दक्षिणा दे उन्हें प्रणाम करे। इसके बाद भगवान् विष्णु, देवगण तथा तुलसीका पुनः पूजन करे। कपिला गायकी विधिपूर्वक पूजा करे और व्रतका उपदेश करनेवाले सपत्नीक आचार्यका भी वस्त्र तथा आभूषणों आदिके द्वारा पूजन करे। अन्तमें सब ब्राह्मणोंसे

क्षमा-प्रार्थना करे—'विप्रवरो! आपलोगोंकी कृपासे देवेश्वर भगवान् विष्णु मुझपर सदा प्रसन्न रहें। मैंने गत सात जन्मोंमें जो पाप किये हों, वे सब इस व्रतके प्रभावसे नष्ट हो जायँ। प्रतिदिन भगवान्के पूजनसे मेरे सम्पूर्ण मनोरथ सफल हों तथा इस देहका अन्त होनेपर मैं अत्यन्त दुर्लभ वैकुण्ठधामको प्राप्त करूँ।'

इस प्रकार क्षमायाचना करके ब्राह्मणोंको प्रसन्न करनेके पश्चात् उन्हें विदा करे और गौसहित भगवान् विष्णुकी सुवर्णमयी प्रतिमा आचार्यको दान कर दे। तत्पश्चात् भक्त पुरुष सुहृदों और गुरुजनोंके साथ स्वयं भी भोजन करे। कार्तिक हो या माघ उसके लिये ऐसी ही विधि बतायी गयी है। जो मनुष्य इस प्रकार कार्तिकके उत्तम व्रतका पालन करता है, वह निष्पाप एवं मुक्त होकर भगवान् विष्णुकी समीपता प्राप्त करता है। सम्पूर्ण व्रतों, तीर्थों और दानोंसे जो फल मिलता है, वही इस कार्तिक-व्रतका विधिपूर्वक पालन करनेसे करोड़गुना होकर मिलता है। जो कार्तिक-व्रतका अनुष्ठान करते हुए भगवान् विष्णुकी भक्तिमें तत्पर होते हैं, वे धन्य हैं, वे सदा पूज्य हैं तथा उन्हींके यहाँ सब प्रकारके शुभ फलोंका उदय होता है। देहमें स्थित हुए पाप उस मनुष्यके भयसे काँप उठते हैं और आपसमें कहने लगते हैं—'अरे! यह तो कार्तिकका व्रत करने लगा, अब हम कहाँ जायँगे।' जो कार्तिक-व्रतके इन नियमोंको भक्तिपूर्वक सुनता तथा वैष्णव पुरुषके आगे इनका वर्णन करता है, वे दोनों ही उत्तम व्रत करनेका फल पाते हैं और उनका दर्शन करनेसे मनुष्योंके पापोंका नाश हो जाता है।

नारदजी कहते हैं—राजन्! कार्तिक-व्रतके उद्यापनमें तुलसीके मूलप्रदेशमें भगवान् विष्णुकी पूजा की जाती है; क्योंकि तुलसी उनके लिये अत्यन्त प्रीतिदायिनी मानी गयी है। जिसके घरमें तुलसीका बगीचा लगा होता है, उसका वह घर तीर्थस्वरूप है।

वहाँ यमराजके दूत नहीं जाते। तुलसीवन सब पापोंको हरनेवाला, पवित्र तथा मनोवांछित भोगोंको देनेवाला है। जो श्रेष्ठ मानव तुलसीका वृक्ष लगाते हैं, वे कभी यमराजको नहीं देखते। नर्मदाका दर्शन, गंगाका स्नान और तुलसीवनके पास रहना—ये तीनों एक समान माने गये हैं। रोपने, रक्षा करने, सींचने तथा दर्शन और स्पर्श करनेसे तुलसी मन, वाणी और शरीरद्वारा किये हुए समस्त पापोंको भस्म कर डालती है। जो तुलसीकी मंजरियोंसे भगवान् विष्णु और शिवकी पूजा करता है, वह कभी गर्भमें नहीं आता तथा निश्चय ही मोक्षका भागी होता है। पुष्कर आदि तीर्थ, गंगा आदि नदियाँ तथा वासुदेव आदि देवता—ये सभी तुलसीदलमें निवास करते हैं। नृपश्रेष्ठ! जो तुलसीकी मंजरीसे संयुक्त होकर प्राणोंका परित्याग करता है, उसे श्रीविष्णुका सायुज्य प्राप्त होता है—यह सत्य है, सत्य है। जो शरीरमें तुलसीकी मिट्टी लगाकर मृत्युको प्राप्त होता है वह सैकड़ों पापोंसे युक्त हो तो भी उसकी ओर साक्षात् यमराज भी नहीं देख सकते। जो मनुष्य तुलसीकाष्ठका चन्दन लगाता है, उसके शरीरको पाप नहीं छू सकते। जहाँ-जहाँ तुलसीवनकी छाया हो, वहीं श्राद्ध करना चाहिये; क्योंकि वहाँ पितरोंके निमित्त दिया हुआ दान अक्षय होता है।

नृपश्रेष्ठ! जो आँवलेकी छायामें पिण्डदान करता है, उसके नरकमें पड़े हुए पितर भी मुक्त हो जाते हैं। जो मस्तकपर, हाथमें, मुखमें तथा शरीरके अन्य किसी अवयवमें आँवलेका फल धारण करता है, उसे साक्षात् श्रीहरिका स्वरूप समझना चाहिये। आँवला, तुलसी और द्वारकाकी मिट्टी (गोपीचन्दन)—ये जिसके शरीरमें स्थित हों, वह मनुष्य सदा जीवन्मुक्त कहलाता है। जो मनुष्य आँवलेके फल और तुलसीदलसे मिश्रित जलके द्वारा स्नान करता है, उसके लिये गंगास्नानका फल बताया गया है। जो आँवलेके पत्ते और फलोंसे देवताकी पूजा करता है, वह

भाँति-भाँतिके सुवर्णमय पुष्पोंसे पूजा करनेका फल पाता है। कार्तिकमें जब सूर्य तुला राशिपर स्थित होते हैं, उस समय समस्त तीर्थ, मुनि, देवता और यज्ञ—ये सभी आँवलेके वृक्षका आश्रय लेकर रहते हैं। जो द्वादशीको तुलसीदल और कार्तिकमें आँवलेका पत्ता तोड़ता है, वह अत्यन्त निन्दित नरकोंमें पड़ता है। जो कार्तिकमें आँवलेकी छायामें बैठकर भोजन करता है, उसका वर्षभरका अन्नसंसर्गजनित दोष दूर हो जाता है। जो मनुष्य कार्तिकमें आँवलेकी जड़में भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, उसके द्वारा सदा सम्पूर्ण क्षेत्रोंमें श्रीविष्णुका पूजन सम्पन्न हो जाता है। जैसे भगवान् विष्णुकी महिमाका पूरा-पूरा वर्णन असम्भव है, उसी प्रकार आँवले और तुलसीके माहात्म्यका भी वर्णन नहीं हो सकता। जो आँवले और तुलसीकी उत्पत्ति-कथाको भक्तिपूर्वक सुनता और सुनाता है, वह पापरहित हो अपने पूर्वजोंके साथ श्रेष्ठ विमानपर बैठकर स्वर्गलोकमें जाता है।

❑❑

कार्तिक-व्रतके पुण्य-दानसे एक राक्षसीका उद्धार

राजा पृथुने कहा—मुनिश्रेष्ठ! कार्तिकका व्रत करनेवाले पुरुषके लिये जिस महान् फलकी प्राप्ति बतायी गयी है, उसका वर्णन कीजिये। किसने इस व्रतका अनुष्ठान किया था?

नारदजी बोले—राजन्! पूर्वकालकी बात है, सह्य पर्वतपर करवीरपुरमें धर्मदत्त नामके एक धर्मज्ञ ब्राह्मण रहते थे, जो भगवान् विष्णुका व्रत करनेवाले तथा भलीभाँति श्रीविष्णु-पूजनमें सर्वदा तत्पर रहनेवाले थे। वे द्वादशाक्षर मन्त्रका जप किया करते थे। अतिथियोंका सत्कार उन्हें विशेष प्रिय था। एक दिन कार्तिकमासमें श्रीहरिके समीप जागरण करनेके लिये वे भगवान्‌के मन्दिरकी

ओर चले। उस समय एक पहर रात बाकी थी। भगवान्के पूजनकी सामग्री साथ लिये जाते हुए ब्राह्मणने मार्गमें देखा, एक राक्षसी आ रही है। उसकी आवाज बड़ी डरावनी थी। टेढ़ी-मेढ़ी दाढ़ें, लपलपाती हुई जीभ, धँसे हुए लाल-लाल नेत्र, नग्न शरीर, लम्बे-लम्बे ओठ और घर्घर शब्द—यही उसकी हुलिया थी। उसे देखकर ब्राह्मण देवता भयसे थर्रा उठे। सारा शरीर काँपने लगा। उन्होंने साहस करके पूजाकी सामग्री तथा जलसे ही उस राक्षसीके ऊपर रोषपूर्वक प्रहार किया। हरिनामका स्मरण करके तुलसीदलमिश्रित जलसे उसको मारा था, इसलिये उसका सारा पातक नष्ट हो गया। अब उसे अपने पूर्वजन्मके कर्मोंके परिणामस्वरूप प्राप्त हुई दुर्दशाका स्मरण हो आया। उसने ब्राह्मणको दण्डवत् प्रणाम किया और इस प्रकार कहा—'ब्रह्मन्! मैं पूर्वजन्मके कर्मोंके कुपरिणामवश इस दशाको पहुँची हूँ। अब कैसे मुझे उत्तम गति प्राप्त होगी?'

राक्षसीको अपने आगे प्रणाम करते तथा पूर्वजन्मके किये हुए कर्मोंका वर्णन करते देख ब्राह्मणको बड़ा विस्मय हुआ। वे उससे इस प्रकार बोले—'किस कर्मके फलसे तुम इस दशाको पहुँची हो? कहाँसे आयी हो? तुम्हारा नाम क्या है? तथा तुम्हारा आचार-व्यवहार कैसा है? ये सारी बातें मुझे बताओ।'

कलहा बोली—ब्रह्मन्! मेरे पूर्वजन्मकी बात है, सौराष्ट्र नगरमें भिक्षु नामके एक ब्राह्मण रहते थे। मैं उन्हींकी पत्नी थी। मेरा नाम कलहा था। मैं बड़े भयंकर स्वभावकी स्त्री थी। मैंने वचनसे भी कभी अपने पतिका भला नहीं किया। उन्हें कभी मीठा भोजन नहीं परोसा। मैं सदा उनकी आज्ञाका उल्लंघन किया करती थी। कलह मुझे विशेष प्रिय था। वे ब्राह्मण मुझसे सदा उद्विग्न रहा करते थे। अन्ततोगत्वा मेरे पतिने दूसरी स्त्रीसे विवाह करनेका विचार कर लिया। तब मैंने विष खाकर अपने

प्राण त्याग दिये। फिर यमराजके दूत आये और मुझे बाँधकर पीटते हुए यमलोकमें ले गये। यमराजने मुझे उपस्थित देख चित्रगुप्तसे पूछा—'चित्रगुप्त! देखो तो सही, इसने कैसा कर्म किया है? इसे शुभ कर्मका फल मिलेगा या अशुभ कर्मका?'

चित्रगुप्तने कहा—धर्मराज! इसने तो कोई भी शुभ कर्म नहीं किया है। यह स्वयं मिठाइयाँ उड़ाती थी और अपने स्वामीको उसमेंसे कुछ भी नहीं देती थी। अतः बल्गुली (चमगादर)-की योनिमें जन्म लेकर यह अपनी विष्ठा खाती हुई जीवन धारण करे। इसने सदा अपने स्वामीसे द्वेष किया है तथा सर्वदा कलहमें ही इसकी प्रवृत्ति रही है; इसलिये यह शूकरीकी योनिमें जन्म ले विष्ठाका भोजन करती हुई समय व्यतीत करे। जिस बर्तनमें भोजन बनाया जाता है, उसीमें यह हमेशा खाया करती थी; अतः उस दोषके प्रभावसे यह अपनी ही संतानका भक्षण करनेवाली बिल्ली हो। तथा अपने स्वामीको निमित्त बनाकर इसने आत्मघात किया है, अतः यह अत्यन्त निन्दनीय स्त्री कुछ कालतक प्रेत-शरीरमें भी निवास करे। दूतोंके साथ इसको यहाँसे मरुप्रदेशमें भेज देना चाहिये। वहाँ चिरकालतक यह प्रेतका शरीर धारण करके रहे। इसके बाद यह पापिनी तीन योनियोंका भी कष्ट भोगेगी।

कलहा कहती है—विप्रवर! मैं वही पापिनी कलहा हूँ, प्रेतके शरीरमें आये मुझे पाँच सौ वर्ष व्यतीत हो गये। मैं सदा ही अपने कर्मसे दुःखित तथा भूख-प्याससे पीड़ित रहा करती हूँ। एक दिन भूखसे पीड़ित होकर मैंने एक बनियेके शरीरमें प्रवेश किया और उसके साथ दक्षिण देशमें कृष्णा और वेणीके संगमपर आयी। आनेपर ज्यों ही संगमके किनारे खड़ी हुई त्यों ही उस बनियेके शरीरसे भगवान् शिव और विष्णुके पार्षद निकले और उन्होंने मुझे बलपूर्वक दूर भगा दिया। द्विजश्रेष्ठ!

तबसे मैं भूखका कष्ट सहन करती हुई इधर-उधर घूम रही थी। इतनेमें ही आपके ऊपर मेरी दृष्टि पड़ी। आपके हाथसे तुलसीमिश्रित जलका संसर्ग पाकर अब मेरे पाप नष्ट हो गये। विप्रवर! मुझपर कृपा कीजिये और बताइये, मै इस प्रेत-शरीरसे और भविष्यमें प्राप्त होनेवाली भयंकर तीन योनियोंसे किस प्रकार मुक्त होऊँगी?

नारदजी कहते हैं—कलहाके ये वचन सुनकर द्विजश्रेष्ठ धर्मदत्तको उसके कर्मोंके परिणामका विचार करके बड़ा विस्मय और दुःख हुआ। उसकी ग्लानि देखकर उनका हृदय करुणासे द्रवित हो उठा। वे बहुत देरतक सोच-विचारकर खेदके साथ बोले।

धर्मदत्तने कहा—तीर्थ, दान और व्रत आदि शुभ साधनोंके द्वारा पाप नष्ट होते हैं; किन्तु तुम इस समय प्रेतके शरीरमें स्थित हो, अतः उन शुभ कर्मोंमें तुम्हारा अधिकार नहीं है। तथापि तुम्हारी ग्लानि देखकर मेरे मनमें बड़ा दुःख हो रहा है। तुम दुःखिनी हो, तुम्हारा उद्धार किये बिना मेरे चित्तको शान्ति नहीं मिलेगी; अतः मैंने जन्मसे लेकर आजतक जो कार्तिक-व्रतका अनुष्ठान किया है, उसका आधा पुण्य लेकर तुम उत्तम गतिको प्राप्त होओ।

यों कहकर धर्मदत्तने द्वादशाक्षर मन्त्रका श्रवण कराते हुए तुलसीमिश्रित जलसे ज्यों ही उसका अभिषेक किया त्यों ही वह प्रेत-शरीरसे मुक्त हो दिव्यरूपधारिणी देवी हो गयी। धधकती हुई आगकी ज्वालाके समान तेजस्विनी दिखायी देने लगी। लावण्यसे तो वह ऐसी जान पड़ती थी, मानो साक्षात् लक्ष्मी हों। तदनन्तर उसने भूमिपर मस्तक टेककर ब्राह्मणदेवताको प्रणाम किया और आनन्दविभोर हो गद्‌गदवाणीमें कहा—'द्विजश्रेष्ठ! आपकी कृपासे मैं नरकसे छुटकारा पा गयी। मैं पापके समुद्रमें डूब रही थी, आप मेरे लिये नौकाके समान हो गये।'

वह इस प्रकार ब्राह्मणदेवसे वार्तालाप कर ही रही थी कि आकाशसे एक तेजस्वी विमान उतरता दिखायी दिया। वह श्रीविष्णुके समान रूप धारण करनेवाले पार्षदोंसे युक्त था। पास आनेपर विमानके द्वारपर खड़े हुए पुण्यशील और सुशील नामक पार्षदोंने उस देवीको विमानपर चढ़ा लिया। उस समय उस विमानको देखकर धर्मदत्तको बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने श्रीविष्णुरूपधारी पार्षदोंका दर्शन करके उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। ब्राह्मणको प्रणाम करते देख पुण्यशील और सुशीलने उन्हें उठाया और उनकी प्रशंसा करते हुए यह धर्मयुक्त वचन कहा।

दोनों पार्षद बोले—द्विजश्रेष्ठ! तुम्हें धन्यवाद है। क्योंकि तुम सदा भगवान् विष्णुकी आराधनामें संलग्न रहते हो। दीनोंपर दया करनेका तुम्हारा स्वभाव है। तुम धर्मात्मा और श्रीविष्णुव्रतका अनुष्ठान करनेवाले हो। तुम बचपनसे लेकर अबतक जो कल्याणमय कार्तिकका व्रत किया है, उसके आधेका दान करके दूना पुण्य प्राप्त कर लिया है। तुम बड़े दयालु हो, तुम्हारे द्वारा दान किये हुए कार्तिक-व्रतके अंगभूत तुलसीपूजन आदि शुभ कर्मोंके फलसे यह स्त्री आज भगवान् विष्णुके समीप जा रही है। तुम भी इस शरीरका अन्त होनेपर अपनी दोनों पत्नियोंके साथ भगवान् विष्णुके वैकुण्ठधाममें जाओगे और उन्हींके समान रूप धारण करके सदा उनके समीप निवास करोगे। धर्मदत्त! जिन लोगोंने तुम्हारी ही भाँति श्रीविष्णुकी भक्तिपूर्वक आराधना की है, वे धन्य और कृतकृत्य हैं; तथा संसारमें उन्हींका जन्म लेना सार्थक है। जिन्होंने पूर्वकालमें राजा उत्तानपादके पुत्र ध्रुवको ध्रुवपदपर स्थापित किया था, उन श्रीविष्णुकी यदि भलीभाँति आराधना की जाय तो वे प्राणियोंको क्या नहीं दे डालते। भगवान्के नामोंका स्मरण करनेमात्रसे देहधारी जीव सद्गतिको प्राप्त हो जाते हैं। पूर्वकालमें जब गजराजको ग्राहने पकड़ लिया था, उस समय

उसने श्रीहरिके नामस्मरणसे ही संकटसे छुटकारा पाकर भगवान्‌की समीपता प्राप्त की थी और वही अब भगवान्‌का 'जय' नामसे प्रसिद्ध पार्षद है। तुमने भी श्रीहरिकी आराधना की है, अतः वे तुम्हें अपने समीप अवश्य स्थान देंगे।

❑❑

कार्तिक-माहात्म्यके प्रसंगमें राजा चोल और विष्णुदासकी कथा

नारदजी कहते हैं—इस प्रकार विष्णुपार्षदोंके वचन सुनकर धर्मदत्तको बड़ा आश्चर्य हुआ, वे उन्हें साष्टांग प्रणाम करके बोले—'प्रायः सभी लोग भक्तोंका कष्ट दूर करनेवाले श्रीविष्णुकी यज्ञ, दान, व्रत, तीर्थसेवन और तपस्याओंके द्वारा विधिपूर्वक आराधना करते हैं; उन समस्त साधनोंमें कौन-सा ऐसा साधन है जो श्रीविष्णुको प्रीतिकारक तथा उनके सामीप्यकी प्राप्ति करानेवाला है? किस साधनका अनुष्ठान करनेसे उपर्युक्त सभी साधनोंका अनुष्ठान स्वतः हो जाता है?

दोनों पार्षदोंने कहा—ब्रह्मन्! तुमने बहुत उत्तम बात पूछी है; अब एकाग्रचित्त होकर सुनो, हम इतिहाससहित प्राचीन वृत्तान्तका वर्णन करते हैं। पहले कांचीपुरीमें चोल नामक एक चक्रवर्ती राजा हो गये हैं; उनके अधीन जितने देश थे वे भी चोल नामसे ही विख्यात हुए। राजा चोल जब इस भूमण्डलका शासन करते थे, उस समय कोई भी मनुष्य दरिद्र, दुःखी, पापमें मन लगानेवाला अथवा रोगी नहीं था। उन्होंने इतने यज्ञ किये थे, जिनकी कोई गणना नहीं हो सकती। उनके यज्ञोंके सुवर्णमय एवं शोभाशाली यूपोंसे भरे हुए ताम्रपर्णी नदीके दोनों किनारे चैत्ररथ वनके समान सुशोभित होते थे। एक समयकी बात है, राजा चोल

'अनन्तशयन' नामक तीर्थमें गये, जहाँ जगदीश्वर श्रीविष्णु योगनिद्राका आश्रय ले सो रहे थे। वहाँ लक्ष्मीरमण भगवान् श्रीविष्णुके दिव्य विग्रहकी राजाने विधिपूर्वक पूजा की। मणि, मोती तथा सुवर्णके बने हुए सुन्दर फूलोंसे पूजन करके उन्होंने भगवान्‌को साष्टांग प्रणाम किया। प्रणाम करके वे ज्यों ही बैठे, उसी समय उनकी दृष्टि भगवान्‌के पास आते हुए एक ब्राह्मणपर पड़ी, जो उन्हींकी कांचीनगरीके निवासी थे। उनका नाम विष्णुदास था। वे भगवान्‌की पूजाके लिये अपने हाथमें तुलसीदल और जल लिये हुए थे। निकट आनेपर उन ब्रह्मर्षिने विष्णुसूक्तका पाठ करते हुए देवदेव भगवान्‌को स्नान कराया और तुलसीकी मंजरी तथा पत्तोंसे विधिवत् पूजा की। राजा चोलने जो पहले रत्नोंसे भगवान्‌की पूजा की थी, वह सब तुलसी-पूजासे ढक गयी। यह देख राजा कुपित होकर बोले—'विष्णुदास! मैंने मणियों तथा सुवर्णसे भगवान्‌की पूजा की थी, वह कितनी शोभा पा रही थी! किन्तु तुमने तुलसीदल चढ़ाकर सब ढक दी। बताओ, ऐसा क्यों किया? मुझे तो ऐसा जान पड़ता है, तुम बड़े मूर्ख हो; भगवान् विष्णुकी भक्तिको बिलकुल नहीं जानते। तभी तो तुम अत्यन्त सुन्दर सजी-सजायी पूजाको पत्तोंसे ढके जा रहे हो। तुम्हारे इस बर्तावपर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है।'

विष्णुदास बोले—राजन्! आपको भक्तिका कुछ भी पता नहीं है, केवल राजलक्ष्मीके कारण आप घमण्ड कर रहे हैं। बताइये तो, आजसे पहले आपने कितने वैष्णव व्रतोंका पालन किया है?

राजाने कहा—ब्राह्मण! यदि तुम विष्णुभक्तिसे अत्यन्त गर्वमें आकर ऐसी बात करते हो तो बताओ, तुममें कितनी भक्ति है? तुम तो दरिद्र हो, निर्धन हो। तुमने श्रीविष्णुको संतुष्ट करनेवाले यज्ञ और दान आदि कभी नहीं किये हैं तथा पहले कहीं कोई

देवालय भी नहीं बनवाया है। ऐसी दशामें भी तुम्हें अपनी भक्तिका इतना घमण्ड है! अच्छा, तो आज यहाँ जितने भी श्रेष्ठ ब्राह्मण उपस्थित हैं, वे सभी कान खोलकर मेरी बात सुन लें। देखना है, मैं पहले भगवान् विष्णुका दर्शन पाता हूँ या यह; इससे लोगोंको स्वयं ही ज्ञात हो जायगा कि हम दोनोंमेंसे किसमें कितनी भक्ति है।

दोनों पार्षद बोले—ब्रह्मन्! यह कहकर राजा चोल अपने राजभवनको चले गये और उन्होंने महर्षि मुद्‌गलको आचार्य बनाकर वैष्णव-यज्ञका अनुष्ठान आरम्भ किया, जिसमें बहुत-से ऋषियोंका समुदाय एकत्रित हुआ। बहुत-सा अन्न खर्च किया गया और प्रचुर दक्षिणा बाँटी गयी। जैसे पूर्वकालमें गयाक्षेत्रके भीतर ब्रह्माजीने समृद्धिशाली यज्ञका अनुष्ठान किया था, उसी प्रकार राजा चोलने भी महान् यज्ञ आरम्भ किया। उधर विष्णुदास भी वहीं भगवान्‌के मन्दिरमें ठहर गये और श्रीविष्णुको सन्तुष्ट करनेवाले शास्त्रोक्त नियमोंका भलीभाँति पालन करते हुए सदा ही व्रतका अनुष्ठान करने लगे। माघ और कार्तिकके व्रत, तुलसीके बगीचेका भलीभाँति पालन, एकादशीका व्रत, द्वादशाक्षर मन्त्रका जप तथा गीत-नृत्य आदि मांगलिक उत्सवोंके साथ षोडशोपचारद्वारा प्रतिदिन श्रीविष्णुकी पूजा—यही उनकी जीवनचर्या थी। वे इन्हीं व्रतोंका पालन करते थे। चलते, खाते और सोते समय भी उन्हें निरन्तर श्रीविष्णुका स्मरण बना रहता था। वे समदर्शी थे और सम्पूर्ण प्राणियोंमें भगवान् विष्णुको स्थित देखते थे। उन्होंने भगवान् विष्णुके संतोषके लिये उद्यापनविधिसहित माघ और कार्तिकके विशेष-विशेष नियमोंका भी सर्वदा पालन किया। इस प्रकार राजा चोल और विष्णुदास दोनों ही भगवान् विष्णुकी आराधना करने लगे। दोनों ही अपने-अपने व्रतमें स्थित रहते थे, दोनोंकी ही इन्द्रियाँ और दोनोंके ही कर्म भगवान्‌में ही केन्द्रित थे।

एक दिनकी बात है, विष्णुदासने नित्यकर्म करनेके पश्चात् भोजन तैयार किया; किन्तु उसे किसीने चुरा लिया। चुरानेवालेपर किसीकी दृष्टि नहीं पड़ी। विष्णुदासने देखा, भोजन गायब है; फिर भी उन्होंने दुबारा भोजन नहीं बनाया; क्योंकि ऐसा करनेपर सायंकालकी पूजाके लिये अवकाश नहीं मिलता, अतः प्रतिदिनके नियमके भंग हो जानेका भय था। दूसरे दिन उसी समयपर भोजन बनाकर वे ज्यों ही भगवान् विष्णुको भोग लगानेके लिये गये त्यों ही कोई आकर फिर सारा भोजन हड़प ले गया। इस प्रकार लगातार सात दिनोंतक कोई आ-आकर उनके भोजनका अपहरण करता रहा। इससे विष्णुदासको बड़ा विस्मय हुआ। वे मन-ही-मन इस प्रकार विचार करने लगे—'अहो! यह कौन प्रतिदिन आकर मेरी रसोई चुरा ले जाता है? मैं क्षेत्र-संन्यास ले चुका हूँ, अतः अब किसी तरह इस स्थानका परित्याग नहीं कर सकता। यदि दुबारा बनाकर भोजन करूँ तो सायंकालकी यह पूजा कैसे छोड़ दूँ। कोई-सा भी पाक बनाकर मैं तुरंत भोजन तो करूँगा ही नहीं; क्योंकि जबतक सारी सामग्री भगवान् विष्णुको निवेदन न कर लूँ तबतक मैं भोजन नहीं करता। प्रतिदिन उपवास करनेसे मैं इस व्रतकी समाप्तितक जीवित कैसे रह सकता हूँ। अच्छा, आज मैं रसोईकी भलीभाँति रक्षा करूँगा।'

यों सोचकर भोजन बनानेके पश्चात् वे वहीं कहीं छिपकर खड़े हो गये। इतनेमें ही एक चाण्डाल दिखायी दिया, जो रसोईका अन्न हड़प ले जानेको तैयार खड़ा था। भूखके मारे उसका सारा शरीर दुर्बल हो रहा था, मुखपर दीनता छा रही थी, शरीरमें हाड़ और चामके सिवा और कुछ बाकी नहीं बचा था। उसे देखकर श्रेष्ठ ब्राह्मण विष्णुदासका हृदय करुणासे व्यथित हो उठा। उन्होंने भोजन लेकर जाते हुए चाण्डालपर दृष्टि डाली और कहा—'भैया! जरा ठहरो, ठहरो। क्यों रूखा-सूखा खाते

हो। यह घी तो ले लो।' इस तरह बोलते हुए विप्रवर विष्णुदासको आते देख चाण्डाल बड़े वेगसे भागा और भयसे मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। चाण्डालको भयभीत और मूर्च्छित देख द्विजश्रेष्ठ विष्णुदास वेगसे चलकर उसके पास पहुँचे और करुणावश अपने वस्त्रके किनारेसे उसको हवा करने लगे। तदनन्तर जब वह उठकर खड़ा हुआ तो विष्णुदासने देखा—वह चाण्डाल नहीं, साक्षात् भगवान् नारायण ही शंख, चक्र और गदा धारण किये सामने विराजमान हैं। कटिमें पीताम्बर, चार भुजाएँ, हृदयमें श्रीवत्सका चिह्न तथा मस्तकपर किरीट शोभा पा रहे हैं। अलसीके फूलकी भाँति श्यामसुन्दर शरीर और कौस्तुभमणिसे जगमगाते हुए वक्षःस्थलकी अपूर्व शोभा हो रही है। अपने प्रभुको प्रत्यक्ष देखकर द्विजश्रेष्ठ विष्णुदास सात्त्विक* भावोंके वशीभूत हो गये। वे स्तुति और नमस्कार करनेमें भी समर्थ न हो सके। उस समय वहाँ इन्द्र आदि देवता भी आ पहुँचे। गन्धर्व और अप्सराएँ गाने और नाचने लगीं। वह स्थान सैकड़ों विमानोंसे भर गया और देवर्षियोंके समुदायसे सुशोभित होने लगा। चारों ओर गीत और वाद्योंकी ध्वनि छा गयी। तब भगवान् विष्णुने सात्त्विक व्रतका पालन करनेवाले अपने भक्त विष्णुदासको छातीसे लगा लिया और उन्हें अपने-ही-जैसा रूप देकर वे वैकुण्ठधामको ले चले। उस समय यज्ञमें दीक्षित हुए राजा चोलने देखा, विष्णुदास एक सुन्दर विमानपर बैठकर भगवान् विष्णुके समीप जा रहे हैं। विष्णुदासको वैकुण्ठधाममें जाते देख राजाने तुरंत ही अपने गुरु महर्षि मुद्गलको बुलाया और इस प्रकार कहना आरम्भ किया।

---

* प्रेमकी प्रगाढ़ावस्थामें होनेवाले आठ प्रकारके अंग-विकारोंको जो सत्त्वगुणकी प्रेरणासे प्रकट होते हैं, सात्त्विक भाव कहते हैं। उनके नाम ये हैं—स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, कम्प, विवर्णता, आँसू और प्रलय।

राजा बोले—जिसके साथ लाग-डाँट होनेके कारण मैंने यह यज्ञ-दान आदि कर्मका अनुष्ठान किया है, वह ब्राह्मण आज भगवान् विष्णुका रूप धारण करके मुझसे पहले ही वैकुण्ठधाममें जा रहा है। मैंने इस वैष्णवयागमें भलीभाँति दीक्षित होकर अग्निमें हवन किया और दान आदिके द्वारा ब्राह्मणोंका मनोरथ पूर्ण किया; तथापि अभीतक भगवान् मुझपर प्रसन्न नहीं हुए और इस ब्राह्मणको केवल भक्तिके ही कारण श्रीहरिने प्रत्यक्ष दर्शन दिया है। अतः जान पड़ता है, भगवान् विष्णु केवल दान और यज्ञोंसे प्रसन्न नहीं होते। उन प्रभुका दर्शन करानेमें भक्ति ही प्रधान कारण है।

दोनों पार्षद कहते हैं—यों कहकर राजाने अपने भानजेको राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया। वे बचपनसे ही यज्ञकी दीक्षा लेकर उसीमें संलग्न रहते थे, इसलिये उन्हें कोई पुत्र नहीं हुआ। यही कारण है कि उस देशमें अबतक भानजे ही सदा राज्यके उत्तराधिकारी होते हैं। वे सब-के-सब राजा चोलके द्वारा स्थापित आचारका ही पालन करते हैं। भानजेको राज्य देनेके पश्चात् राजा यज्ञशालामें गये और यज्ञकुण्डके सामने खड़े होकर श्रीविष्णुको सम्बोधित करते हुए तीन बार उच्च स्वरसे निम्नांकित वचन बोले—'भगवान् विष्णु! आप मुझे मन, वाणी, शरीर और क्रियाद्वारा स्थिर भक्ति प्रदान कीजिये।' यों कहकर वे सबके देखते-देखते अग्निमें कूद पड़े। उस समय मुद्गल मुनिने क्रोधमें आकर अपनी शिखा उखाड़ डाली। तभीसे आजतक उस गोत्रमें उत्पन्न होनेवाले समस्त मुद्गल ब्राह्मण बिना शिखाके ही रहते हैं। राजा ज्यों ही अग्निकुण्डमें कूदे, उसी समय भक्तवत्सल भगवान् विष्णु प्रकट हो गये और उन्होंने राजाको छातीसे लगाकर एक श्रेष्ठ विमानपर बिठाया; फिर अपने ही समान रूप देकर उन देवेश्वरने देवताओंसहित वैकुण्ठधामको प्रस्थान किया। उक्त

दोनों भक्तोंमें जो विष्णुदास थे, वे तो पुण्यशील नामसे प्रसिद्ध भगवान्‌के पार्षद हुए तथा जो राजा चोल थे, उनका नाम सुशील हुआ। हम वे ही दोनों हैं। लक्ष्मीजीके प्रियतम श्रीहरिने हमें अपने समान रूप देकर अपना द्वारपाल बना लिया है।

इसलिये धर्मज्ञ ब्राह्मण! तुम भी सदा भगवान् विष्णुके व्रतमें स्थित रहो। मात्सर्य और दम्भका परित्याग करके सर्वत्र समान दृष्टि रखो। तुला, मकर और मेषकी संक्रान्तिमें सदा प्रातःस्नान किया करो। एकादशीके व्रतमें लगे रहो और तुलसीवनकी रक्षा करते रहो। ब्राह्मणों, गौओं तथा वैष्णवोंकी सदा ही सेवा करो। मसूर, काँजी और बैगन खाना छोड़ दो। धर्मदत्त! ऐसा करनेसे तुम भी शरीरका अन्त होनेपर श्रीविष्णुके परमपदको प्राप्त करोगे। जैसे हमलोगोंने भगवान्‌की भक्तिसे ही उन्हें पाया है उसी प्रकार तुम भी उन्हें प्राप्त कर लोगे। तुमने जन्मसे लेकर अबतक जो श्रीविष्णुको संतुष्ट करनेवाला यह व्रत किया है, इससे यज्ञ, दान और तीर्थ भी बड़े नहीं हैं। विप्रवर! तुम धन्य हो; क्योंकि तुमने जगद्गुरु भगवान् श्रीविष्णुको प्रसन्न करनेवाले इस व्रतका अनुष्ठान किया है; जिसके एक भागका पुण्य पाकर ही प्रेतयोनिमें पड़ी हुई कलहा मुक्त हो गयी। अब हमलोग इसे भगवान् विष्णुके लोकमें ले जा रहे हैं।

नारदजी कहते हैं—राजन्! इस प्रकार विमानपर बैठे हुए विष्णुके दूतोंने धर्मदत्तको उपदेश देकर कलहाके साथ वैकुण्ठधामकी यात्रा की। तत्पश्चात् धर्मदत्त भी पूर्ण विश्वासके साथ उस व्रतमें लगे रहे और शरीरका अन्त होनेपर अपनी दोनों पत्नियोंके साथ वे भगवान्‌के परमधामको चले गये। जो पुरुष इस प्राचीन इतिहासको सुनता और सुनाता है, वह जगद्गुरु भगवान्‌की कृपासे उनका सान्निध्य प्राप्त करानेवाली उत्तम गति पाता है।

❑❑

पुण्यात्माओंके संसर्गसे पुण्यकी प्राप्तिके प्रसंगमें धनेश्वर ब्राह्मणकी कथा

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—प्रिये! यह कथा सुनकर राजा पृथुके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने भक्तिपूर्वक देवर्षि नारदका पूजन करनेके पश्चात् उन्हें विदा किया। इसलिये माघस्नान, कार्तिकस्नान तथा एकादशी—ये तीनों व्रत मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। वनस्पतियोंमें तुलसी, महीनोंमें कार्तिक, तिथियोंमें एकादशी तथा पुण्य-क्षेत्रोंमें द्वारकापुरी मुझे विशेष प्रिय हैं।* जो अपनी इन्द्रियोंको संयममें रखकर इन सबका सेवन करता है, वह मुझे बहुत ही प्रिय होता है। यज्ञ आदिके द्वारा भी कोई मेरा ऐसा प्रिय नहीं हो सकता, जैसा कि पूर्वोक्त चारोंके सेवनसे होता है।

सत्यभामा बोलीं—नाथ! आपने मुझे जो कथा सुनायी है, वह बड़े ही आश्चर्यमें डालनेवाली है; क्योंकि कलहा दूसरेके दिये हुए पुण्यसे ही मुक्ति पा गयी। इस कार्तिकमासका ऐसा प्रभाव है और यह आपको इतना प्रिय है कि इसमें किये हुए स्नान-दानसे कलहाके पतिद्रोह आदि पाप भी नष्ट हो गये। प्रभो! जो दूसरेका किया हुआ पुण्य है, वह उसके देनेसे तो मिल जाता है; किन्तु बिना दिया हुआ पुण्य मनुष्य किस मार्गसे पा सकता है?

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—प्रिये! सत्ययुग, त्रेता और द्वापरमें देश, ग्राम और कुल भी मनुष्यके किये हुए पुण्य और पापके भागी होते हैं; परन्तु कलियुगमें केवल कर्ताको ही पुण्य और पापका फल भोगना पड़ता है। पढ़ानेसे, यज्ञ करानेसे अथवा एक पंक्तिमें बैठकर भोजन करनेसे भी मनुष्य दूसरोंके पुण्य और पापका चौथाई भाग परोक्षरूपसे पा लेता है। एक आसनपर

---

* वनस्पतीनां तुलसी मासानां कार्तिकः प्रियः । एकादशी तिथीनां च क्षेत्राणां द्वारका मम॥ (११४।३)

बैठने, एक सवारीपर चलने, श्वासका स्पर्श होने और परस्पर अंग सट जानेसे भी निश्चय ही पुण्य-पापके छठे अंशका फलभागी होना पड़ता है। स्पर्श करनेसे, बातचीत करनेसे तथा दूसरेकी स्तुति करनेसे भी मानव पुण्य-पापके दशमांशको ग्रहण करता है। देखनेसे, नाम सुननेसे तथा मनके द्वारा चिन्तन करनेसे दूसरेके पुण्य-पापका शतांश भाग प्राप्त होता है। जो दूसरेकी निन्दा करता, चुगली खाता और उसे धिक्कार देता है, वह उसके किये हुए पातकको स्वयं लेकर बदलेमें अपने पुण्यको देता है।[1] एक पंक्तिमें बैठकर भोजन करनेवाले लोगोंमेंसे जो किसीको परोसनेमें छोड़ देता है, उसके पुण्यका छठा भाग उस छोड़े हुए व्यक्तिको मिल जाता है। जो स्नान और सन्ध्या आदि करते समय किसीको छूता या उससे बातचीत करता है, उसे अपने कर्मजनित पुण्यके छठे अंशको उस व्यक्तिके लिये निश्चय ही देना पड़ता है।[2] जो धर्मके उद्देश्यसे दूसरे मनुष्यसे धनकी याचना करता है, उसके पुण्य-कर्मके फलको धन देनेवाला व्यक्ति भी पाता है। जो दूसरेका धन चुराकर पुण्य-कर्म करता है, उसका फल धनीको ही मिलता है, कर्म करनेवालेको नहीं। जो मनुष्य दूसरेका ऋण चुकाये बिना ही मर जाता है, उसके पुण्यको धनी मनुष्य अपने धनके अनुसार बाँट लेता है। कर्म करनेकी सलाह देनेवाला, अनुमोदन करनेवाला, सामग्री जुटानेवाला तथा बलसे सहायता करनेवाला पुरुष भी पुण्य-पापके छठे अंशको पा लेता है। राजा अपनी प्रजासे, गुरु शिष्यसे, पति अपनी पत्नीसे तथा पिता अपने पुत्रसे उसके पुण्य-पापका छठा अंश प्राप्त करता है। स्त्री भी यदि सदा अपने

१-परस्य निन्दां पैशुन्यं धिक्कारं च करोतियः। तत्कृतं पातकं प्राप्य स्वपुण्यं प्रददाति सः॥ (११४।१७)

२-स्नानसन्ध्यादिकं कुर्वन् यः स्पृशेद्वा प्रभाषते। स कर्मपुण्यषष्ठांशं दद्यात्तस्मै सुनिश्चितम्॥ (११४।२१)

पतिके मनके अनुसार चले और सदा उसे संतोष देनेवाली हो तो वह पतिके पुण्यका आधा भाग प्राप्त करती है। स्वयं धन देकर अपने नौकर या पुत्रके अतिरिक्त किसी भी दूसरेके हाथसे दान करानेवाले पुरुषके पुण्य-कर्मोंके छठे भागको कर्ता ले लेता है। वृत्ति देनेवाला पुरुष वृत्तिभोगीके पुण्यका छठा अंश ले लेता है; किन्तु यदि उसके बदलेमें उसने अपनी या दूसरेकी सेवा न करायी हो, तभी उसे लेनेका अधिकारी होता है। इस प्रकार दूसरोंके किये हुए पुण्य और पाप बिना दिये भी सदा आते रहते हैं। इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास है, जो बहुत ही उत्तम और पुण्यमयी बुद्धि प्रदान करनेवाला है, उसे सुनो।

पूर्वकालकी बात है, अवन्तीपुरीमें धनेश्वर नामक एक ब्राह्मण रहता था। वह ब्राह्मणोचित कर्मसे भ्रष्ट, पापपरायण और खोटी बुद्धिवाला था, रस, कम्बल और चमड़ा आदि बेचकर तथा झूठ बोलकर वह जीविका चलाता था। उसका मन चोरी, वेश्यागमन, मदिरापान और जुए आदिमें सदा आसक्त रहता था। एक बार वह खरीद-बिक्रीके कामसे देश-देशान्तरमें भ्रमण करता हुआ माहिष्मतीपुरीमें जा पहुँचा, जिसकी चहारदीवारीसे सटकर बहनेवाली पापनाशिनी नर्मदा सदा सुशोभित होती रहती है। वहाँ कार्तिकका व्रत करनेवाले बहुत-से मनुष्य अनेक गाँवोंसे स्नान करनेके लिये आये थे। धनेश्वरने उन सबको देखा। कितने ही ब्राह्मण स्नान करके यज्ञ तथा देव-पूजनमें लगे थे। कुछ लोग पुराणोंका पाठ करते और कुछ लोग सुनते थे। कितने ही भक्त नाच, गान, दान और वाद्यके द्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुतिमें संलग्न थे। धनेश्वर प्रतिदिन घूम-घूमकर वैष्णवोंके दर्शन, स्पर्श तथा उनसे वार्तालाप करता था। इससे उसे श्रीविष्णुके नाम सुननेका शुभ अवसर प्राप्त होता था। इस प्रकार वह एक मासतक वहाँ टिका रहा। कार्तिक-व्रतके उद्यापनमें भक्तपुरुषोंने जो श्रीहरिके समीप जागरण किया,

उसको भी उसने देखा। उसके बाद पूर्णिमाको व्रत करनेवाले मनुष्योंने जो ब्राह्मणों और गौओंका पूजन आदि किया तथा दक्षिणा और भोजन आदि दिये, उन सबका भी उसने अवलोकन किया। तत्पश्चात् सूर्यास्तके समय श्रीशंकरजीकी प्रसन्नताके लिये जो दीपोत्सर्गकी विधि की गयी, उसपर भी धनेश्वरकी दृष्टि पड़ी। उस तिथिको भगवान् शंकरने तीनों पुरोंका दाह किया था, इसीलिये भक्तपुरुष उस दिन दीपोत्सर्गका महान् उत्सव किया करते हैं। जो मुझमें और शिवजीमें भेद-बुद्धि करता है, उसके सारे पुण्य-कर्म निष्फल हो जाते हैं—इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। धनेश्वर नर्मदाके तटपर नृत्य आदि देखता हुआ घूम रहा था। इतनेमें ही एक काले साँपने उसे काट लिया। वह व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसे गिरा देख बहुत-से मनुष्योंने दयावश उसको चारों ओरसे घेर लिया और तुलसीमिश्रित जलके द्वारा उसके मुखपर छींटे देना आरम्भ किया। देहत्यागके पश्चात् धनेश्वरको यमराजके दूतोंने बाँधा और क्रोधपूर्वक कोड़ोंसे पीटते हुए वे उसे संयमनीपुरीको ले गये। चित्रगुप्तने धनेश्वरको देखकर उसे बहुत फटकारा और उसने बचपनसे लेकर मृत्युपर्यन्त जितने दुष्कर्म किये थे, वे सब उन्होंने यमराजको बताये।

चित्रगुप्त बोले—प्रभो! बचपनसे लेकर मृत्युपर्यन्त इसका कोई पुण्य नहीं दिखायी देता। यह दुष्ट केवल पापका मूर्तिमान् स्वरूप दीख पड़ता है, अतः इसे कल्पभर नरकमें पकाया जाय।

यमराज बोले—प्रेतराज! केवल पापोंपर ही दृष्टि रखनेवाले इस दुष्टको मुद्गरोंसे पीटते हुए ले जाओ और तुरंत ही कुम्भीपाकमें डाल दो।

यमराजकी आज्ञा पाकर प्रेतराज पापी धनेश्वरको ले चला। मुद्गरोंकी मारसे उसका मस्तक विदीर्ण हो गया था। कुम्भीपाकमें तेलके खौलनेका खलखल शब्द हो रहा था। प्रेतराजने उसे तुरंत

ही उसमें डाल दिया। वह ज्यों ही कुम्भीपाकमें गिरा त्यों ही उसका तेल ठंडा हो गया—ठीक उसी तरह जैसे पूर्वकालमें भक्तप्रवर प्रह्लादको डालनेसे दैत्योंकी जलायी हुई आग बुझ गयी थी। यह महान् आश्चर्यकी बात देखकर प्रेतराजको बड़ा विस्मय हुआ। उसने बड़े वेगसे आकर यह सारा हाल यमराजको कह सुनाया। प्रेतराजकी कही हुई कौतूहलपूर्ण बात सुनकर यमने कहा—'आह यह कैसी बात है!' फिर उसे साथ ले वे उस स्थानपर आये और उस घटनापर विचार करने लगे। इतनेमें ही देवर्षि नारद हँसते हुए बड़ी उतावलीके साथ वहाँ आये। यमराजने भलीभाँति उनका पूजन किया। उनसे मिलकर देवर्षि नारदजीने इस प्रकार कहा।

नारदजी बोले—सूर्यनन्दन! यह नरक भोगनेके योग्य नहीं है; क्योंकि इसके द्वारा ऐसा कर्म बन गया है जो नरकका नाश करनेवाला है। जो पुरुष पुण्य-कर्म करनेवाले लोगोंका दर्शन, स्पर्श और उनके साथ वार्तालाप करता है, वह उनके पुण्यका छठा अंश प्राप्त कर लेता है। यह तो एक मासतक श्रीहरिके कार्तिक-व्रतका अनुष्ठान करनेवाले असंख्य मनुष्योंके सम्पर्कमें रहा है; अतः उन सबके पुण्यांशका भागी हुआ है। उनकी सेवा करनेके कारण इसे सम्पूर्ण व्रतका पुण्य प्राप्त हुआ है, अतः इसके कार्तिक-व्रतसे उत्पन्न होनेवाले पुण्योंकी कोई गिनती नहीं है। कार्तिक-व्रत करनेवाले पुरुषोंके बड़े-से-बड़े पातकोंका भी भक्तवत्सल श्रीविष्णु पूर्णतया नाश कर डालते हैं। इतना ही नहीं, अन्तकालमें वैष्णव पुरुषोंने तुलसीमिश्रित नर्मदाके जलसे इसको नहलाया है और श्रीविष्णुके नामका भी श्रवण कराया है; इसलिये इसके सारे पाप नष्ट हो गये हैं। अब धनेश्वर उत्तम गति प्राप्त करनेका अधिकारी हो गया है। यह वैष्णव पुरुषोंका कृपापात्र है, अतः इसे नरकमें न पकाओ। इसको अनिच्छासे पुण्य प्राप्त

हुआ है; इसलिये यह यक्षयोनिमें रहे और सम्पूर्ण नरकोंके दर्शनमात्रसे अपने पापोंका भोग पूरा कर ले।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—प्रिये! यों कहकर देवर्षि नारदजी चले गये। फिर यमराज अपने सेवकके द्वारा उस ब्राह्मणको सम्पूर्ण नरकोंका दर्शन करानेके लिये वहाँसे ले गये। इसके बाद यमकी आज्ञाका पालन करनेवाला प्रेतराज धनेश्वरको सम्पूर्ण नरकोंके पास ले गया और उनका अवलोकन कराता हुआ इस प्रकार कहने लगा।

प्रेतराजने कहा—धनेश्वर! महान् भय देनेवाले इन घोर नरकोंकी ओर दृष्टि डालो। इनमें पापी पुरुष सदा यमराजके सेवकोंद्वारा पकाये जाते हैं। यह जो भयानक नरक दिखायी देता है, इसका नाम तप्तबालुक है। इसमें ये पापाचारी जीव अपनी देह दग्ध होनेके कारण क्रन्दन कर रहे हैं। जो मनुष्य बलिवैश्वदेवके अन्तमें भूखसे दुर्बल हो घरपर आये हुए अतिथियोंका सत्कार नहीं करते, वे अपने पापकर्मके कारण इस नरकमें कष्ट भोगते हैं। जो गुरु, अग्नि, ब्राह्मण, गौ, देवता तथा मूर्धाभिषिक्त राजाओंको लात मारते हैं, वे ही पापी यहाँ दृष्टिगोचर हो रहे हैं। यहाँ तपी हुई बालूपर चलनेके कारण इनके पैर जल गये हैं। इस नरकके छः अवान्तर भेद हैं। नाना प्रकारके पापोंके कारण इसमें आना पड़ता है। इसी प्रकार यह दूसरा महान् नरक अन्धतामिस्त्र कहलाता है। देखो, यहाँ सुईके समान मुँहवाले कीड़ोंके द्वारा पापियोंके शरीर विदीर्ण हो रहे हैं। यह नरक भयानक मुखवाले अनेक प्रकारके कीटोंसे ठसाठस भरा हुआ है। यह तीसरा क्रकच नामक नरक है। यह भी बड़ा भयानक दिखायी देता है। इसमें ये पापी मनुष्य आरेसे चीरे जानेका कष्ट भोगते हैं। असिपत्रवन आदि भेदोंसे यह नरक छः प्रकारका बताया गया है। जो दूसरोंका पत्नी और पुत्र आदिसे तथा अन्यान्य प्रियजनोंसे

विछोह कराते हैं, वे ही लोग यहाँ कष्ट भोगते हैं। तलवारके समान पत्तोंसे इनके अंग छिन्न-भिन्न हो रहे हैं और इसी भयसे ये इधर-उधर भाग रहे हैं। देखो, ये पापी कितने कष्ट भोगते हैं और किस प्रकार इधर-उधर क्रन्दन करते फिरते हैं। यह चौथा नरक तो और भी भयानक है। इसका नाम अर्गला है। देखो, यमराजके दूत नाना प्रकारके पाशोंसे बाँधकर इन पापियोंको मुद्‌गर आदिसे पीट रहे हैं और ये जोर-जोरसे चीख रहे हैं। जो साधु पुरुषों और ब्राह्मण आदिको गला पकड़कर या और किसी उपायसे कहीं आने-जानेसे रोकते हैं, वे पापी यमराजके सेवकोंद्वारा यहाँ यातनामें डाले जाते हैं। वध और भेदन आदिके द्वारा इस नरकके भी छः भेद हैं। अब पाँचवें नरकपर दृष्टिपात करो। इसका नाम कूटशाल्मलि है। यहाँ जो ये सेमल आदिके वृक्ष खड़े हैं, ये सभी जलते हुए अँगारेके समान हैं। इसमें पापियोंको यातना दी जाती है। परायी स्त्री और पराये धनका अपहरण करनेवाले तथा दूसरोंसे द्रोह करनेवाले पापी सदा ही यहाँ कष्ट भोगते हैं। यह छठा नरक और भी अद्‌भुत है। इसे रक्तपूय कहते हैं—इसमें रक्त और पीब भरा रहता है। इसकी ओर देखो तो सही, इसमें कितने ही पापी मनुष्य नीचे मुँह करके लटकाये गये हैं और भयानक कष्ट भोग रहे हैं। ये सब अभक्ष्य-भक्षण और निन्दा करनेवाले तथा चुगली खानेवाले हैं। कोई डूब रहे हैं, कोई मारे जा रहे हैं। ये सब-के-सब डरावनी आवाजके साथ चीख रहे हैं। इस नरकके भी विगन्ध आदि छः भेद हैं। धनेश्वर! अब इधर दृष्टि डालो। यह भयंकर दिखायी देनेवाला सातवाँ नरक कुम्भीपाक है। यह तेल आदि द्रव्योंके भेदसे छः प्रकारका है। यमराजके दूत महापातकी पुरुषोंको इसीमें डालकर औंटाते हैं और वे पापी इसमें अनेक हजार वर्षोंतक डूबते-उतराते रहते हैं। देखो, वे भयानक नरक सब मिलाकर बयालीस हैं। बिना

इच्छाके किया हुआ पातक शुष्क कहलाता है और इच्छापूर्वक किये हुए पातकको आर्द्र कहा गया है। आर्द्र और शुष्क आदि भेदोंसे प्रत्येक नरक दो प्रकारका है। इस प्रकार ये नरक पृथक्-पृथक् चौरासीकी संख्यामें स्थित हैं। प्रकीर्ण, अपाङ्क्तेय, मलिनीकरण, जातिभ्रंशकर, उपपातक, अतिपातक और महापातक—ये सात प्रकारके पातक माने गये हैं। इनके कारण पापी पुरुष उपर्युक्त सात नरकोंमें क्रमशः यातना भोगते हैं। तुम्हें कार्तिक-व्रत करनेवाले पुरुषोंका संसर्ग प्राप्त हो चुका था; इसलिये अधिक पुण्यराशिका संचय हो जानेसे नरकोंके कष्टसे छुटकारा मिल गया।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—सत्यभामा! इस प्रकार प्रेतराज धनेश्वरको नरकोंका दर्शन कराकर उसे यक्षलोकमें ले गया तथा वहाँ जाकर वह यक्ष हुआ।

❑❑

अशक्तावस्थामें कार्तिक-व्रतके निर्वाहका उपाय

सूतजी कहते हैं—महर्षियो! भगवान् वासुदेव अपनी प्रियतमा सत्यभामाको यह कथा सुनाकर सायंकालका सन्ध्योपासन करनेके लिये अपनी माता देवकीके भवनमें चले गये। इस पापनाशक कार्तिकमासका ऐसा ही प्रभाव बतलाया गया है। यह भगवान् विष्णुको सदा ही प्रिय है तथा भोग और मोक्षरूपी फल प्रदान करनेवाला है। रातमें भगवान् विष्णुके समीप जागना, प्रातःकाल स्नान करना, तुलसीकी सेवामें संलग्न रहना, उद्यापन करना और दीप-दान देना—ये कार्तिकमासके पाँच नियम हैं।* इन पाँचों नियमोंके पालनसे कार्तिकका व्रत करनेवाला पुरुष पूर्ण

---

* हरिजागरणं प्रातःस्नानं तुलसिसेवनम्। उद्यापनं दीपदानं व्रतान्येतानि कार्तिके॥ (११७।३)

फलका भागी होता है। वह फल भोग और मोक्ष देनेवाला बताया गया है।

ऋषि बोले—रोमहर्षणकुमार सूतजी! आपने इतिहाससहित कार्तिकमासकी विधिका भलीभाँति वर्णन किया। यह भगवान् विष्णुको प्रिय लगनेवाला तथा अत्यन्त उत्तम फल देनेवाला है। इसका प्रभाव बड़ा ही आश्चर्यजनक है। इसलिये इसका अनुष्ठान अवश्य करना चाहिये। परन्तु यदि कोई व्रत करनेवाला पुरुष संकटमें पड़ जाय या दुर्गम वनमें स्थित हो अथवा रोगोंसे पीड़ित हो तो उसे इस कल्याणमय कार्तिक-व्रतका अनुष्ठान कैसे करना चाहिये?

सूतजीने कहा—महर्षियो! ऐसे मनुष्यको भगवान् विष्णु अथवा शिवके मन्दिरमें केवल जागरण करना चाहिये। विष्णु और शिवके मन्दिर न मिलें तो किसी भी मन्दिरमें वह जागरण कर सकता है। यदि कोई दुर्गम वनमें स्थित हो अथवा आपत्तिमें फँस जाय तो वह अश्वत्थ वृक्षकी जड़के पास अथवा तुलसीके वृक्षोंके बीच बैठकर जागरण करे। जो पुरुष भगवान् विष्णुके समीप बैठकर श्रीविष्णुके नाम तथा चरित्रोंका गान करता है, उसे सहस्र गो-दानोंका फल मिलता है। बाजा बजानेवाला पुरुष वाजपेय यज्ञका फल पाता है और भगवान्‌के पास नृत्य करनेवाला पुरुष सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करनेका फल प्राप्त करता है। जो उक्त नियमोंका पालन करनेवाले मनुष्योंको धन देता है, उसे यह सब पुण्य प्राप्त होता है। उक्त नियमोंका पालन करनेवाले पुरुषोंके दर्शन और नाम सुननेसे भी उनके पुण्यका छठा अंश प्राप्त होता है। जो आपत्तिमें फँस जानेके कारण नहानेके लिये जल न पा सके अथवा जो रोगी होनेके कारण स्नान न कर सके, वह भगवान् विष्णुका नाम लेकर मार्जन कर ले। जो कार्तिक-व्रतके पालनमें प्रवृत्त होकर भी उसका उद्यापन करनेमें समर्थ न हो,

उसे चाहिये कि अपने व्रतकी पूर्तिके लिये यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराये। ब्राह्मण इस पृथ्वीपर अव्यक्तरूप श्रीविष्णुके व्यक्त स्वरूप हैं। उनके सन्तुष्ट होनेपर भगवान् सदा सन्तुष्ट होते हैं, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। जो स्वयं दीपदान करनेमें असमर्थ हो, वह दूसरोंका दीप जलाये अथवा हवा आदिसे उन दीपोंकी यत्नपूर्वक रक्षा करे। तुलसी-वृक्षके अभावमें वैष्णव ब्राह्मणका पूजन करे; क्योंकि भगवान् विष्णु अपने भक्तोंके हृदयमें सदा ही विराजमान रहते हैं। अथवा सब साधनोंके अभावमें व्रत करनेवाला पुरुष व्रतकी पूर्तिके लिये ब्राह्मणों, गौओं तथा पीपल और वटके वृक्षोंकी सेवा करे।

ऋषियोंने पूछा—सूतजी! आपने पीपल और वटको गौ तथा ब्राह्मणके समान कैसे बता दिया? वे दोनों अन्य सब वृक्षोंकी अपेक्षा अधिक पूज्य क्यों माने गये?

सूतजी बोले—महर्षियो! पीपलके रूपमें साक्षात् भगवान् विष्णु ही विराजते हैं। इसी प्रकार वट भगवान् शंकरका और पलाश ब्रह्माजीका स्वरूप है। इन तीनोंका दर्शन, पूजन और सेवन पापहारी माना गया है। दुःख, आपत्ति, व्याधि और दुष्टोंके नाशमें भी उसको कारण बताया गया है।

❑❑

कार्तिकमासका माहात्म्य और उसमें पालन करनेयोग्य नियम

सत्यभामाने कहा—प्रभो! कार्तिकमास सब मासोंमें श्रेष्ठ माना गया है। मैंने उसके माहात्म्यको विस्तारपूर्वक नहीं सुना। कृपया उसीका वर्णन कीजिये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—सत्यभामे! तुमने बड़ी उत्तम बात

पूछी है। पूर्वकालमें महात्मा सूतने शौनक मुनिसे आदरपूर्वक कार्तिक-व्रतका वर्णन किया था। वही प्रसंग मैं तुम्हें सुनाता हूँ।

सूतजीने कहा—मुनिश्रेष्ठ शौनकजी! पूर्वकालमें कार्तिकेयजीके पूछनेपर महादेवजीने जिसका वर्णन किया था, उसको आप श्रवण कीजिये।

कार्तिकेयजी बोले—पिताजी! आप वक्ताओंमें श्रेष्ठ हैं। मुझे कार्तिकमासके स्नानकी विधि बताइये, जिससे मनुष्य दुःखरूपी समुद्रसे पार हो जाते हैं। साथ ही तीर्थके जलका माहात्म्य और माघस्नानका फल भी बताइये।

महादेवजीने कहा—एक ओर सम्पूर्ण तीर्थ, समस्त दान, दक्षिणाओंसहित यज्ञ, पुष्कर, कुरुक्षेत्र, हिमालय, अक्रूरतीर्थ, काशी और शूकरक्षेत्रमें निवास तथा दूसरी ओर केवल कार्तिकमास हो तो वही भगवान् केशवको सर्वदा प्रिय है। जिसके हाथ, पैर, वाणी और मन वशमें हों तथा जिसमें विद्या, तप और कीर्ति विद्यमान हों, वही तीर्थके पूर्ण फलको प्राप्त करता है। श्रद्धारहित, नास्तिक, संशयालु और कोरी तर्कबुद्धिका सहारा लेनेवाले मनुष्य तीर्थसेवनके फलभागी नहीं होते। जो ब्राह्मण सबेरे उठकर सदा प्रातःस्नान करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो परमात्माको प्राप्त होता है। षडानन! स्नानका महत्त्व जाननेवाले पुरुषोंने चार प्रकारके स्नान बतलाये हैं—वायव्य, वारुण, ब्राह्म और दिव्य।

यह सुनकर सत्यभामा बोलीं—प्रभो! मुझे चारों स्नानोंके लक्षण बतलाइये।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—प्रिये! गोधूलिद्वारा किया हुआ स्नान वायव्य कहलाता है, सागर आदि जलाशयोंमें किये हुए स्नानको वारुण कहते हैं, '**आपो हि ष्ठा मयो**' आदि ब्राह्मण-मन्त्रोंके उच्चारणपूर्वक जो मार्जन किया जाता है उसका नाम ब्राह्म है तथा बरसते हुए मेघके जल और सूर्यकी किरणोंसे शरीरकी

शुद्धि करना दिव्य स्नान माना गया है। सब प्रकारके स्नानोंमें वारुणस्नान श्रेष्ठ है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य मन्त्रोच्चारणपूर्वक स्नान करें। परन्तु शूद्र और स्त्रियोंके लिये बिना मन्त्रके ही स्नानका विधान है। बालक, युवा, वृद्ध, पुरुष, स्त्री और नपुंसक—सब लोग कार्तिक और माघमें प्रातःस्नानकी प्रशंसा करते हैं। कार्तिकमें प्रातःकाल स्नान करनेवाले लोग मनोवांछित फल प्राप्त करते हैं।

कार्तिकेयजी बोले—पिताजी! अन्य धर्मोंका भी वर्णन कीजिये, जिनका अनुष्ठान करनेसे मनुष्य अपने समस्त पाप धोकर देवता बन जाता है।

महादेवजीने कहा—बेटा! कार्तिकमासको उपस्थित देख जो मनुष्य दूसरेका अन्न त्याग देता है, वह प्रतिदिन कृच्छ्रव्रतका फल प्राप्त करता है। कार्तिकमें तेल, मधु, काँसेके बर्तनमें भोजन और मैथुनका विशेषरूपसे परित्याग करना चाहिये। एक बार भी मांस भक्षण करनेसे मनुष्य राक्षसकी योनिमें जन्म पाता है और साठ हजार वर्षोंतक विष्ठामें डालकर सड़ाया जाता है। उससे छुटकारा पानेपर वह पापी विष्ठा खानेवाला ग्राम-शूकर होता है। कार्तिकमासमें शास्त्रविहित भोजनका नियम करनेपर अवश्य ही मोक्ष प्राप्त होता है। भगवान् विष्णुका परमधाम ही मोक्ष है। कार्तिकके समान कोई मास नहीं है, श्रीविष्णुसे बढ़कर कोई देवता नहीं है, वेदके तुल्य कोई शास्त्र नहीं है, गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है, सत्यके समान सदाचार, सत्ययुगके समान युग, रसनाके तुल्य तृप्तिका साधन, दानके सदृश सुख, धर्मके समान मित्र और नेत्रके समान कोई ज्योति नहीं है।*

---

*.. । प्रवृत्तानां तु भक्षाणां कार्तिके नियमे कृते॥
अवश्यं प्राप्यते मोक्षो विष्णोस्तत्परमं पदम्। न कार्तिकसमो मासो न देवः केशवात्परः॥
न वेदसदृशं शास्त्रं न तीर्थं गंगया समम्। न सत्येन समं वृत्तं न कृतेन समं युगम्॥

स्नान करनेवाले पुरुषोंके लिये समुद्रगामिनी पवित्र नदी प्राय: दुर्लभ होती है। कुलके अनुरूप उत्तम शीलवाली कन्या, कुलीन और शीलवान् दम्पति, जन्मदायिनी माता, विशेषत: पिता, साधु पुरुषोंके सम्मानका अवसर, धार्मिक पुत्र, द्वारकाका निवास, भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन, गोमतीका स्नान और कार्तिकका व्रत—ये सब मनुष्यके लिये प्राय: दुर्लभ हैं। चन्द्रमा और सूर्यके ग्रहणकालमें ब्राह्मणोंको पृथ्वी दान करनेसे जिस फलकी प्राप्ति होती है, वह कार्तिकमें भूमिपर शयन करनेवाले पुरुषको स्वत: प्राप्त हो जाता है। ब्राह्मण-दम्पतिको भोजन कराये, चन्दन आदिसे उनकी पूजा करे। कम्बल, नाना प्रकारके रत्न और वस्त्र दान करे। ओढ़नेके साथ ही बिछौना भी दे। तुम्हें कार्तिकमासमें जूते और छातेका भी दान करना चाहिये। कार्तिकमासमें जो मनुष्य प्रतिदिन पत्तलमें भोजन करता है, वह चौदह इन्द्रोंकी आयुपर्यन्त कभी दुर्गतिमें नहीं पड़ता। उसे सम्पूर्ण कामनाओं तथा समस्त तीर्थोंका फल प्राप्त होता है। पलाशके पत्तेपर भोजन करनेसे मनुष्य कभी नरक नहीं देखता; किन्तु वह पलाशके बिचले पत्रका अवश्य त्याग कर दे।

कार्तिकमें तिलका दान, नदीका स्नान, सदा साधुपुरुषोंका सेवन और पलाशके पत्तोंमें भोजन सदा मोक्ष देनेवाला है। कार्तिकके महीनेमें मौन-व्रतका पालन, पलाशके पत्तेमें भोजन, तिलमिश्रित जलसे स्नान, निरन्तर क्षमाका आश्रय और पृथ्वीपर शयन करनेवाला पुरुष युग-युगके उपार्जित पापोंका नाश कर डालता है। जो कार्तिकमासमें भगवान् विष्णुके सामने उषाकालतक जागरण करता है, उसे सहस्र गोदानोंका फल मिलता है। पितृपक्षमें अन्नदान करनेसे तथा ज्येष्ठ और आषाढमासमें जल देनेसे

न तृप्ती रसनातुल्या न दानसदृशं सुखम्। न धर्मसदृशं मित्रं न ज्योतिश्चक्षुषा समम्॥
(१२०। २२—२५)

मनुष्योंको जो फल मिलता है, वह कार्तिकमें दूसरोंका दीपक जलानेमात्रसे प्राप्त हो जाता है। जो बुद्धिमान् कार्तिकमें मन, वाणी और क्रियाद्वारा पुष्कर-तीर्थका स्मरण करता है, उसे लाखों-करोड़ोंगुना पुण्य होता है। माघमासमें प्रयाग, कार्तिकमें पुष्कर और वैशाखमासमें अवन्तीपुरी (उज्जैन)—ये एक युगतक उपार्जित किये हुए पापोंका नाश कर डालते हैं। कार्तिकेय! संसारमें विशेषतः कलियुगमें वे ही मनुष्य धन्य हैं, जो सदा पितरोंके उद्धारके लिये श्रीहरिका सेवन करते हैं। बेटा! बहुत-से पिण्ड देने और गयामें श्राद्ध आदि करनेकी क्या आवश्यकता है। वे मनुष्य तो हरिभजनके ही प्रभावसे पितरोंका नरकसे उद्धार कर देते हैं। यदि पितरोंके उद्देश्यसे दूध आदिके द्वारा भगवान् विष्णुको स्नान कराया जाय तो वे पितर स्वर्गमें पहुँचकर कोटि कल्पोंतक देवताओंके साथ निवास करते हैं। जो कमलके एक फूलसे भी देवेश्वर भगवान् लक्ष्मीपतिका पूजन करता है, वह एक करोड़ वर्षतकके पापोंका नाश कर देता है। देवताओंके स्वामी भगवान् विष्णु कमलके एक पुष्पसे भी पूजित और अभिवन्दित होनेपर एक हजार सात सौ अपराध क्षमा कर देते हैं। षडानन! जो मुखमें, मस्तकपर तथा शरीरमें भगवान्की प्रसादभूता तुलसीको प्रसन्नतापूर्वक धारण करता है, उसे कलियुग नहीं छूता। भगवान् विष्णुको निवेदन किये हुए प्रसादसे जिसके शरीरका स्पर्श होता है, उसके पाप और व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। शंखका जल, श्रीहरिको भक्तिपूर्वक अर्पण किया हुआ नैवेद्य, चरणोदक, चन्दन तथा प्रसादस्वरूप धूप—ये ब्रह्महत्याका भी पाप दूर करनेवाले हैं।

❑❑

शूकरक्षेत्रका माहात्म्य तथा मासोपवास-व्रतकी विधिका वर्णन

महादेवजी कहते हैं—भक्तप्रवर कार्तिकेय! अब माघस्नानका माहात्म्य सुनो। महामते! इस संसारमें तुम्हारे समान विष्णु-भक्त पुरुष नहीं हैं। चक्रतीर्थमें श्रीहरिका और मथुरामें श्रीकृष्णका दर्शन करनेसे मनुष्यको जो फल मिलता है, वही माघमासमें केवल स्नान करनेसे मिल जाता है। जो जितेन्द्रिय, शान्तचित्त और सदाचारयुक्त होकर माघमासमें स्नान करता है वह फिर कभी संसार-बन्धनमें नहीं पड़ता।

इतनी कथा सुनाकर भगवान् श्रीकृष्णने कहा—सत्यभामा! अब मैं तुम्हारे सामने शूकरक्षेत्रके माहात्म्यका वर्णन करूँगा, जिसके विज्ञानमात्रसे मेरा सान्निध्य प्राप्त होता है। पाँच योजन विस्तृत शूकरक्षेत्र मेरा मन्दिर (निवासस्थान) है। देवि! जो इसमें निवास करता है, वह गदहा हो तो भी चतुर्भुजस्वरूपको प्राप्त होता है। तीन हजार तीन सौ तीन हाथ मेरे मन्दिरका परिमाण माना गया है। देवि! जो अन्य स्थानोंमें साठ हजार वर्षोंतक तपस्या करता है, वह मनुष्य शूकरक्षेत्रमें आधे पहरतक तप करनेपर ही उतनी तपस्याका फल प्राप्त कर लेता है। कुरुक्षेत्रके सन्निहति* नामक तीर्थमें सूर्यग्रहणके समय तुला-पुरुषके दानसे जो फल बताया गया है, वह काशीमें दस गुना, त्रिवेणीमें सौगुना और गंगासागर-संगममें सहस्रगुना कहा गया है; किन्तु मेरे निवासभूत शूकरक्षेत्रमें उसका फल अनन्तगुना समझना चाहिये। भामिनि! अन्य तीर्थोंमें उत्तम विधानके साथ जो लाखों दान दिये जाते हैं, शूकरक्षेत्रमें एक ही दानसे उनके समान फल प्राप्त हो जाता है। शूकरक्षेत्र, त्रिवेणी और गंगासागर-संगममें एक बार ही स्नान

---

* महाभारतयुद्धका स्थान ही 'सन्निहति' कहलाता है। इसीको कहीं-कहीं 'विनशन-तीर्थ' भी कहा गया है।

करनेसे मनुष्यकी ब्रह्महत्या दूर हो जाती है। पूर्वकालमें राजा अलर्कने शूकरक्षेत्रका माहात्म्य श्रवण करके सातों द्वीपोंसहित पृथ्वीका राज्य प्राप्त किया था।

कार्तिकेयने कहा—भगवन्! मैं व्रतोंमें उत्तम मासोपवास-व्रतका वर्णन सुनना चाहता हूँ। साथ ही उसकी विधि एवं यथोचित फलको भी श्रवण करना चाहता हूँ।

महादेवजी बोले—बेटा! तुम्हारा विचार बड़ा उत्तम है। तुमने जो कुछ पूछा है, वह सब बताता हूँ। जैसे देवताओंमें भगवान् विष्णु, तपनेवालोंमें सूर्य, पर्वतोंमें मेरु, पक्षियोंमें गरुड़, तीर्थोंमें गंगा तथा प्रजाओंमें वैश्य श्रेष्ठ है, उसी प्रकार सब व्रतोंमें मासोपवास-व्रत श्रेष्ठ माना गया है। सम्पूर्ण व्रतोंसे, समस्त तीर्थोंसे तथा सब प्रकारके दानोंसे जो पुण्य प्राप्त होता है, वह सब मासोपवास करनेवालेको मिल जाता है। वैष्णवयज्ञके उद्देश्यसे भगवान् जनार्दनकी पूजा करनेके पश्चात् गुरुकी आज्ञा लेकर मासोपवास-व्रत करना चाहिये। शास्त्रोक्त जितने भी वैष्णवव्रत हैं, उन सबको तथा द्वादशीके पवित्र व्रतको करनेके पश्चात् मासोपवास-व्रत करना उचित है। अतिकृच्छ्र, पराक और चान्द्रायण-व्रतोंका अनुष्ठान करके गुरु और ब्राह्मणकी आज्ञासे मासोपवास-व्रत करे। आश्विनमासके शुक्लपक्षकी एकादशीको उपवास करके तीस दिनोंके लिये इस व्रतको ग्रहण करे। जो मनुष्य भगवान् वासुदेवकी पूजा करके कार्तिकमासभर उपवास करता है, वह मोक्षफलका भागी होता है। भगवान्के मन्दिरमें जाकर तीनों समय भक्तिपूर्वक सुन्दर मालती, नील-कमल, पद्म, सुगन्धित कमल, केशर, खस, कपूर, उत्तम चन्दन, नैवेद्य और धूप-दीप आदिसे श्रीजनार्दनका पूजन करे। मन, वाणी और क्रियाद्वारा श्रीगरुडध्वजकी आराधनामें लगा रहे। स्त्री, पुरुष, विधवा—जो कोई भी इस व्रतको करे, पूर्ण भक्तिके साथ इन्द्रियोंको काबूमें

रखते हुए दिन-रात श्रीविष्णुके नामोंका कीर्तन करता रहे। भक्तिपूर्वक श्रीविष्णुकी स्तुति करे। झूठ न बोले। सम्पूर्ण जीवोंपर दया करे। अन्तःकरणकी वृत्तियोंको अशान्त न होने दे। हिंसा त्याग दे। सोया हो या बैठा, श्रीवासुदेवका कीर्तन किया करे। अन्नका स्मरण, अवलोकन, सूँघना, स्वाद लेना, चर्चा करना तथा ग्रासको मुँहमें लेना—ये सभी निषिद्ध हैं। व्रतमें स्थित मनुष्य शरीरमें उबटन लगाना, सिरमें तेलकी मालिश कराना, पान खाना और चन्दन लगाना छोड़ दे तथा अन्यान्य निषिद्ध वस्तुओंका भी त्याग करे। व्रत करनेवाला पुरुष शास्त्रविरुद्ध कर्म करनेवाले व्यक्तिका स्पर्श न करे। उससे वार्तालाप भी न करे। पुरुष, सौभाग्यवती स्त्री अथवा विधवा नारी शास्त्रोक्त विधिसे एक मासतक उपवास करके भगवान् वासुदेवका पूजन करे। यह व्रत गिने-गिनाये तीस दिनोंका होता है, इससे अधिक या कम दिनोंका नहीं। मनको संयममें रखनेवाला जितेन्द्रिय पुरुष एक मासतक उपवासके नियमको पूरा करके द्वादशी तिथिको भगवान् गरुडध्वजका पूजन करे। फूल, माला, गन्ध, धूप, चन्दन, वस्त्र, आभूषण और वाद्य आदिके द्वारा भगवान् विष्णुको संतुष्ट करे। चन्दनमिश्रित तीर्थके जलसे भक्तिपूर्वक भगवान्‌को स्नान कराये। फिर उनके अंगोंमें चन्दनका लेप करके गन्ध और पुष्पोंसे शृंगार करे। फिर वस्त्र आदिका दान करके उत्तम ब्राह्मणोंको भोजन कराये, उन्हें दक्षिणा दे और प्रणाम करके उनसे त्रुटियोंके लिये क्षमा-याचना करे। इस प्रकार मासोपवासपूर्वक जनार्दनकी पूजा करके ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे मनुष्य श्रीविष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। मण्डपमें उपस्थित ब्राह्मणोंसे बारम्बार इस प्रकार कहना चाहिये—'द्विजवरो! इस व्रतमें जो कोई भी कार्य मन्त्रहीन, क्रियाहीन और सब प्रकारके साधनों एवं विधियोंसे हीन हुआ हो वह सब आपलोगोंके वचन और प्रसादसे परिपूर्ण हो जाय।'

कार्तिकेय! इस प्रकार मैंने तुमसे मासोपवासकी विधिका यथावत् वर्णन किया है।

□□

शालग्रामशिलाके पूजनका माहात्म्य

कार्तिकेयने कहा—भगवन्! आप योगियोंमें श्रेष्ठ हैं। मैंने आपके मुखसे सब धर्मोंका श्रवण किया। प्रभो! अब शालग्राम-पूजनकी विधिका विस्तारके साथ वर्णन कीजिये।

महादेवजी बोले—महामते! तुमने बहुत उत्तम बात पूछी है। वत्स! तुम जो कुछ पूछ रहे हो, उसका उत्तर देता हूँ; सुनो। शालग्रामशिलामें सदा चराचर प्राणियोंसहित समस्त त्रिलोकी लीन रहती है। जो शालग्रामशिलाका दर्शन करता, उसे मस्तक झुकाता, स्नान कराता और पूजन करता है, वह कोटि यज्ञोंके समान पुण्य तथा कोटि गोदानोंका फल पाता है। बेटा! जो पुरुष सर्वदा भगवान् विष्णुकी शालग्रामशिलाका चरणामृत पान करता है, उसने गर्भवासके भयंकर कष्टका नाश कर दिया। जो सदा भोगोंमें आसक्त और भक्तिभावसे हीन है, वह भी शालग्रामशिलाका पूजन करके भगवत्स्वरूप हो जाता है। शालग्रामशिलाका स्मरण, कीर्तन, ध्यान, पूजन और नमस्कार करनेपर कोटि-कोटि ब्रह्महत्याओंका पाप नष्ट हो जाता है। शालग्रामशिलाका दर्शन करनेसे अनेक पाप दूर हो जाते हैं। जो मनुष्य प्रतिदिन शालग्रामशिलाकी पूजा करता है, उसे न तो यमराजका भय होता है और न मरने या जन्म लेनेका ही। जिन मनुष्योंने भक्तिभावसे शालग्रामको नमस्कारमात्र कर लिया, उनको तथा मेरे भक्तोंको फिर मनुष्य-योनिकी प्राप्ति कैसे हो सकती है। वे तो मुक्तिके अधिकारी हैं। जो मेरी भक्तिके घमण्डमें आकर मेरे प्रभु भगवान् वासुदेवको नमस्कार नहीं करते, वे पापसे मोहित हैं; उन्हें मेरा भक्त नहीं समझना चाहिये।

करोड़ों कमल-पुष्पोंसे मेरी पूजा करनेपर जो फल होता है, वही शालग्रामशिलाके पूजनसे कोटिगुना होकर मिलता है, जिन लोगोंने मर्त्यलोकमें आकर शालग्रामशिलाका पूजन नहीं किया, उन्होंने न तो कभी मेरा पूजन किया और न नमस्कार ही किया। जो शालग्रामशिलाके अग्रभागमें मेरा पूजन करता है, उसने मानो लगातार इक्कीस युगोंतक मेरी पूजा कर ली। जो मेरा भक्त होकर वैष्णव पुरुषका पूजन नहीं करता वह मुझसे द्वेष रखनेवाला है। उसे तबतकके लिये नरकमें रहना पड़ता है जबतक कि चौदह इन्द्रोंकी आयु समाप्त नहीं हो जाती।

जिसके घरमें कोई वानप्रस्थी, वैष्णव अथवा संन्यासी दो घड़ी भी विश्राम करता है, उसके पितामह आठ युगोंतक अमृत भोजन करते हैं। शालग्रामशिलासे प्रकट हुए लिंगोंका एक बार भी पूजन करनेपर मनुष्य योग और सांख्यसे रहित होनेपर भी मुक्त हो जाते हैं। मेरे कोटि-कोटि लिंगोंका दर्शन, पूजन और स्तवन करनेसे जो फल मिलता है, वह एक ही शालग्रामशिलाके पूजनसे प्राप्त हो जाता है।

जो वैष्णव प्रतिदिन बारह शालग्रामशिलाओंका पूजन करता है, उसके पुण्यका वर्णन सुनो। गंगाजीके तटपर करोड़ों शिवलिंगोंका पूजन करनेसे तथा लगातार आठ युगोंतक काशीपुरीमें रहनेसे जो पुण्य होता है, वह उस वैष्णवको एक ही दिनमें प्राप्त हो जाता है। अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता—जो वैष्णव मनुष्य शालग्रामशिलाका पूजन करता है, उसके पुण्यकी गणना करनेमें मैं तथा ब्रह्माजी भी समर्थ नहीं हैं; इसलिये बेटा! मेरे भक्तोंको उचित है कि वे मेरी प्रसन्नताके लिये भक्तिपूर्वक शालग्रामशिलाका भी पूजन करें। जहाँ शालग्रामशिलारूपी भगवान् केशव विराजमान हैं, वहीं सम्पूर्ण देवता, असुर, यक्ष तथा चौदहों भुवन मौजूद हैं। अन्य देवताओंका करोड़ों बार कीर्तन करनेसे जो फल होता है,

वह भगवान् केशवका एक बार कीर्तन करनेसे ही मिल जाता है। अतः कलियुगमें श्रीहरिका कीर्तन ही सर्वोत्तम पुण्य है।* श्रीहरिका चरणोदक पान करनेसे ही समस्त पापोंका प्रायश्चित्त हो जाता है। फिर उनके लिये दान, उपवास और चान्द्रायण-व्रत करनेकी क्या आवश्यकता है।

बेटा स्कन्द! अन्य सभी शुभ कर्मोंके फलोंका माप है; किन्तु शालग्रामशिलाके पूजनसे जो फल मिलता है, उसका कोई माप नहीं। जो विष्णुभक्त ब्राह्मणको शालग्रामशिलाका दान करता है, उसने मानो सौ यज्ञोंद्वारा भगवान्‌का यजन कर लिया। जो शालग्रामशिलाके जलसे अपना अभिषेक करता है, उसने सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान कर लिया और समस्त यज्ञोंकी दीक्षा ले ली। जो प्रतिदिन भक्तिपूर्वक एक-एक सेर तिलका दान करता है, वह शालग्रामशिलाके पूजनमात्रसे उस फलको प्राप्त कर लेता है। शालग्रामशिलाको अर्पण किया हुआ थोड़ा-सा पत्र, पुष्प, फल, जल, मूल और दूर्वादल भी मेरु पर्वतके समान महान् फल देनेवाला होता है।

जहाँ शालग्रामशिला होती है, वहाँ भगवान् श्रीहरि विराजमान रहते हैं। वहाँ किया हुआ स्नान और दान काशीसे सौगुना अधिक फल देनेवाला है। प्रयाग, कुरुक्षेत्र, पुष्कर और नैमिषारण्य— ये सभी तीर्थ वहाँ मौजूद रहते हैं; अतः वहाँ उन तीर्थोंकी अपेक्षा कोटिगुना अधिक पुण्य होता है। काशीमें मिलनेवाला मोक्षरूपी महान् फल भी वहाँ सुलभ होता है। जहाँ शालग्रामशिलासे प्रकट होनेवाले भगवान् शालग्राम तथा द्वारकासे प्रकट होनेवाले भगवान् गोमतीचक्र हों तथा जहाँ इन दोनोंका संगम हो गया हो वहाँ निःसन्देह मोक्षकी प्राप्ति होती है। शालग्रामशिलाके पूजनमें मन्त्र,

* सुराणां कीर्तनैः सर्वैः कोटिभिश्च फलं कृतम्। तत्फलं कीर्तनादेव केशवे सुकृतं कलौ॥
(१२२। ३६-३७)

जप, भावना, स्तुति अथवा किसी विशेष प्रकारके आचारका बन्धन नहीं है। शालग्रामशिलाके सम्मुख विशेषत: कार्तिकमासमें आदरपूर्वक स्वस्तिकका चिह्न बनाकर मनुष्य अपनी सात पीढ़ियोंको पवित्र कर देता है। जो भगवान् केशवके समक्ष मिट्टी अथवा गेरू आदिसे छोटा-सा भी मण्डल (चौक) बनाता है, वह कोटि कल्पोंतक दिव्यलोकमें निवास करता है। श्रीहरिके मन्दिरको सजानेसे अगम्यागमन तथा अभक्ष्यभक्षण-जैसे पाप भी नष्ट हो जाते हैं। जो नारी प्रतिदिन भगवान् विष्णुके सामने चौक पूरती है, वह सात जन्मोंतक कभी विधवा नहीं होती।

❑❑

भगवत्पूजन, दीपदान, यमतर्पण, दीपावली-कृत्य, गोवर्धनपूजा और यमद्वितीयाके दिन करनेयोग्य कृत्योंका वर्णन

महादेवजी कहते हैं—जो प्रतिदिन मालतीसे भगवान् गरुड़ध्वजका पूजन करता है, वह जन्मके दु:खों और बुढ़ापेके रोगोंसे छुटकारा पाकर मुक्त हो जाता है। जिसने कार्तिकमें मालतीकी मालासे भगवान् विष्णुकी पूजा की है, उसके पापोंको भगवान् श्रीकृष्ण धो डालते हैं। चन्दन, कपूर, अरगजा, केशर, केवड़ा और दीपदान भगवान् केशवको सदा ही प्रिय हैं। कमलका पुष्प, तुलसीदल, मालती, अगस्त्यका फूल और दीपदान—ये पाँच वस्तुएँ कार्तिकमें भगवान्के लिये परम प्रिय मानी गयी हैं। कार्तिकेय! केवड़ेके फूलोंसे भगवान् हृषीकेशका पूजन करके मनुष्य उनके परम पवित्र एवं कल्याणमय धामको प्राप्त होता है। जो अगस्त्यके फूलोंसे जनार्दनका पूजन करता है, उसके दर्शनसे नरककी आग बुझ जाती है। जैसे कौस्तुभमणि और वनमालासे

भगवान्‌को प्रसन्नता होती है, उसी प्रकार कार्तिकमें तुलसीदलसे वे अधिक सन्तुष्ट होते हैं।

कार्तिकेय! अब कार्तिकमें दिये जानेवाले दीपका माहात्म्य सुनो। मनुष्यके पितर अन्य पितृगणोंके साथ सदा इस बातकी अभिलाषा करते हैं कि क्या हमारे कुलमें भी कोई ऐसा उत्तम पितृभक्त पुत्र उत्पन्न होगा जो कार्तिकमें दीपदान करके श्रीकेशवको सन्तुष्ट कर सके। स्कन्द! कार्तिकमें घी अथवा तिलके तेलसे जिसका दीपक जलता रहता है, उसे अश्वमेध यज्ञसे क्या लेना है। जिसने कार्तिकमें भगवान् केशवके समक्ष दीपदान किया है, उसने सम्पूर्ण यज्ञोंका अनुष्ठान कर लिया और समस्त तीर्थोंमें गोता लगा लिया। बेटा! विशेषतः कृष्णपक्षमें पाँच दिन बड़े पवित्र हैं। (कार्तिक कृष्णा १३ से कार्तिक शुक्ला २ तक) उनमें जो कुछ भी दान किया जाता है, वह सब अक्षय एवं सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाला होता है। लीलावती वेश्या दूसरेके रखे हुए दीपको ही जलाकर शुद्ध हो अक्षय स्वर्गको चली गयी। इसलिये रात्रिमें सूर्यास्त हो जानेपर घरमें, गोशालामें, देववृक्षके नीचे तथा मन्दिरोंमें दीपक जलाकर रखना चाहिये। देवताओंके मन्दिरोंमें, श्मशानोंमें और नदियोंके तटपर भी अपने कल्याणके लिये घृत आदिसे पाँच दिनोंतक दीपक जलाने चाहिये। ऐसा करनेसे जिनके श्राद्ध और तर्पण नहीं हुए हैं, वे पापी पितर भी दीपदानके पुण्यसे परम मोक्षको प्राप्त हो जाते हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—भामिनि! कार्तिकके कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको घरसे बाहर यमराजके लिये दीप देना चाहिये। इससे दुर्मृत्युका नाश होता है। दीप देते समय इस प्रकार कहना चाहिये—'मृत्यु', पाशधारी काल और अपनी पत्नीके साथ सूर्यनन्दन

यमराज त्रयोदशीको दीप देनेसे प्रसन्न हों।[१] कार्तिक कृष्णा चतुर्दशीको चन्द्रोदयके समय नरकसे डरनेवाले मनुष्योंको अवश्य स्नान करना चाहिये। जो चतुर्दशीको प्रातःकाल स्नान करता है, उसे यमलोकका दर्शन नहीं करना पड़ता। अपामार्ग (ओंगा या चिचड़ा), तुम्बी (लौकी), प्रपुन्नाट (चकवड़) और कट्‌फल (कायफल)—इनको स्नानके बीचमें मस्तकपर घुमाना चाहिये। इससे नरकके भयका नाश होता है। उस समय इस प्रकार प्रार्थना करे—'हे अपामार्ग! मैं हराईके ढेले, काँटे और पत्तोंसहित तुम्हें बार-बार मस्तकपर घुमा रहा हूँ। मेरे पाप हर लो।'[२] यों कहकर अपामार्ग और चकवड़को मस्तकपर घुमाये। तत्पश्चात् यमराजके नामोंका उच्चारण करके तर्पण करे। वे नाम-मन्त्र इस प्रकार हैं—**'यमाय नमः, धर्मराजाय नमः, मृत्यवे नमः, अन्तकाय नमः, वैवस्वताय नमः, कालाय नमः, सर्वभूतक्षयाय नमः, औदुम्बराय नमः, दध्नाय नमः, नीलाय नमः, परमेष्ठिने नमः, वृकोदराय नमः, चित्राय नमः, चित्रगुप्ताय नमः।'**

देवताओंका पूजन करके दीपदान करना चाहिये। इसके बाद रात्रिके आरम्भमें भिन्न-भिन्न स्थानोंपर मनोहर दीप देने चाहिये। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदिके मन्दिरोंमें, गुप्त गृहोंमें, देववृक्षोंके नीचे, सभाभवनमें, नदियोंके किनारे, चहारदीवारीपर, बगीचेमें' बावलीके तटपर, गली-कूचोंमें, गृहोद्यानमें तथा एकान्त अश्वशालाओं एवं गजशालाओंमें भी दीप जलाने चाहिये। इस प्रकार रात व्यतीत होनेपर अमावास्याको प्रातःकाल स्नान करे और भक्तिपूर्वक देवताओं तथा पितरोंका पूजन और उन्हें प्रणाम करके पार्वण

१-मृत्युना पाशहस्तेन कालेन भार्यया सह। त्रयोदश्यां दीपदानात्सूर्यजः प्रीयतामिति॥ (१२४।५)

२-सीतालोष्टसमायुक्तः सकण्टकदलान्वितः। हरपापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः॥ (१२४।११)

श्राद्ध करे; फिर दही, दूध, घी आदि नाना प्रकारके भोज्य पदार्थोंद्वारा ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उनसे क्षमा-प्रार्थना करे। तदनन्तर भगवान्‌के जागनेसे पहले स्त्रियोंके द्वारा लक्ष्मीजीको जगाये। जो प्रबोधकाल (ब्राह्ममुहूर्त)-में लक्ष्मीजीको जगाकर उनका पूजन करता है, उसे धन-सम्पत्तिकी कमी नहीं होती। तत्पश्चात् प्रातःकाल (कार्तिक शुक्ला प्रतिपदाको) गोवर्धनका पूजन करना चाहिये। उस समय गौओं तथा बैलोंको आभूषणोंसे सजाना चाहिये। उस दिन उनसे सवारीका काम नहीं लेना चाहिये तथा गायोंको दुहना भी नहीं चाहिये। पूजनके पश्चात् गोवर्धनसे इस प्रकार प्रार्थना करे—

गोवर्धनधराधार गोकुलत्राणकारक॥
विष्णुबाहुकृतोच्छ्राय गवां कोटिप्रदो भव।
या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता॥
घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु।
अग्रतः सन्तु मे गावो गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(१२४। ३१—३३)

'पृथ्वीको धारण करनेवाले गोवर्धन! आप गोकुलके रक्षक हैं। भगवान् श्रीकृष्णने आपको अपनी भुजाओंपर उठाया था। आप मुझे कोटि-कोटि गौएँ प्रदान करें। लोकपालोंकी जो लक्ष्मी धेनुरूपमें स्थित हैं और यज्ञके लिये घृत प्रदान करती हैं, वे मेरे पापको दूर करें। मेरे आगे गौएँ रहें, मेरे पीछे भी गौएँ रहें, मेरे हृदयमें गौओंका निवास हो तथा मैं भी गौओंके बीचमें निवास करूँ।'

कार्तिक शुक्लपक्षकी द्वितीयाको पूर्वाह्णमें यमकी पूजा करे। यमुनामें स्नान करके मनुष्य यमलोकको नहीं देखता। कार्तिक शुक्ला द्वितीयाको पूर्वकालमें यमुनाने यमराजको अपने घरपर

सत्कारपूर्वक भोजन कराया था। उस दिन नारकी जीवोंको यातनासे छुटकारा मिला और उन्हें तृप्त किया गया। वे पापमुक्त होकर सब बन्धनोंसे छुटकारा पा गये और सब-के-सब यहाँ अपनी इच्छाके अनुसार संतोषपूर्वक रहे। उन सबने मिलकर एक महान् उत्सव मनाया, जो यमलोकके राज्यको सुख पहुँचानेवाला था। इसीलिये यह तिथि तीनों लोकोंमें यमद्वितीयाके नामसे विख्यात हुई; अतः विद्वान् पुरुषोंको उस दिन अपने घर भोजन नहीं करना चाहिये। वे बहिनके घर जाकर उसीके हाथसे मिले हुए अन्नको, जो पुष्टिवर्धक है, स्नेहपूर्वक भोजन करें तथा जितनी बहिनें हों, उन सबको पूजा और सत्कारके साथ विधिपूर्वक सुवर्ण, आभूषण एवं वस्त्र दें। सगी बहिनके हाथका अन्न भोजन करना उत्तम माना गया है। उसके अभावमें किसी भी बहिनके हाथका अन्न भोजन करना चाहिये। वह बलको बढ़ानेवाला है। जो लोग उस दिन सुवासिनी बहिनोंको वस्त्र-दान आदिसे सन्तुष्ट करते हैं, उन्हें एक सालतक कलह एवं शत्रुके भयका सामना नहीं करना पड़ता। यह प्रसंग धन, यश, आयु, धर्म, काम एवं अर्थकी सिद्धि करनेवाला है।

❑❑

प्रबोधिनी एकादशी और उसके जागरणका महत्त्व तथा भीष्मपंचक-व्रतकी विधि एवं महिमा

महादेवजी कहते हैं—सुरश्रेष्ठ कार्तिकेय! अब प्रबोधिनी एकादशीका माहात्म्य सुनो। यह पापका नाशक, पुण्यकी वृद्धि करनेवाला तथा तत्त्वचिन्तनपरायण पुरुषोंको मोक्ष देनेवाला है। समुद्रसे लेकर सरोवरोंतक जितने तीर्थ हैं, वे भी तभीतक गरजते हैं जबतक कि कार्तिकमें श्रीहरिकी प्रबोधिनी तिथि नहीं आती।

प्रबोधिनीको एक ही उपवाससे सहस्र अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञोंका फल मिल जाता है। इस चराचर त्रिलोकीमें जो वस्तु अत्यन्त दुर्लभ मानी गयी है, उसे भी माँगनेपर हरिबोधिनी एकादशी प्रदान करती है। यदि हरिबोधिनी एकादशीको उपवास किया जाय तो वह अनायास ही ऐश्वर्य, सन्तान, ज्ञान, राज्य और सुख-सम्पत्ति प्रदान करती है। मनुष्यके किये हुए मेरुपर्वतके समान बड़े-बड़े पापोंको भी हरिबोधिनी एकादशी एक ही उपवाससे भस्म कर डालती है। जो प्रबोधिनी एकादशीको स्वभावसे ही विधिपूर्वक उपवास करता है, वह शास्त्रोक्त फलका भागी होता है। प्रबोधिनी एकादशीको रात्रिमें जागरण करनेसे पहलेके हजारों जन्मोंकी की हुई पापराशि रूईके ढेरकी भाँति भस्म हो जाती है।

रात्रिमें जागरण करते समय भगवत्सम्बन्धी गीत, वाद्य, नृत्य और पुराणोंके पाठकी भी व्यवस्था करनी चाहिये। धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्प, गन्ध, चन्दन, फल और अर्घ्य आदिसे भगवान्‌की पूजा करनी चाहिये। मनमें श्रद्धा रखकर दान देना और इन्द्रियोंको संयममें रखना चाहिये। सत्यभाषण, निद्राका अभाव, प्रसन्नता, शुभ कर्ममें प्रवृत्ति, मनमें आश्चर्य और उत्साह, आलस्य आदिका त्याग, भगवान्‌की परिक्रमा तथा नमस्कार—इन बातोंका यत्नपूर्वक पालन करना चाहिये। महाभाग! प्रत्येक पहरमें उत्साह और उमंगके साथ भक्तिपूर्वक भगवान्‌की आरती उतारनी चाहिये। जो पुरुष भगवान्‌के समीप एकाग्रचित्त होकर उपर्युक्त गुणोंसे युक्त जागरण करता है, वह पुनः इस पृथ्वीपर जन्म नहीं लेता। जो धनकी कृपणता छोड़कर इस प्रकार भक्तिभावसे एकादशीको जागरण करता है, वह परमात्मामें लीन हो जाता है। जो कार्तिकमें पुरुषसूक्तके द्वारा प्रतिदिन श्रीहरिका पूजन करता है, उसके द्वारा करोड़ों वर्षोंतक भगवान्‌की पूजा सम्पन्न हो जाती

है। जो मनुष्य पांचरात्रमें बतायी हुई यथार्थ विधिके अनुसार कार्तिकमें भगवान्‌का पूजन करता है, वह मोक्षका भागी होता है। जो कार्तिकमें '**ॐ नमो नारायणाय**' इस मन्त्रके द्वारा श्रीहरिकी अर्चना करता है, वह नरकके दुःखोंसे छुटकारा पाकर अनामय पदको प्राप्त होता है। जो कार्तिकमें श्रीविष्णुसहस्रनाम तथा गजेन्द्रमोक्षका पाठ करता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता। उसके कुलमें जो सैकड़ों, हजारों पुरुष उत्पन्न हो चुके हैं, वे सभी श्रीविष्णुधामको प्राप्त होते हैं। अतः एकादशीको जागरण अवश्य करना चाहिये। जो कार्तिकमें रात्रिके पिछले पहरमें भगवान्‌के सामने स्तोत्रगान करता है, वह अपने पितरोंके साथ श्वेतद्वीपमें निवास करता है। जो मनुष्य कार्तिकशुक्लपक्षमें एकादशीका व्रत पूर्ण करके प्रातःकाल सुन्दर कलश दान करता है, वह श्रीहरिके परमधामको प्राप्त होता है।

व्रतधारियोंमें श्रेष्ठ कार्तिकेय! अब मैं तुम्हें महान् पुण्यदायक व्रत बताता हूँ। यह व्रत कार्तिकके अन्तिम पाँच दिनोंमें किया जाता है। इसे भीष्मजीने भगवान् वासुदेवसे प्राप्त किया था, इसलिये यह व्रत भीष्मपंचक नामसे प्रसिद्ध है। भगवान् केशवके सिवा दूसरा कौन ऐसा है, जो इस व्रतके गुणोंका यथावत् वर्णन कर सके। वसिष्ठ, भृगु और गर्ग आदि मुनीश्वरोंने सत्ययुगके आदिमें कार्तिकके शुक्लपक्षमें इस पुरातन धर्मका अनुष्ठान किया था। राजा अम्बरीषने भी त्रेता आदि युगोंमें इस व्रतका पालन किया था। ब्राह्मणोंने ब्रह्मचर्यपालन, जप तथा हवन-कर्म आदिके द्वारा और क्षत्रियों एवं वैश्योंने सत्य-शौच आदिके पालनपूर्वक इस व्रतका अनुष्ठान किया है। सत्यहीन मूढ़ मनुष्योंके लिये इस व्रतका अनुष्ठान असम्भव है। जो इस व्रतको पूर्ण कर लेता है, उसने मानो सब कुछ कर लिया।

कार्तिकके शुक्लपक्षमें एकादशीको विधिपूर्वक स्नान करके पाँच दिनोंका व्रत ग्रहण करे। व्रती पुरुष प्रातः-स्नानके बाद मध्याह्नके समय भी नदी, झरने या पोखरेपर जाकर शरीरमें गोबर लगाकर विशेषरूपसे स्नान करे। फिर चावल, जौ और तिलोंके द्वारा क्रमशः देवताओं, ऋषियों और पितरोंका तर्पण करे। मौनभावसे स्नान करके धुले हुए वस्त्र पहन दृढ़तापूर्वक व्रतका पालन करे। ब्राह्मणको पंचरत्न दान दे। लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुका प्रतिदिन पूजन करे। इस पंचकव्रतके अनुष्ठानसे मनुष्य वर्षभरके सम्पूर्ण व्रतोंका फल प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य निम्नांकित मन्त्रोंसे भीष्मको जलदान देता और अर्घ्यके द्वारा उनका पूजन (सत्कार) करता है, वह मोक्षका भागी होता है। मन्त्र इस प्रकार है—

वैयाघ्रपदगोत्राय सांकृत्यप्रवराय च।
अनपत्याय भीष्माय उदकं भीष्मवर्मणे॥
वसूनामवताराय शन्तनोरात्मजाय च।
अर्घ्यं ददामि भीष्माय आजन्मब्रह्मचारिणे॥

(१२५। ४३-४४)

'जिनका गोत्र वैयाघ्रपद और प्रवर सांकृत्य है, उन सन्तानरहित राजर्षि भीष्मके लिये यह जल समर्पित है। जो वसुओंके अवतार तथा राजा शन्तनुके पुत्र हैं, उन आजन्म ब्रह्मचारी भीष्मको मैं अर्घ्य दे रहा हूँ।'

तत्पश्चात् सब पापोंका हरण करनेवाले श्रीहरिका पूजन करे। उसके बाद प्रयत्नपूर्वक भीष्मपंचक-व्रतका पालन करना चाहिये। भगवान्‌को भक्तिपूर्वक जलसे स्नान कराये। फिर मधु, दूध, घी, पंचगव्य, गन्ध और चन्दनमिश्रित जलसे उनका अभिषेक करे। तदनन्तर सुगन्धित चन्दन और केशरमें कपूर और खस मिलाकर भगवान्‌के श्रीविग्रहपर उसका लेप करे। फिर गन्ध और धूपके

साथ सुन्दर फूलोंसे श्रीहरिकी पूजा करे तथा उनकी प्रसन्नताके लिये भक्तिपूर्वक घी मिलाया हुआ गूगल जलाये। लगातार पाँच दिनोंतक भगवान्‌के समीप दिन-रात दीपक जलाये रखे। देवाधिदेव श्रीविष्णुको नैवेद्यके रूपमें उत्तम अन्न निवेदन करे। इस प्रकार भगवान्‌का स्मरण और उन्हें प्रणाम करके उनकी अर्चना करे। फिर '**ॐ नमो वासुदेवाय**' इस मन्त्रका एक सौ आठ बार जप करे तथा उस षडक्षर मन्त्रके अन्तमें '**स्वाहा**' पद जोड़कर उसके उच्चारणपूर्वक घृतमिश्रित तिल, चावल और जौ आदिसे अग्निमें हवन करे। सायंकालमें सन्ध्योपासना करके भगवान् गरुडध्वजको प्रणाम करे और पूर्ववत् षडक्षर मन्त्रका जप करके व्रत-पालनपूर्वक पृथ्वीपर शयन करे। इन सब विधियोंका पाँच दिनोंतक पालन करते रहना चाहिये।

एकादशीको सनातन भगवान् हृषीकेशका पूजन करके थोड़ा-सा गोबर खाकर उपवास करे। फिर द्वादशीको व्रती पुरुष भूमिपर बैठकर मन्त्रोच्चारणके साथ गोमूत्र-पान करे। त्रयोदशीको दूध पीकर रहे। चतुर्दशीको दही भोजन करे। इस प्रकार शरीरकी शुद्धिके लिये चार दिनोंका लंघन करके पाँचवें दिन स्नानके पश्चात् विधिपूर्वक भगवान् केशवकी पूजा करे और भक्तिके साथ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे। पापबुद्धिका परित्याग करके बुद्धिमान् पुरुष ब्रह्मचर्यका पालन करे। शाकाहारसे अथवा मुनियोंके अन्न (तिन्नीके चावल)-से इस प्रकार निर्वाह करते हुए मनुष्य श्रीकृष्णके पूजनमें संलग्न रहे। उसके बाद रात्रिमें पहले पंचगव्य-पान करके पीछे अन्न भोजन करे। इस प्रकार भलीभाँति व्रतकी पूर्ति करनेसे मनुष्य शास्त्रोक्त फलका भागी होता है। इस भीष्म-व्रतका अनुष्ठान करनेसे मनुष्य परमपदको प्राप्त करता है। स्त्रियोंको भी अपने स्वामीकी आज्ञा लेकर इस धर्मवर्धक व्रतका अनुष्ठान करना चाहिये। विधवाएँ भी मोक्ष-

सुखकी वृद्धि, सम्पूर्ण कामनाओंकी पूर्ति तथा पुण्यकी प्राप्तिके लिये इस व्रतका पालन करें। भगवान् विष्णुके चिन्तनमें लगे रहकर प्रतिदिन बलिवैश्वदेव भी करना चाहिये। यह आरोग्य और पुत्र प्रदान करनेवाला तथा महापातकोंका नाश करनेवाला है। एकादशीसे लेकर पूर्णिमातकका जो व्रत है, वह इस पृथ्वीपर भीष्मपंचकके नामसे विख्यात है। भोजनपरायण पुरुषके लिये इस व्रतका निषेध है। इस व्रतका पालन करनेपर भगवान् विष्णु शुभ फल प्रदान करते हैं।

महादेवजी कहते हैं—यह मोक्षदायक शास्त्र अनधिकारी पुरुषोंके सामने प्रकाशित करनेयोग्य नहीं है। जो मनुष्य इसका श्रवण करता है, वह मोक्षको प्राप्त होता है। कार्तिकेय! इस व्रतको यत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिये। जो त्यागी मनुष्य हैं, वे भी यदि इस व्रतका अनुष्ठान करें तो उनके पुण्यको बतलानेमें मैं असमर्थ हूँ। इस प्रकार कार्तिकमासका जो कुछ भी फल है, वह सब मैंने बतला दिया।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—देवदेव भगवान् शंकरने पुत्रकी मंगल-कामनासे यह व्रत उसे बताया था। पिताके वचन सुनकर कार्तिकेय आनन्दमग्न हो गये। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस कार्तिकमाहात्म्यका पाठ करता, सुनता और सुनकर हृदयमें धारण करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। इस माहात्म्यका श्रवण करनेमात्रसे ही धन, धान्य, यश, पुत्र, आयु और आरोग्यकी प्राप्ति हो जाती है।

पद्मपुराणान्तर्गत कार्तिकमास-माहात्म्य सम्पूर्ण

❑❑

माघ-माहात्म्य

वसिष्ठजीका दिलीपसे तथा भृगुजीका विद्याधरसे माघस्नानकी महिमा बताना तथा माघस्नानसे विद्याधरकी कुरूपताका दूर होना

ऋषियोंने कहा—लोमहर्षण सूतजी! अब हमें माघका माहात्म्य सुनाइये, जिसको सुननेसे लोगोंका महान् संशय दूर हो जाय।

सूतजी बोले—मुनिवरो! आपलोगोंको साधुवाद देता हूँ। आप भगवान् श्रीकृष्णके शरणागत भक्त हैं; इसीलिये प्रसन्नता और भक्तिके साथ आपलोग बार-बार भगवान्की कथाएँ पूछा करते हैं। मैं आपके कथनानुसार माघ-माहात्म्यका वर्णन करूँगा; जो अरुणोदयकालमें स्नान करके इसका श्रवण करते हैं, उनके पुण्यकी वृद्धि और पापका नाश होता है। एक समयकी बात है, राजाओंमें श्रेष्ठ महाराज दिलीपने यज्ञका अनुष्ठान पूरा करके ऋषियोंद्वारा मंगल-विधान होनेके पश्चात् अवभृथ-स्नान किया। उस समय सम्पूर्ण नगरनिवासियोंने उनका बड़ा सम्मान किया। तदनन्तर राजा अयोध्यामें रहकर प्रजाजनोंकी रक्षा करने लगे। वे समय-समयपर वसिष्ठजीकी अनुमति लेकर प्रजावर्गका पालन किया करते थे। एक दिन उन्होंने वसिष्ठजीसे कहा—'भगवन्! आपके प्रसादसे मैंने आचार, दण्डनीति, नाना प्रकारके राजधर्म, चारों वर्णों और आश्रमोंके कर्म, दान, दानकी विधि, यज्ञ, यज्ञके विधान, अनेकों व्रत, उनके उद्यापन तथा भगवान् विष्णुकी आराधना आदिके सम्बन्धमें बहुत कुछ सुना है। अब माघस्नानका फल सुननेकी इच्छा है। मुने! जिस विधिसे इसको करना चाहिये, वह मुझे बताइये।'

वसिष्ठजीने कहा—राजन्! मैं तुम्हें माघस्नानका फल बतलाता हूँ, सुनो। जो लोग होम, यज्ञ तथा इष्टापूर्त कर्मोंके बिना ही उत्तम

गति प्राप्त करना चाहते हों, वे माघमें प्रातःकाल बाहरके जलमें स्नान करें। जो गौ, भूमि, तिल, वस्त्र, सुवर्ण और धान्य आदि वस्तुओंका दान किये बिना ही स्वर्गलोकमें जाना चाहते हों, वे माघमें सदा प्रातःकाल स्नान करें। जो तीन-तीन राततक उपवास, कृच्छ्र और पराक आदि व्रतोंके द्वारा अपने शरीरको सुखाये बिना ही स्वर्ग पाना चाहते हों, उन्हें भी माघमें सदा प्रातःकाल स्नान करना चाहिये। वैशाखमें जल और अन्नका दान उत्तम है, कार्तिकमें तपस्या और पूजाकी प्रधानता है तथा माघमें जप, होम और दान—ये तीन बातें विशेष हैं। जिन लोगोंने माघमें प्रातःस्नान, नाना प्रकारका दान और भगवान् विष्णुका स्तोत्र-पाठ किया है, वे ही दिव्यधाममें आनन्दपूर्वक निवास करते हैं। प्रिय वस्तुके त्याग और नियमोंके पालनसे माघ सदा धर्मका साधक होता है और अधर्मकी जड़ काट देता है। यदि सकामभावसे माघस्नान किया जाय तो उससे मनोवांछित फलकी सिद्धि होती है और निष्कामभावसे स्नान आदि करनेपर वह मोक्ष देनेवाला होता है। निरन्तर दान करनेवाले, वनमें रहकर तपस्या करनेवाले और सदा अतिथि-सत्कारमें संलग्न रहनेवाले पुरुषोंको जो दिव्यलोक प्राप्त होते हैं, वे ही माघस्नान करनेवालोंको भी मिलते हैं। अन्य पुण्योंसे स्वर्गमें गये हुए मनुष्य पुण्य समाप्त होनेपर वहाँसे लौट आते हैं; किन्तु माघस्नान करनेवाले मानव कभी वहाँसे लौटकर नहीं आते। माघस्नानसे बढ़कर कोई पवित्र और पापनाशक व्रत नहीं है। इससे बढ़कर कोई तप और इससे बढ़कर कोई महत्त्वपूर्ण साधन नहीं है। यही परम हितकारक और तत्काल पापोंका नाश करनेवाला है। महर्षि भृगुने मणिपर्वतपर विद्याधरसे कहा था—'जो मनुष्य माघके महीनेमें, जब उषःकालकी लालिमा बहुत अधिक हो, गाँवसे बाहर नदी या पोखरेमें नित्य स्नान करता है,

वह पिता और माताके कुलकी सात-सात पीढ़ियोंका उद्धार करके स्वयं देवताओंके समान शरीर धारण कर स्वर्गलोकमें चला जाता है।'

दिलीपने पूछा—ब्रह्मन्! ब्रह्मर्षि भृगुने किस समय मणिपर्वतपर विद्याधरको धर्मोपदेश किया था—बतानेकी कृपा करें।

वसिष्ठजी बोले—राजन्! प्राचीन कालमें एक समय बारह वर्षोंतक वर्षा नहीं हुई। इससे सारी प्रजा उद्विग्न और दुर्बल होकर दसों दिशाओंमें चली गयी। उस समय हिमालय और विन्ध्यपर्वतके बीचका प्रदेश खाली हो गया। स्वाहा, स्वधा, वषट्कार और वेदाध्ययन—सब बंद हो गये। समस्त लोकमें उपद्रव होने लगा। धर्मका तो लोप हो ही गया था, प्रजाका भी अभाव हो गया। भूमण्डलपर फल, मूल, अन्न और पानीकी बिलकुल कमी हो गयी। उन दिनों नाना प्रकारके वृक्षोंसे आच्छादित नर्मदा नदीके रमणीय तटपर महर्षि भृगुका आश्रम था। वे उस आश्रमसे शिष्योंसहित निकलकर हिमालय पर्वतकी शरणमें गये। वहाँ कैलासगिरिके पश्चिममें मणिकूट नामका पर्वत है, जो सोने और रत्नोंका ही बना हुआ है। उस परम रमणीय श्रेष्ठ पर्वतको देखकर अकालपीड़ित महर्षि भृगुका मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्होंने वहीं अपना आश्रम बना लिया। उस मनोहर शैलपर वनों और उपवनोंमें रहते हुए सदाचारी भृगुजीने दीर्घकालतक भारी तपस्या की।

इस प्रकार जब ब्रह्मर्षि भृगुजी वहाँ अपने आश्रमपर निवास करते थे, एक समय एक विद्याधर अपनी पत्नीके साथ पर्वतसे नीचे उतरा। वे दोनों मुनिके पास आये और उन्हें प्रणाम करके अत्यन्त दुःखी हो एक ओर खड़े हो गये। उन्हें इस अवस्थामें देख ब्रह्मर्षिने मधुर वाणीसे पूछा—'विद्याधर! प्रसन्नताके साथ बताओ, तुम दोनों इतने दुःखी क्यों हो?'

विद्याधरने कहा—द्विजश्रेष्ठ! मेरे दुःखका कारण सुनिये। मैं पुण्यका फल पाकर देवलोकमें गया। वहाँ देवताका शरीर, दिव्य नारीका सुख और दिव्य भोगोंका अनुभव प्राप्त करके भी मेरा मुँह बाघका-सा हो गया। न जाने यह किस दुष्कर्मका फल उपस्थित हुआ है। यही सोच-सोचकर मेरे मनको कभी शान्ति नहीं मिलती। ब्रह्मन्! एक और भी कारण है, जिससे मेरा मन व्याकुल हो रहा है। यह मेरी कल्याणमयी पत्नी बड़ी मधुरभाषिणी तथा सुन्दरी है। स्वर्गलोकमें शील, उदारता, गुणसमूह, रूप और यौवनकी सम्पत्तिद्वारा इसकी समानता करनेवाली एक भी स्त्री नहीं है। कहाँ तो यह देवमुखी सुन्दरी रमणी और कहाँ मेरे-जैसा व्याघ्रमुख पुरुष? ब्रह्मन्! मैं इसी बातकी चिन्ता करके मन-ही-मन सदा जलता रहता हूँ।

भृगुजीने कहा—विद्याधरश्रेष्ठ! पूर्वजन्ममें तुम्हारे द्वारा जो अनुचित कर्म हुआ है, वह सुनो। निषिद्ध कर्म कितना ही छोटा क्यों न हो, परिणाममें वह भयंकर हो जाता है। तुमने पूर्वजन्ममें माघके महीनेमें एकादशीको उपवास करके द्वादशीके दिन शरीरमें तेल लगा लिया था। इसीसे तुम्हारा मुँह व्याघ्रके समान हो गया। पुण्यमयी एकादशीका व्रत करके द्वादशीको तेलका सेवन करनेसे पूर्वकालमें इलानन्दन पुरूरवाको भी कुरूप शरीरकी प्राप्ति हुई थी। वे अपने शरीरको कुरूप देख उसके दुःखसे बहुत दुःखी हुए और गिरिराज हिमालयपर जाकर गंगाजीके किनारे स्नान आदिसे पवित्र हो प्रसन्नतापूर्वक कुशासनपर बैठे। राजाने अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियोंको वशमें करके हृदयमें भगवान्‌का ध्यान करना आरम्भ किया। उन्होंने ध्यानमें देखा—भगवान्‌का श्रीविग्रह नूतन नील मेघके समान श्याम है। उनके नेत्र कमलदलके समान विशाल हैं। वे अपने हाथोंमें शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण

किये हुए हैं। उनका श्रीअंग पीताम्बरसे ढका है। वक्षःस्थलमें कौस्तुभमणि अपना प्रकाश फैला रही है तथा वे गलेमें वनमाला धारण किये हुए हैं। इस प्रकार श्रीहरिका चिन्तन करते हुए राजाने प्राणवायुके मार्गको भीतर ही रोक लिया और नासिकाके अग्रभागपर दृष्टि जमाये कुण्डलिनीके मुखको ऊपर उठाकर स्वयं सुषुम्णा नाडीमें स्थित हो गये। इस तरह एक मासतक निराहार रहकर उन्होंने दुष्कर तपस्या की।

इस थोड़े दिनोंकी तपस्यासे ही भगवान् संतुष्ट हो गये। उन्होंने राजाके सात जन्मोंकी आराधनाका स्मरण करके उन्हें स्वयं प्रकट हो प्रत्यक्ष दर्शन दिया। उस दिन माघ शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथि थी, सूर्य मकर राशिपर स्थित थे। भगवान् वासुदेवने बड़ी प्रसन्नताके साथ चक्रवर्ती नरेश पुरूरवापर शंखका जल छोड़ा और उन्हें अत्यन्त सुन्दर एवं कमनीय रूप प्रदान किया। वह रूप इतना मनोहर था, जिससे देवलोककी नायिका उर्वशी भी आकृष्ट हो गयी और उसने पुरूरवाको पतिरूपमें प्राप्त करनेकी अभिलाषा की। इस प्रकार राजा पुरूरवा भगवान्‌से वरदान पाकर कृतकृत्य हो अपने नगरमें लौट आये। विद्याधर! कर्मकी गति ऐसी ही है। इसे जानकर भी तुम क्यों खिन्न होते हो? यदि तुम अपने मुखकी कुरूपता दूर करना चाहते हो तो मेरे कहनेसे शीघ्र ही मणिकूट-नदीके जलमें माघस्नान करो। वह प्राचीन पापोंका नाश करनेवाला है। तुम्हारे भाग्यसे माघ बिलकुल निकट है। आजसे पाँच दिनके बाद ही माघमास आरम्भ हो जायगा। तुम पौषके शुक्लपक्षकी एकादशीसे ही नीचे वेदीपर सोया करो और एक महीनेतक निराहार रहकर तीनों समय स्नान करो। भोगोंको त्यागकर जितेन्द्रियभावसे तीनों काल भगवान् विष्णुकी पूजा करते रहो। विद्याधरश्रेष्ठ! जिस दिन माघ शुक्ला एकादशी आयेगी, उस दिनतक तुम्हारे सारे पाप जलकर भस्म

हो जायँगे। फिर द्वादशीके पवित्र दिनको मैं मन्त्रपूत कल्याणमय जलसे अभिषेक करके तुम्हारा मुख कामदेवके समान सुन्दर कर दूँगा। फिर देवमुख होकर इस सुन्दरीके साथ तुम सुखपूर्वक क्रीड़ा करते रहना।

विद्याधर! माघके स्नानसे विपत्तिका नाश होता है और माघके स्नानसे पाप नष्ट हो जाते हैं। माघ सब व्रतोंसे बढ़कर है तथा यह सब प्रकारके दानोंका फल प्रदान करनेवाला है। पुष्कर, कुरुक्षेत्र, ब्रह्मावर्त, पृथूदक, अविमुक्तक्षेत्र (काशी), प्रयाग तथा गंगा-सागर-संगममें दस वर्षोंतक शौच-सन्तोषादि नियमोंका पालन करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह माघके महीनेमें तीन दिनोंतक प्रातःस्नान करनेसे ही मिल जाता है। जिनके मनमें दीर्घकालतक स्वर्गलोकके भोग भोगनेकी अभिलाषा हो, उन्हें सूर्यके मकर राशिपर रहते समय जहाँ कहीं भी जल मिले, प्रातःकाल स्नान करना चाहिये। आयु, आरोग्य, रूप, सौभाग्य एवं उत्तम गुणोंमें जिनकी रुचि हो, उन्हें सूर्यके मकर राशिपर रहनेतक प्रातःकाल अवश्य स्नान करना चाहिये। जो नरकसे डरते हैं और दरिद्रताके महासागरसे जिन्हें त्रास होता है, उन्हें सर्वथा प्रयत्नपूर्वक माघमासमें प्रातःकाल स्नान करना चाहिये। देवश्रेष्ठ! दरिद्रता, पाप और दुर्भाग्यरूपी कीचड़को धोनेके लिये माघस्नानके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है। अन्य कर्मोंको यदि अश्रद्धापूर्वक किया जाय तो वे बहुत थोड़ा फल देते हैं; किन्तु माघस्नान यदि श्रद्धाके बिना भी विधिपूर्वक किया जाय तो वह पूरा-पूरा फल देता है। गाँवसे बाहर नदी या पोखरेके जलमें जहाँ कहीं भी निष्काम या सकामभावसे माघस्नान करनेवाला पुरुष इस लोक और परलोकमें दुःख नहीं देखता। जैसे चन्द्रमा कृष्णपक्षमें क्षीण होता और शुक्लपक्षमें बढ़ता है, उसी प्रकार माघमासमें स्नान करनेपर पाप क्षीण होता और पुण्यराशि बढ़ती है। जैसे

समुद्रमें नाना प्रकारके रत्न उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार माघस्नानसे आयु, धन और स्त्री आदि सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं। जैसे कामधेनु और चिन्तामणि मनोवांछित भोग देती हैं, उसी प्रकार माघस्नान सब मनोरथोंको पूर्ण करता है। सत्ययुगमें तपस्याको, त्रेतामें ज्ञानको, द्वापरमें भगवान्‌के पूजनको और कलियुगमें दानको उत्तम माना गया है; परन्तु माघका स्नान सभी युगोंमें श्रेष्ठ समझा गया है।* सबके लिये, समस्त वर्णों और आश्रमोंके लिये माघका स्नान धर्मकी धारावाहिक वृष्टि करता है।

भृगुजीके ये वचन सुनकर वह विद्याधर उसी आश्रमपर ठहर गया और माघमासमें भृगुजीके साथ ही उसने विधिपूर्वक पर्वतीय नदीके कुण्डमें पत्नीसहित स्नान किया। महर्षि भृगुके अनुग्रहसे विद्याधरने अपना मनोरथ प्राप्त कर लिया। फिर वह देवमुख होकर मणिपर्वतपर आनन्दपूर्वक रहने लगा। भृगुजी उसपर कृपा करके बहुत प्रसन्न हुए और पुनः विन्ध्यपर्वतपर अपने आश्रममें चले आये। उस विद्याधरका मणिमय पर्वतकी नदीमें माघस्नान करनेमात्रसे कामदेवके समान मुख हो गया तथा भृगुजी भी नियम समाप्त करके शिष्योंसहित विन्ध्याचल पर्वतकी घाटीमें उतरकर नर्मदा-तटपर आये।

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! महर्षि भृगुके द्वारा विद्याधरके प्रति कहा हुआ यह माघ-माहात्म्य सम्पूर्ण भुवनका सार है तथा नाना प्रकारके फलोंसे विचित्र जान पड़ता है। जो प्रतिदिन इसका श्रवण करता है, वह देवताकी भाँति समस्त सुन्दर भोगोंको प्राप्त कर लेता है।

❑❑

* कृते तपः परं ज्ञानं त्रेतायां यजनं तथा। द्वापरे च कलौ दानं माघः सर्वयुगेषु च॥ (२२१। ८०)

मृगशृंग मुनिका भगवान्‌से वरदान प्राप्त करके अपने घर लौटना

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! मैं माघमासका प्रभाव बतलाता हूँ, सुनो। इसे भक्तिपूर्वक सुनकर मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। प्राचीन रथन्तर कल्पके सत्ययुगमें कुत्स नामके एक ऋषि थे, जो ब्रह्माजीके पुत्र थे। वे बड़े ही तेजस्वी और निष्पाप थे। उन्होंने कर्दम ऋषिकी सुन्दरी कन्याके साथ विधिपूर्वक विवाह किया। उसके गर्भसे मुनिके वत्स नामक पुत्र हुआ, जो वंशको बढ़ानेवाला था। वत्सकी पाँच वर्षकी अवस्था होनेपर पिताने उनका उपनयन-संस्कार करके उन्हें गायत्री-मन्त्रका उपदेश किया। अब वे ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए भृगुकुलमें निवास करने लगे। प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल अग्निहोत्र, तीनों समय स्नान और भिक्षाके अन्नका भोजन करते थे। इन्द्रियोंको काबूमें रखते, काला मृगचर्म धारण करते और सदा स्वाध्यायमें संलग्न रहते थे। पैरसे लेकर शिखातक लंबा पलाशका डंडा, जिसमें कोई छेद न हो, लिये रहते थे। उनके कटिभागमें मूँजकी मेखला शोभा पाती थी। हाथमें सदा कमण्डलु धारण करते, स्वच्छ कौपीन पहनते, शुद्ध भावसे रहते और स्वच्छ यज्ञोपवीत धारण करते थे। उनका मस्तक समिधाओंकी भस्मसे सुशोभित था। वे सबके नयनोंको प्रिय जान पड़ते थे। प्रतिदिन माता, पिता, गुरु, आचार्य, अन्यान्य बड़े-बूढ़ों, संन्यासियों तथा ब्रह्मवादियोंको प्रणाम करते थे। बुद्धिमान् वत्स ब्रह्मयज्ञमें तत्पर रहते और सदा शुभ कर्मोंका अनुष्ठान किया करते थे। वे हाथमें पवित्री धारण करके देवताओं, ऋषियों और पितरोंका तर्पण करते थे। फूल, चन्दन और गन्ध आदिको कभी हाथसे छूते भी नहीं थे। मौन होकर भोजन करते। मधु, पिण्याक और खारा नमक नहीं खाते

थे। खड़ाऊँ नहीं पहनते थे तथा सवारीपर नहीं चढ़ते। शीशेमें मुँह नहीं देखते। दन्तधावन, ताम्बूल और पगड़ी आदिसे परहेज रखते थे। नीला, लाल तथा पीला वस्त्र, खाट, आभूषण तथा और भी जो-जो वस्तुएँ ब्रह्मचर्य-आश्रमके प्रतिकूल बतायी गयी हैं, उन सबका वे स्पर्शतक नहीं करते थे; सदा शान्तभावसे सदाचारमें ही तत्पर रहते थे।

ऐसे आचारवान् और विशेषतः ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले वत्स मुनि सूर्यके मकर राशिपर रहते माघमासमें भक्तिपूर्वक प्रातःस्नान करते थे। वे उस समय विशेषरूपसे शरीरकी शुद्धि करते थे। आकाशमें जब इने-गिने तारे रह जाते थे, उस समय—ब्रह्मवेलामें तो वे नित्यस्नान करते थे और फिर जब आधे सूर्य निकल आते, उस समय भी माघका स्नान करते थे। वे मन-ही-मन अपने भाग्यकी सराहना करने लगे—'अहो! इस पश्चिमवाहिनी कावेरी नदीमें स्नानका अवसर मिलना प्रायः मनुष्योंके लिये कठिन है, तो भी मैंने मकरार्कमें यहाँ स्नान किया। वास्तवमें मैं बड़ा भाग्यवान् हूँ। समुद्रमें मिली हुई जितनी नदियाँ हैं, उन सबका प्रवाह जहाँ पश्चिम या उत्तरकी ओर है, उस स्थानका प्रयागसे भी अधिक महत्त्व बतलाया गया है। मैंने अपने पूर्वपुण्योंके प्रभावसे आज कावेरीका पश्चिमगामी प्रवाह प्राप्त किया है। वास्तवमें मैं कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ।' इस प्रकार सोचते हुए वे प्रसन्न होकर कावेरीके जलमें तीनों काल स्नान करते थे। उन्होंने कावेरीके पश्चिमगामी प्रवाहमें तीन सालतक माघ-स्नान किया। उसके पुण्यसे उनका अन्तःकरण शुद्ध हो गया। वे ममता और कामनासे रहित हो गये। तदनन्तर माता, पिता और गुरुकी आज्ञा लेकर वे सर्वपापनाशक कल्याणतीर्थमें आ गये। उस सरोवरमें भी एक मासतक माघस्नान करके ब्रह्मचारी वत्स मुनि तपस्या

करने लगे। राजन्! इस प्रकार उन्हें उत्तम तपस्या करते देख भगवान् विष्णु प्रसन्न होकर उनके आगे प्रत्यक्ष प्रकट हुए और बोले—'महाप्राज्ञ मृगशृंग! मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ।' यों कहकर भगवान् पुरुषोत्तमने उनके ब्रह्मरन्ध्र-(मस्तक)का स्पर्श किया।

तब वत्स मुनि समाधिसे विरत हो जाग उठे और उन्होंने अपने सामने ही भगवान् विष्णुको उपस्थित देखा। वे सहस्र सूर्योंके समान तेजस्वी कौस्तुभमणिरूप आभूषणसे अत्यन्त भासमान दिखायी देते थे। तब मुनिने बड़े वेगसे उठकर भगवान्‌को प्रणाम किया और बड़े भावसे सुन्दर स्तुति की।

भगवान् हृषीकेशकी स्तुति और नमस्कार करके वत्स मुनि अपने मस्तकपर हाथ जोड़े चुपचाप भगवान्‌के सामने खड़े हो गये। उस समय उनके नेत्रोंसे आनन्दके आँसू बह रहे थे और सारे शरीरमें रोमांच हो आया था।

तब श्रीभगवान्‌ने कहा—मृगशृंग! तुम्हारी इस स्तुतिसे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। माघमासमें इस सरोवरके जलमें जो तुमने स्नान और तप किये हैं, इससे मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। मुने! तुम निरन्तर कष्ट सहते-सहते थक गये हो। दक्षिणाओंसहित यज्ञ, दान, अन्यान्य नियम तथा यमोंके पालनसे भी मुझे उतना संतोष नहीं होता, जितना माघके स्नानसे होता है। पहले तुम मुझसे वर माँगो। फिर मैं तुम्हें मनोवांछित वस्तु प्रदान करूँगा। मृगशृंग! तुम मेरी प्रसन्नताके लिये मैं जो आज्ञा दूँ, उसका पालन करो। इस समय तुम्हारे ब्रह्मचर्यसे जिस प्रकार ऋषियोंको सन्तोष हुआ है, उसी प्रकार तुम यज्ञ करके देवताओंको और सन्तान उत्पन्न करके पितरोंको संतुष्ट करो। मेरे सन्तोषके लिये ये दोनों कार्य तुम्हें सर्वथा करने चाहिये। अगले जन्ममें तुम ब्रह्माजीके पुत्र महाज्ञानी ऋभुनामक जीवन्मुक्त ब्राह्मण होओगे और निदाघको

वेदान्तवाक्यजन्य ज्ञानका उपदेश करके पुनः परमधामको प्राप्त होओगे।

मृगशृंग बोले—देवदेव! सम्पूर्ण देवताओंद्वारा वन्दित जगन्नाथ! आप यहाँ सदा निवास करें और सबको सब प्रकारके भोग प्रदान करते रहें। आप सदा सब जीवोंको सब तरहकी सम्पत्ति प्रदान करें। भगवन्! यदि मैं आपका कृपापात्र हूँ तो यही एक वर, जिसे निवेदन कर चुका हूँ, देनेकी कृपा करें। कमलनयन! चरणोंमें पड़े हुए भक्तोंका दुःख दूर करनेवाले अच्युत! आप मुझपर प्रसन्न होइये। शरणागतवत्सल! मैं आपकी शरणमें आया हूँ।

भगवान् विष्णु बोले—मृगशृंग! एवमस्तु, मैं सदा यहाँ निवास करूँगा। जो लोग यहाँ मेरा पूजन करेंगे, उन्हें सब प्रकारकी सम्पत्ति हाथ लगेगी। विशेषतः जब सूर्य मकर राशिपर हों, उस समय इस सरोवरमें स्नान करनेवाले मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो मेरे परमपदको प्राप्त होंगे। व्यतीपात योगमें, अयन प्रारम्भ होनेके दिन, संक्रान्तिके समय, विषुव योगमें, पूर्णिमा और अमावास्या तिथिको तथा चन्द्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहणके अवसरपर यहाँ स्नान करके यथाशक्ति दान देनेसे और तुम्हारे मुखसे निकले हुए इस स्तोत्रका मेरे सामने पाठ करनेसे मनुष्य मेरे लोकमें प्रतिष्ठित होगा।

भगवान् गोविन्दके यों कहनेपर उन ब्राह्मणकुमारने पुनः प्रणाम किया और भक्तोंके अधीन रहनेवाले श्रीहरिसे फिर एक प्रश्न किया—'कृपानिधे! देवेश्वर! मैं तो कुत्स मुनिका पुत्र वत्स हूँ; फिर मुझे आपने मृगशृंग कहकर क्यों सम्बोधित किया?'

श्रीभगवान् बोले—ब्रह्मन्! इस कल्याण-सरोवरके तटपर जब तुम तपस्या करनेमें लगे थे, उस समय जो मृग प्रतिदिन यहाँ पानी पीने आते थे, वे निर्भय होकर तुम्हारे शरीरमें अपने सींग

रगड़ा करते थे। इसीसे श्रेष्ठ महर्षि तुम्हें मृगशृंग कहते हैं। आजसे सब लोग तुम्हें मृगशृंग ही कहेंगे।

यों कहकर सबको सब कुछ प्रदान करनेवाले भगवान् सर्वेश्वर वहाँ रहने लगे। तदनन्तर मृगशृंग मुनिने भगवान्‌का पूजन किया और उनकी आज्ञा लेकर वे उस पर्वतसे चले गये। संसारका उपकार करनेके लिये उन्होंने गृहस्थ-धर्मको स्वीकार करनेका निश्चय किया और अपने अन्तःकरणमें निरन्तर वे आदिपुरुष कमलनयन भगवान् विष्णुका चिन्तन करने लगे। अपनी जन्मभूमि भोजराजनगरमें घर आकर उन्होंने माता और पिताको नमस्कार करके अपना सारा समाचार कह सुनाया। माता-पिताके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू छलक आये। उन्होंने पुत्रको छातीसे लगाकर बारम्बार उसका मस्तक सूँघा और प्रेमपूर्वक अभिनन्दन किया। वत्स अपने गुरुको प्रणाम करके फिर स्वाध्यायमें लग गये। पिता, माता और गुरु—तीनोंकी प्रतिदिन सेवा करते हुए उन्होंने सम्पूर्ण वेदोंका अध्ययन किया और गुरुकी आज्ञा ले विधिपूर्वक व्रतस्नान और उत्सर्गका कार्य पूर्ण किया। तत्पश्चात् महामना मृगशृंग अपने पितासे इस प्रकार बोले—'तात! पुत्रकी उत्पत्तिके लिये पिता और माताको जो क्लेश सहने पड़ते हैं, उनका बदला सौ वर्षोंमें भी नहीं चुकाया जा सकता; अतः पुत्रको उचित है कि वह माता-पिता तथा गुरुका भी सदा ही प्रिय करे। इन तीनोंके अत्यन्त सन्तुष्ट होनेपर सब तपस्या पूर्ण हो जाती है। इन तीनोंकी सेवाको ही सबसे बड़ा तप कहा गया है। इनकी आज्ञाका उल्लंघन करके जो कुछ भी किया जाता है, वह कभी सिद्ध नहीं होता। विद्वान् पुरुष इन्हीं तीनोंकी आराधना करके तीनों लोकोंपर विजय पाता है। जिससे इन तीनोंको संतोष हो, वही मनुष्योंके लिये चारों पुरुषार्थ कहा गया है; इसके सिवा जो

कुछ भी है, वह उपधर्म कहलाता है। मनुष्यको उचित है कि वह अखण्ड ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए पितासे क्रमशः तीन, दो या एक वेदका अध्ययन करनेके पश्चात् गृहस्थ-आश्रममें प्रवेश करे। यदि पत्नी अपने वशमें रहे तो गृहस्थाश्रमसे बढ़कर दूसरी कोई वस्तु नहीं है। पति और पत्नीकी अनुकूलता धर्म, अर्थ और कामकी सिद्धिका प्रधान कारण है। यदि स्त्री अनुकूल हो तो स्वर्गसे क्या लेना है—घर ही स्वर्ग हो जाता है और यदि पत्नी विपरीत स्वभावकी मिल गयी तो नरकमें जानेकी क्या आवश्यकता है—यहीं नरकका दृश्य उपस्थित हो जाता है। सुखके लिये गृहस्थाश्रम स्वीकार किया जाता है; किन्तु वह सुख पत्नीके अधीन है। यदि पत्नी विनयशील हो तो धर्म, अर्थ और कामकी प्राप्ति निश्चित है।

जो गृहकार्यमें चतुर, सन्तानवती, पतिव्रता, प्रिय वचन बोलनेवाली और पतिके अधीन रहनेवाली है—ऐसी उपर्युक्त गुणोंसे युक्त नारी स्त्रीके रूपमें साक्षात् लक्ष्मी है। इसलिये अपने समान वर्णकी उत्तम लक्षणोंवाली भार्यासे विवाह करना चाहिये। जो पिताके गोत्र अथवा माताके सपिण्डवर्गमें उत्पन्न न हुई हो, वह स्त्री विवाह करनेयोग्य होती है तथा उसीसे द्विजोंके धर्मकी वृद्धि होती है।

जिसको कोई रोग न हो, जिसके भाई हो, जो अवस्था और कदमें अपनेसे कुछ छोटी हो, जिसका मुख सौम्य हो तथा जो मधुर भाषण करनेवाली हो, ऐसी भार्याके साथ द्विजको विवाह करना चाहिये। जिसका नाम पर्वत, नक्षत्र, वृक्ष, नदी, सर्प, पक्षी तथा नौकरोंके नामपर न रखा गया हो, जिसके नाममें कोमलता हो, ऐसी कन्यासे बुद्धिमान् पुरुषको विवाह करना चाहिये।

इस प्रकार उत्तम लक्षणोंकी परीक्षा करके ही किसी कन्याके साथ विवाह करना उचित है। उत्तम लक्षण और अच्छे आचरणवाली

कन्या पतिकी आयु बढ़ाती है, अतः पिताजी! ऐसी भार्या कहाँ मिलेगी?

कुत्सने कहा—परम बुद्धिमान् मृगशृंग! इसके लिये कोई विचार न करो। तुम्हारे-जैसे सदाचारी पुरुषके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है। जो सदाचारहीन, आलसी, माघ-स्नान न करनेवाले, अतिथि-पूजासे दूर रहनेवाले, एकादशीको उपवास न करनेवाले, महादेवजीकी भक्तिसे शून्य, माता-पितामें भक्ति न रखनेवाले, गुरुको सन्तोष न देनेवाले, गौओंकी सेवासे विमुख, ब्राह्मणोंका हित न चाहनेवाले, यज्ञ, होम और श्राद्ध न करनेवाले, दूसरोंको न देकर अकेले खानेवाले, दान, धर्म और शीलसे रहित तथा अग्निहोत्र न करके भोजन करनेवाले हैं, ऐसे लोगोंके लिये ही वैसी स्त्रियाँ दुर्लभ हैं। बेटा! प्रातःकाल स्नान करनेपर माघका महीना विद्या, निर्मल कीर्ति, आरोग्य, आयु, अक्षय धन, समस्त पापोंसे मुक्ति तथा इन्द्रलोक प्रदान करता है। बेटा! माघमास सौभाग्य, सदाचार, सन्तान-वृद्धि, सत्संग, सत्य, उदारभाव, ख्याति, शूरता और बल—सब कुछ देता है। कहाँतक गिनाऊँ, वह क्या-क्या नहीं देता। पुण्यात्मन्! कमलके समान नेत्रोंवाले भगवान् विष्णु माघस्नान करनेसे तुमपर बहुत प्रसन्न हैं।

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! पिताके ये सत्य वचन सुनकर मृगशृंग मुनि मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने पिताके चरणोंमें मस्तक झुकाकर पुनः प्रणाम किया और दिन-रात वे अपने हृदयमें श्रीहरिका ही चिन्तन करने लगे।

❑❑

मृगशृंग मुनिके द्वारा माघके पुण्यसे एक हाथीका उद्धार तथा मरी हुई कन्याओंका जीवित होना

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! भोजपुरमें उचथ्य नामक एक श्रेष्ठ मुनि थे। उनके कमलके समान नेत्रोंवाली एक कन्या थी, जिसका नाम सुवृत्ता था। वह माघमासमें प्रतिदिन सबेरे ही उठकर अपनी कुमारी सखियोंके साथ कावेरी नदीके पश्चिमगामी प्रवाहमें स्नान किया करती थी। स्नानके समय वह इस प्रकार प्रार्थना करती—'देवि! तुम सह्य-पर्वतकी घाटीसे निकलकर श्रीरंगक्षेत्रमें प्रवाहित होती हो। श्रीकावेरी! तुम्हें नमस्कार है। मेरे पापोंका नाश करो। मरुद्वृधे! तुम बड़ी सौभाग्यशालिनी हो। माघमासमें जो लोग तुम्हारे जलमें स्नान करते हैं, उनके बड़े-बड़े पापोंको हर लेती हो। माता! मुझे मंगल प्रदान करो। पश्चिमवाहिनी कावेरी! मुझे पति, धन, पुत्र, सम्पूर्ण मनोरथ और पातिव्रत्य-पालनकी शक्ति दो।' यों कहकर सुवृत्ता कावेरीको प्रणाम करती और जब कुछ-कुछ सूर्यका उदय होने लगता, उसी समय वह नित्यस्नान किया करती थी। इस प्रकार उसने तीन वर्षोंतक माघस्नान किया। उसका उत्तम चरित्र तथा गृहकार्यमें चतुरता देखकर पिताका मन बड़ा प्रसन्न रहता था। वे सोचने लगे—अपनी कन्याका विवाह किससे करूँ? इसी बीचमें कुत्स मुनिने अपने पुत्र ब्रह्मचारी वत्सका विवाह करनेके लिये उचथ्यकी सुमुखी कन्या सुवृत्ताका वरण करनेका विचार किया। सुवृत्ता बड़ी सुन्दरी थी। उसमें अनेक शुभ लक्षण थे। वह बाहर-भीतरसे शुद्ध तथा नीरोग थी। उस समय उसकी कहीं तुलना नहीं थी। वत्स मुनिने उससे विवाह करनेकी अभिलाषा की।

एक दिन सुवृत्ता अपनी तीन सखियोंके साथ माघस्नान करनेके

लिये अरुणोदयके समय कावेरीके तटपर आयी। उसी समय एक भयानक जंगली हाथी पानीसे निकला। उसे देखकर सुवृत्ता आदि कन्याएँ भयसे व्याकुल होकर भागीं। हाथी भी बहुत दूरतक उनके पीछे-पीछे गया। चारों कन्याएँ वेगसे दौड़नेके कारण हाँफने लगीं और तिनकोंसे ढँके हुए एक बहुत बड़े जलशून्य कुएँमें गिर पड़ीं। कुएँमें गिरते ही उनके प्राण निकल गये। जब वे घर लौटकर नहीं आयीं, तब माता-पिता उनकी खोज करते हुए इधर-उधर भटकने लगे। उन्होंने वन-वनमें घूमकर झाड़ी-झाड़ी छान डाली। आगे जानेपर उन्हें एक गहरा कुआँ दिखायी दिया, जो तिनकोसे ढँका होनेके कारण प्रायः दृष्टिमें नहीं आता था। उन्होंने देखा, वे कमललोचना कन्याएँ कुएँके भीतर निर्जीव होकर पड़ी हैं। उनकी माताएँ कन्याओंके पास चली गयीं और शोकग्रस्त हो बारम्बार उन्हें छातीसे लगाकर 'विमले! कमले! सुवृत्ते! सुरसे! आदि नाम ले-लेकर विलाप करने लगीं।

कन्याओंकी माताएँ जब इस प्रकार जोर-जोरसे क्रन्दन कर रही थीं, उसी समय तपस्याके भण्डार, कान्तिमान्, धीर तथा जितेन्द्रिय, श्रीमान् मृगशृंग मुनि वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने मन-ही-मन एक उपाय सोचा और सोचकर उन्हें आश्वासन देते हुए कहा—'जबतक इन कमलनयनी कन्याओंको जीवित न कर दूँ तबतक आपलोग इनके सुन्दर शरीरकी रक्षा करें।' यों कहकर मुनि परम पावन कावेरीके तटपर गये और कण्ठभर पानीमें खड़े हो, मुख एवं भुजाओंको ऊपर उठाये सूर्यदेवकी ओर देखते हुए मृत्यु देवताकी स्तुति करने लगे। इसी बीचमें एक समय वही हाथी पानीके भीतरसे उठा और उन ब्राह्मण मुनिको मारनेके लिये सूँड़ उठाये बड़े वेगसे उनके समीप आया। हाथीका क्रोध देखकर

भी मुनिवर मृगशृंग जलसे विचलित नहीं हुए, अपितु, चित्रलिखित-से चुपचाप खड़े रहे। पास आनेपर एक ही क्षणमें उस गजराजका क्रोध चला गया। वह बिलकुल शान्त हो गया। उसने मुनिको सूँड़से पकड़कर अपनी पीठपर बिठा लिया। मुनि उसके भावको समझ गये। उसके कंधेपर सुखपूर्वक बैठनेसे उन्हें बड़ा सन्तोष हुआ और जप समाप्त करके हाथमें जल ले 'मैंने आठ दिनोंके माघस्नानका पुण्य तुम्हें दे दिया।' यों कहकर उन्होंने शीघ्र ही वह जल हाथीके मस्तकपर छोड़ दिया। इससे गजराज पापरहित हो गया और मानो इस बातको स्वयं भी समझते हुए उसने प्रलयकालीन मेघके समान बड़े जोरसे गर्जना की। उसकी इस गर्जनासे भी मुनिके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने कृपापूर्वक उस गजराजकी ओर देखकर उसके ऊपर अपना हाथ फेरा। मुनिके हाथका स्पर्श होनेसे उसने हाथीका शरीर त्याग दिया और आकाशमें देवताकी भाँति दिव्यरूप धारण किये दृष्टिगोचर हुआ। उस रूपमें उसे देखकर मुनीश्वरको बड़ा विस्मय हुआ।

तब दिव्यरूपधारी उस जीवने कहा—मुनीश्वर! मैं कृतार्थ हो गया, क्योंकि आपने मुझे अत्यन्त निन्दित एवं पापमयी पशुयोनिसे मुक्त कर दिया। दयानिधे! अब मैं अपना सारा वृत्तान्त बतलाता हूँ, सुनिये। पूर्वकालकी बात है, नैषध नगरमें विश्वगुप्त नामसे प्रसिद्ध परम धर्मात्मा तथा स्वधर्मपालनमें तत्पर एक वैश्य रहते थे। मैं उन्हींका पुत्र था। मेरा नाम धर्मगुप्त था। स्वाध्याय, यजन, दान, सूद लेना, पशुपालन, गोरक्षा, खेती और व्यापार—यही सब मेरा काम था। द्विजश्रेष्ठ! मैं [अनुचित] काम और दम्भसे सदा दूर ही रहा। सत्य बोलता और किसीकी निन्दा नहीं करता था। इन्द्रियोंको काबूमें रखकर अपनी स्त्रीसे ही अनुराग करता था

और परायी स्त्रियोंके सम्पर्कसे बचा रहता था। मुझमें राग, भय और क्रोध नहीं थे। लोभ और मत्सरको भी मैंने छोड़ रखा था। दान देता, यज्ञ करता, देवताओंके प्रति भक्ति रखता और गौओं तथा ब्राह्मणोंके हितमें संलग्न रहता था। सदा धर्म, अर्थ और कामका सेवन करता तथा व्यापारके काममें कभी किसीको धोखा नहीं देता था। ब्राह्मणलोग जब यज्ञ करते, उस समय उन्हें बिना माँगे ही धन देता था। समयपर श्राद्ध तथा सम्पूर्ण देवताओंका पूजन करता था। अनेक प्रकारके सुगन्धित द्रव्य, बहुत-से पशु, दूध-दही, मट्ठा, गोबर, घास, लकड़ी, फल, मूल, नमक, जायफल, पीपल, अन्न, सागके बीज, नाना प्रकारके वस्त्र, धातु, ईखके रससे तैयार होनेवाली वस्तुएँ और अनेक प्रकारके रस बेचा करता था। जो दूसरोंको देता था, वह तौलमें कम नहीं रहता था और जो औरोंसे लेता, वह अधिक नहीं होता था। जिन रसोंके बेचनेसे पाप होता है, उनको छोड़कर अन्य रसोंको बेचा करता था। बेचनेमें छल-कपटसे काम नहीं लेता था। जो मनुष्य साधु पुरुषोंको व्यापारमें ठगता है, वह घोर नरकमें पड़ता है तथा उसका धन भी नष्ट हो जाता है। मैं सब देवताओं, ब्राह्मणों तथा गौओंकी प्रतिदिन सेवा करता और पाखण्डी लोगोंसे दूर रहता था। ब्रह्मन्! किसी भी प्राणीसे मन, वाणी और क्रियाद्वारा ईर्ष्या किये बिना ही जो जीविका चलायी जाती है, वही परम धर्म है। मैं ऐसी ही जीविकासे जीवन-निर्वाह करता था।

इस प्रकार धर्मके मार्गसे चलकर मैंने एक करोड़ स्वर्णमुद्राओंका उपार्जन किया। मेरे एक ही पुत्र था जो सम्पूर्ण गुणोंमें श्रेष्ठ था। मैंने अपने सारे धनको दो भागोंमें बाँटकर आधा तो पुत्रको दे दिया और आधा अपने लिये रखा। अपने हिस्सेका धन लेकर

पोखरा खुदवाया। नाना प्रकारके वृक्षोंसे युक्त बगीचा लगवाया। अनेक मण्डपोंसे सुशोभित देवमन्दिर बनवाया। मरुभूमिके मार्गोंमें पौंसले और कुएँ बनवाये तथा ठहरनेके लिये धर्मशालाएँ तैयार करायीं। कन्यादान, गोदान और भूमिदान किये। तिल, चावल, गेहूँ और मूँग आदिका भी दान किया। उड़द, धान, तिल और घी आदिका दान तो मैंने बहुत बार किया।

तदनन्तर रसके चमत्कारोंका वर्णन करनेवाला कोई कापालिक मेरे पास आया और कौतूहल पैदा करनेके लिये कुछ करामात दिखाकर उसने मुझे अपने मायाजालमें फँसाकर ठग लिया। उसकी करतूतें देखकर उसके प्रति मेरा विश्वास बढ़ गया और रसवाद—चाँदी, सोना आदि बनानेके नामपर मेरा सारा धन बरबाद हो गया। उस कापालिकने मुझे भ्रममें डालकर बहुत दिनोंतक भटकाया। उसके लिये धन दे-देकर मैं दरिद्र हो गया। माघका महीना आया और मैंने दस दिनोंतक सूर्योदयके समय महानदीमें स्नान किया; किन्तु बुढ़ापेके कारण इससे अधिक समयतक मैं स्नानका नियम चलानेमें असमर्थ हो गया। इसी बीचमें मेरा पुत्र देशान्तरमें चला गया। घोड़े मर गये। खेती नष्ट हो गयी और बेटेने वेश्या रख ली। फिर भी भाई-बन्धु यह सोचकर कि यह बेचारा बूढ़ा, धर्मात्मा और पुण्यवान् है, धर्मके ही उद्देश्यसे मुझे कुछ सूखा अन्न और भात दे दिया करते थे। अब मैं अपना धर्म बेचकर कुटुम्बका पालन-पोषण करने लगा, केवल माघस्नानके फलको नहीं बेच सका। एक दिन जिह्वाकी लोलुपताके कारण दूसरेके घरपर खूब गलेतक ठूँसकर मिठाई खा ली। इससे अजीर्ण हो गया। अजीर्णसे अतिसारकी बीमारी हुई और उससे मेरी मृत्यु हो गयी। केवल माघस्नानके प्रभावसे मैं एक मन्वन्तरतक स्वर्गमें

देवराज इन्द्रके पास रहा और पुण्यकी समाप्ति हो जानेपर हाथीकी योनिमें उत्पन्न हुआ। जो लोग धर्म बेचते हैं, वे हाथी ही होते हैं। विप्रवर! इस समय आपने हाथीकी योनिसे भी मेरा उद्धार कर दिया। मुझे स्वर्गकी प्राप्ति होनेके लिये आपने पुण्यदान किया है। मुनीश्वर! मैं कृतार्थ हो गया, कृतार्थ हो गया, कृतार्थ हो गया। आपको नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है।

यों कहकर वह स्वर्गको चला गया। सच है, सत्पुरुषोंका संग उत्तम गति प्रदान करनेवाला होता है। इस प्रकार महानुभाव मृगशृंग वैश्यको हाथीकी योनिसे मुक्त करके स्वयं गलेतक पानीमें खड़े हो सूर्यनन्दन यमराजकी स्तुति करने लगे—

ॐ यम, धर्मराज, मृत्यु, अन्तक, वैवस्वत, काल, सर्वभूतक्षय, औदुम्बर, दध्न, नील, परमेष्ठी, वृकोदर, चित्र और चित्रगुप्त—इन चौदह नामोंसे पुकारे जानेवाले भगवान् यमराजको नमस्कार है।

जिनका मुख दाढ़ोंके कारण विकराल प्रतीत होता है और टेढ़ी भौंहोंसे युक्त आँखें क्रूरतापूर्ण जान पड़ती हैं, जिनके शरीरमें ऊपरकी ओर उठे हुए बड़े-बड़े रोम हैं तथा ओठ भी बहुत लम्बे दिखायी देते हैं, ऐसे आप यमराजको नमस्कार है।

आपके अनेक भुजाएँ हैं, अनन्त नख हैं तथा कज्जलगिरिके समान काला शरीर और भयंकर रूप है। आपको नमस्कार है।

भगवन्! आपका वेष बड़ा भयानक है। आप पापियोंको भय देते, कालदण्डसे धमकाते और सब प्रकारके अस्त्र-शस्त्र धारण करते हैं। बहुत बड़ा भैंसा आपका वाहन है। आपके नेत्र दहकते हुए अँगारोंके समान जान पड़ते हैं। आप महान् हैं। मेरु पर्वतके समान आपका विशाल रूप है। आप लाल माला और वस्त्र धारण करते हैं। आपको नमस्कार है।

कल्पान्तके मेघोंकी भाँति जिनकी गम्भीर गर्जना और प्रलयकालीन वायुके समान प्रचण्ड वेग है, जो समुद्रको भी पी जाते, सम्पूर्ण जगत्‌को ग्रास बना लेते, पर्वतोंको भी चबा जाते और मुखसे आग उगलते हैं, उन भगवान् यमराजको नमस्कार है।

भगवन्! अत्यन्त घोर और अग्निके समान तेजस्वी कालरूप मृत्यु तथा बहुत-से रोग आपके पास सेवामें उपस्थित रहते हैं। आपको नमस्कार है।

आप भयानक मारी और अत्यन्त भयंकर महामारीके साथ रहते हैं। पापिष्ठोंके लिये आपका ऐसा ही स्वरूप है। आपको बारम्बार नमस्कार है।

वास्तवमें तो आपका मुख खिले हुए कमलके समान प्रसन्नतासे पूर्ण है। आपके नेत्रोंमें करुणा भरी है। आप पितृस्वरूप हैं। आपको नमस्कार है। आपके केश अत्यन्त कोमल हैं और नेत्र भौंहोंकी रेखासे सुशोभित हैं। मुखके ऊपर मूँछें बड़ी सुन्दर जान पड़ती हैं। पके हुए बिम्बफलके समान लाल ओठ आपकी शोभा बढ़ाते हैं। आप दो भुजाओंसे युक्त, सुवर्णके समान कान्तिमान् और सदा प्रसन्न रहनेवाले हैं। आपको नमस्कार है।

आप सब प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित, रत्नमय सिंहासनपर विराजमान, श्वेत माला और श्वेत वस्त्र धारण करनेवाले तथा श्वेत छत्रसे सुशोभित हैं। आपके दोनों ओर दो दिव्य नारियाँ खड़ी होकर हाथोंमें सुन्दर चँवर लिये डुला रही हैं। आपको नमस्कार है।

गलेके रत्नमय हारसे आप बड़े सुन्दर जान पड़ते हैं। रत्नमय कुण्डल आपके कानोंकी शोभा बढ़ाते हैं। आपके हार और भुजबंद भी रत्नके ही हैं तथा आपके किरीटमें नाना प्रकारके रत्न जड़े हुए हैं। आपकी कृपादृष्टि सीमाका अतिक्रमण कर जाती

है। आप मित्रभावसे सबको देखते हैं। सब प्रकारकी सम्पत्तियाँ आपको समृद्धिशाली बनाती हैं। आप सौभाग्यके परम आश्रय हैं तथा धर्म और अधर्मके ज्ञानमें निपुण सभासद् आपकी उपासना करते हैं। आपको नमस्कार है।

संयमनीपुरीकी सभामें शुभ्र रूपवाले धर्म, शुभ लक्षण सत्य, चन्द्रमाके समान मनोहर रूपधारी शम, दूधके समान उज्ज्वल दम तथा वर्णाश्रमजनित विशुद्ध आचार आपके पास मूर्तिमान् होकर सेवामें उपस्थित रहते हैं; आपको नमस्कार है।

आप साधुओंपर सदा स्नेह रखते, वाणीसे उनमें प्राणोंका संचार करते, वचनोंसे सन्तोष देते और गुणोंसे उन्हें सर्वस्व समर्पण करते हैं। सज्जन पुरुषोंपर सदा सन्तुष्ट रहनेवाले आप धर्मराजको बारम्बार नमस्कार है।

जो सबके काल होते हुए भी शुभ कर्म करनेवाले पुरुषोंपर कृपा करते हैं, जो पुण्यात्माओंके हितैषी, सत्पुरुषोंके संगी, संयमनीपुरीके स्वामी, धर्मात्मा तथा धर्मका अनुष्ठान करनेवालोंके प्रिय हैं, उन धर्मराजको नमस्कार है।

जिसकी पीठपर लटके हुए घण्टोंकी ध्वनिसे सारी दिशाएँ गूँज उठती हैं तथा जो ऊँचे-ऊँचे सींगों और फुंकारोंके कारण अत्यन्त भीषण प्रतीत होता है, ऐसे महान् भैंसेपर जो विराजमान रहते हैं तथा जिनकी आठ बड़ी-बड़ी भुजाएँ क्रमशः नाराच, शक्ति, मुसल, खड्ग, गदा, त्रिशूल, पाश और अंकुशसे सुशोभित हैं, उन भगवान् यमराजको प्रणाम है।

जो चौदह सत्पुरुषोंके साथ बैठकर जीवोंके शुभाशुभ कर्मोंका भलीभाँति विचार करते हैं, साक्षियोंद्वारा अनुमोदन कराकर उन्हें

दण्ड देते हैं तथा सम्पूर्ण विश्वको शान्त रखते हैं, उन दक्षिण दिशाके स्वामी शान्तस्वरूप यमराजको नमस्कार है।

जो कल्याणस्वरूप, भयहारी, शौच-संतोष आदि नियमोंमें स्थित मनुष्योंके नेत्रोंको प्रिय लगनेवाले, सावर्णि, शनैश्चर और वैवस्वत मनु—इन तीनोंकी माताके सौतेले पुत्र, विवस्वान् (सूर्यदेव)-के आत्मज तथा सदाचारी मनुष्योंको वर देनेवाले हैं, उन भगवान् यमको नमस्कार है।

भगवन्! जब आपके दूत पापी जीवोंको दृढ़तापूर्वक बाँधकर आपके सामने उपस्थित करते हैं तब आप उन्हें यह आदेश देते हैं कि 'इन पापियोंको अनेक घोर नरकोंमें गिराकर छेद डालो, टुकड़े-टुकड़े कर दो, जला दो, सुखा डालो, पीस दो।' इस प्रकारकी बातें कहते हुए यमुनाजीके ज्येष्ठ भ्राता आप यमराजको मेरा प्रणाम है।

जब आप अन्तकरूप धारण करते हैं उस समय आपके गोलाकार नेत्र किनारे-किनारेसे लाल दिखायी देते हैं। आप भीमरूप होकर भय प्रदान करते हैं। टेढ़ी भौंहोंके कारण आपका मुख वक्र जान पड़ता है। आपके शरीरका रंग उस समय नीला हो जाता है तथा आप अपने निर्दयी दूतोंके द्वारा शास्त्रोक्त नियमोंका उल्लंघन करनेवाले पापियोंको खूब कड़ाईके साथ धमकाते हैं। आपको सर्वदा नमस्कार है।

जिन्होंने पंचमहायज्ञोंका अनुष्ठान किया है तथा जो सदा ही अपने कर्मोंके पालनमें संलग्न रहे हैं, ऐसे लोगोंको दूरसे ही विमानपर आते देख आप दोनों हाथ जोड़े आगे बढ़कर उनका स्वागत करते हैं। आपके नेत्र कमलके समान विशाल हैं तथा आप माता संज्ञाके सुयोग्य पुत्र हैं। आपको मेरा प्रणाम है।

जो सम्पूर्ण विश्वसे उत्कृष्ट, निर्मल, विद्वान्, जगत्के पालक, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवके प्रिय, सबके शुभाशुभ कर्मोंके उत्तम साक्षी तथा समस्त संसारको शरण देनेवाले हैं, उन भगवान् यमको नमस्कार है।

वसिष्ठजी कहते हैं—इस प्रकार स्तुति करके मृगशृंगने उदारता और करुणाके भण्डार तथा दक्षिण दिशाके स्वामी भगवान् यमका ध्यान करते हुए उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। इससे भगवान् यमको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे महान् तेजस्वी रूप धारण किये मुनिके सामने प्रकट हुए। उस समय उनका मुखकमल प्रसन्नतासे खिला हुआ था और किरीट, हार, केयूर तथा मणिमय कुण्डल धारण करनेवाले अनेक सेवक चारों ओरसे उनकी सेवामें उपस्थित थे।

यमराजने कहा—मुने! मैं तुम्हारे इस स्तोत्रसे बहुत सन्तुष्ट हूँ और तुम्हें वर देनेके लिये यहाँ आया हूँ। तुम मुझसे मनोवांछित वर माँगो। मैं तुम्हें अभीष्ट वस्तु प्रदान करूँगा।

उनकी बात सुनकर मुनीश्वर मृगशृंग उठकर खड़े हो गये। यमराजको सामने उपस्थित देख उन्हें बड़ा विस्मय हुआ। उनके नेत्र प्रसन्नतासे खिल उठे। कृतान्तको पाकर उन्होंने अपनेको सफलमनोरथ समझा और हाथ जोड़कर कहा—'भगवन्! इन कन्याओंको प्राणदान दीजिये। मैं आपसे बारम्बार यही याचना करता हूँ।' मुनिका कथन सुनकर धर्मराजने अदृश्यरूपसे उन ब्राह्मण-कन्याओंको उनके शरीरमें भेज दिया। फिर तो सोकर उठे हुएकी भाँति वे कन्याएँ उठ खड़ी हुईं। अपनी बालिकाओंको सचेत होते देख माताओंको बड़ा हर्ष हुआ। कन्याएँ पहलेकी ही भाँति अपना-अपना वस्त्र पहनकर माताओंको बुला उनके साथ अपने घर गयीं।

वसिष्ठजी कहते हैं—इस प्रकार विप्रवर मृगशृंगको वरदान दे यम देवता अपने पार्षदोंके साथ अन्तर्धान हो गये। इधर ब्राह्मण भी यमराजसे वर पाकर बड़ी प्रसन्नताके साथ अपने आश्रमको लौटे। जो मानव प्रतिदिन यमराजकी इस स्तुतिका पाठ करेगा, उसे कभी यम-यातना नहीं भोगनी पड़ेगी, उसके ऊपर यमराज प्रसन्न होंगे, उसकी सन्ततिका कभी अपमृत्युसे पराभव न होगा, उसे इस लोक और परलोकमें भी लक्ष्मीकी प्राप्ति होगी तथा उसे कभी रोगोंका शिकार नहीं होना पड़ेगा।

❑❑

यमलोकसे लौटी हुई कन्याओंके द्वारा वहाँकी अनुभूत बातोंका वर्णन

राजा दिलीपने पूछा—मुने! यमलोकसे लौटकर आयी हुई उन साध्वी कन्याओंने अपनी माताओं और बन्धुओंसे वहाँका वृत्तान्त कैसा बतलाया? पापियोंकी यातना और पुण्यात्माओंकी गतिके सम्बन्धमें क्या कहा? मैं पुण्य और पापके शुभ और अशुभ फलोंको विस्तारके साथ सुनना चाहता हूँ।

वसिष्ठजी बोले—राजन्! कन्याओंने अपनी माताओं और बन्धुओंसे पुण्य-पापके शुभाशुभ फलोंके विषयमें जो कुछ कहा था, वह ज्यों-का-त्यों तुम्हें बतलाता हूँ।

कन्याओंने कहा—माताओ! यमलोक बड़ा ही घोर और भय उत्पन्न करनेवाला है। वहाँ सर्वदा चारों प्रकारके जीवोंको विवश होकर जाना पड़ता है। गर्भमें रहनेवाले अथवा जन्म लेनेवाले शिशु, बालक, तरुण, अधेड़, बूढ़े, स्त्री, पुरुष और नपुंसक—सभी तरहके जीवोंको वहाँ जाना होता है। वहाँ चित्रगुप्त आदि

समदर्शी एवं मध्यस्थ सत्पुरुष मिलकर देहधारियोंके शुभ और अशुभ फलका विचार करते हैं। इस लोकमें जो शुभ कर्म करनेवाले, कोमलहृदय तथा दयालु पुरुष हैं, वे सौम्य मार्गसे यमलोकमें जाते हैं। नाना प्रकारके दान और व्रतोंमें संलग्न रहनेवाले स्त्री-पुरुषोंसे सूर्यनन्दन यमकी नगरी भरी है। माघस्नान करनेवाले लोग वहाँ विशेषरूपसे शोभित होते हैं। धर्मराज उनका अधिक सम्मान करते हैं। वहाँ उनके लिये सब प्रकारकी भोगसामग्री सुलभ होती है। माघस्नानमें मन लगानेवाले लोगोंके सैकड़ों, हजारों विचित्र-विचित्र विमान वहाँ शोभा पाते हैं। इन पुण्यात्मा जीवोंको विमानपर बैठकर आते देख सूर्यनन्दन यम अपने आसनसे उठकर खड़े हो जाते हैं और अपने पार्षदोंके साथ जाकर उन सबकी अगवानी करते हैं। फिर स्वागतपूर्वक आसन दे, पाद्य-अर्घ्य आदि निवेदन कर प्रिय वचनोंमें कहते हैं—'आपलोग अपने आत्माका कल्याण करनेवाले महात्मा हैं, अतएव धन्य हैं; क्योंकि आपने दिव्य सुखकी प्राप्तिके लिये पुण्यका उपार्जन किया है। अतः आप इस विमानपर बैठकर स्वर्गको जाइये। स्वर्गलोककी कहीं तुलना नहीं है, वह सब प्रकारके दिव्य भोगोंसे परिपूर्ण है।' इस प्रकार उनकी अनुमति ले पुण्यात्मा पुरुष स्वर्गलोकमें जाते हैं।

माताओ! तथा बन्धुजन! अब हम वहाँके पापी जीवोंके कष्टका वर्णन करती हैं, आप सब लोग धैर्य धारण करके सुनें। जो क्रूरतापूर्ण कर्म करनेवाले और दान न देनेवाले पापी जीव हैं, वे वहाँ यमराजके घरमें अत्यन्त भयंकर दक्षिणमार्गसे जाते हैं। यमराजका नगर अनेक रूपोंमें स्थित है, उसका विस्तार चारों ओरसे छियासी हजार योजन समझना चाहिये। पुण्यकर्म करनेवाले पुरुषोंको वह बहुत निकट-सा जान पड़ता है, किन्तु भयंकर मार्गसे जानेवाले

पापी जीवोंके लिये वह अत्यन्त दूर है। वह मार्ग कहीं तो तीखे काँटोंसे भरा होता है और कहीं रेत एवं कंकड़ोंसे। कहीं पत्थरोंके ऐसे टुकड़े बिछे होते हैं, जिनका किनारा छुरोंकी धारके समान तीखा होता है। कहीं बहुत दूरतक कीचड़-ही-कीचड़ भरी रहती है। कहीं घातक अंकुर उगे होते हैं और कहीं-कहीं लोहेकी सुईके समान नुकीले कुशोंसे सारा मार्ग ढका होता है। इतना ही नहीं, कहीं-कहीं बीच रास्तेमें वृक्षोंसे भरे हुए पर्वत होते हैं, जो किनारेपर भारी जल-प्रपातके कारण अत्यन्त दुर्गम जान पड़ते हैं। कहीं रास्तेपर दहकते हुए अँगारे बिछे रहते हैं। ऐसे मार्गसे पापी जीवोंको दुःखित होकर जाना पड़ता है। कहीं ऊँचे-नीचे गड्ढे, कहीं फिसला देनेवाले चिकने ढेले, कहीं खूब तपी हुई बालू और कहीं तीखी कीलोंसे वह मार्ग व्याप्त रहता है। कहीं-कहीं अनेक शाखाओंमें फैले हुए सैकड़ों वन और दुःखदायी अन्धकार हैं, जहाँ कोई सहारा देनेवाला भी नहीं रहता। कहीं तपे हुए लोहेके काँटेदार वृक्ष, कहीं दावानल, कहीं तपी हुई शिला और कहीं हिमसे वह मार्ग आच्छादित रहता है। कहीं ऐसी बालू भरी रहती है, जिसमें चलनेवाला जीव कण्ठतक धँस जाता है और बालू कानके पासतक आ जाती है। कहीं गरम जल और कहीं कंडोंकी आगसे यमलोकका मार्ग व्याप्त रहता है। कहीं धूल मिली हुई प्रचण्ड वायुका बवंडर उठता है और कहीं बड़े-बड़े पत्थरोंकी वर्षा होती है। उन सबकी पीड़ा सहते हुए पापी जीव यमलोकमें जाते हैं। रेतकी भारी वृष्टिसे सारा अंग भर जानेके कारण पापी जीव रोते हैं। महान् मेघोंकी भयंकर गर्जनासे वे बारम्बार थर्रा उठते हैं। कहीं तीखे अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा होती है, जिससे उनके सारे शरीरमें घाव हो जाते हैं। तत्पश्चात् उनके

ऊपर नमक मिले हुए पानीकी मोटी धाराएँ बरसायी जाती हैं। इस प्रकार कष्ट सहन करते हुए उन्हें जाना पड़ता है। कहीं अत्यन्त ठंडी, कहीं रूखी और कहीं कठोर वायुका सब ओरसे आघात सहते हुए पापी जीव सूखते और रोते हैं। इस प्रकार वह मार्ग बड़ा ही भयंकर है। वहाँ राहखर्च नहीं मिलता। कोई सहारा देनेवाला नहीं रहता। वह सब ओरसे दुर्गम और निर्जन है। वहाँ और कोई मार्ग आकर नहीं मिला है। वह बहुत बड़ा और आश्रयरहित है। वहाँ अन्धकार-ही-अन्धकार भरा रहता है। वह महान् कष्टप्रद और सब प्रकारके दुःखोंका आश्रय है। ऐसे ही मार्गसे यमकी आज्ञाका पालन करनेवाले अत्यन्त भयंकर यमदूतोंद्वारा समस्त पाप-परायण मूढ़ जीव बलपूर्वक लाये जाते हैं।

वे एकाकी, पराधीन तथा मित्र और बन्धु-बान्धवोंसे रहित होते हैं। अपने कर्मोंके लिये बारम्बार शोक करते और रोते हैं। उनका आकार प्रेत-जैसा होता है। उनके शरीरपर वस्त्र नहीं रहता। कण्ठ, ओठ और तालू सूखे होते हैं। वे शरीरसे दुर्बल और भयभीत होते हैं तथा क्षुधाकी आगसे जलते रहते हैं। बलोन्मत्त यमदूत किन्हीं-किन्हीं पापी मनुष्योंको चित सुलाकर उनके पैरोंमें साँकल बाँध देते हैं और उन्हें घसीटते हुए खींचते हैं। कितने ही दूसरे जीव ललाटमें अंकुश चुभाये जानेके कारण क्लेश भोगते हैं। कितनोंकी बाँहें पीठकी ओर घुमाकर बाँध दी जाती और उनके हाथोंमें कील ठोंक दी जाती है; साथ ही पैरोंमें बेड़ी भी पड़ी होती है। इस दशामें भूखका कष्ट सहन करते हुए उन्हें जाना पड़ता है। कुछ दूसरे जीवोंके गलेमें रस्सी बाँधकर उन्हें पशुओंकी भाँति घसीटा जाता है और वे अत्यन्त दुःख उठाते रहते हैं। कितने ही दुष्ट मनुष्योंकी जिह्वामें रस्सी बाँधकर

उन्हें खींचा जाता है। किन्हींकी कमरमें भी रस्सी बाँधी जाती है और उन्हें गरदनियाँ देकर इधर-उधर ढकेला जाता है। यमदूत किन्हींकी नाक बाँधकर खींचते हैं और किन्हींके गाल तथा ओठ छेदकर उनमें रस्सी डाल देते और उन्हें खींचकर ले जाते हैं। तपे हुए सींकचोंसे कितने ही पापियोंके पेट छिदे होते हैं। कुछ लोगोंके कानों और ठोढ़ियोंमें छेद करके उनमें रस्सी डालकर खींचा जाता है। किन्हींके पैरों और हाथोंके अग्रभाग काट लिये जाते हैं। किन्हींके कण्ठ, ओठ और तालुओंमें छेद कर दिया जाता है। किन्हीं-किन्हींके अण्डकोश कट जाते हैं और कुछ लोगोंके समस्त अंगोंकी सन्धियाँ काट दी जाती हैं। किन्हींको भालोंसे छेदा जाता है, कुछ बाणोंसे घायल किये जाते हैं और कुछ लोगोंको मुद्‌गरों तथा लोहेके डंडोंसे बारम्बार पीटा जाता है और वे निराश्रय होकर चीखते-चिल्लाते हुए इधर-उधर भागा करते हैं। प्रज्वलित अग्निके समान कान्तिवाले भाँति-भाँतिके भयंकर आरों और भिन्दिपालोंसे उन्हें विदीर्ण किया जाता है और वे पापी जीव पीब तथा रक्त बहाते हुए घावसे पीड़ित होते और कीड़ोंसे डँसे जाते हैं। इस प्रकार उन्हें विवश करके यमलोकमें ले जाया जाता है। वे भूख-प्याससे पीड़ित होकर अन्न और जल माँगते हैं, धूपसे बचनेको छायाके लिये प्रार्थना करते हैं और शीतसे व्यथित होकर तापनेके लिये अग्नि माँगते हैं। जिन्होंने उक्त वस्तुओंका दान नहीं किया होता, वे उस पाथेयरहित पथपर इसी प्रकार कष्ट सहते हुए यात्रा करते हैं। इस प्रकार अत्यन्त दुःखमय मार्गसे चलकर जब वे प्रेतलोकमें पहुँचते हैं तब दूत उन्हें यमराजके आगे उपस्थित करते हैं। उस समय वे पापी जीव यमराजको भयानक रूपमें देखते हैं। वहाँ असंख्यों भयानक

यमदूत, जो काजलके समान काले, महान् वीर और अत्यन्त क्रूर होते हैं, हाथोंमें सब प्रकारके अस्त्र-शस्त्र लिये मौजूद रहते हैं। ऐसे ही परिवारके साथ बैठे हुए यमराज तथा चित्रगुप्तको पापी जीव अत्यन्त भयंकर रूपमें देखते हैं।

उस समय भगवान् यमराज और चित्रगुप्त उन पापियोंको धर्मयुक्त वाक्योंसे समझाते हुए बड़े जोर-जोरसे फटकारते हैं। वे कहते हैं—'ओ खोटे कर्म करनेवाले पापियो! तुमने दूसरोंके धन हड़प लिये हैं और सुन्दर रूपके घमण्डमें आकर परायी स्त्रियोंके साथ व्यभिचार किया है। मनुष्य अपने-आप जो कुछ कर्म करता है, उसे स्वयं ही भोगता है; फिर तुमने अपने ही भोगनेके लिये पापकर्म क्यों किया? और अब अपने कर्मोंकी आगमें जलकर इस समय तुमलोग संतप्त क्यों हो रहे हो? भोगो अपने उन कर्मोंको। इसमें दूसरे किसीका दोष नहीं है। ये राजालोग भी अपने भयंकर कर्मोंसे प्रेरित हो मेरे पास आये हैं; इन्हें अपनी खोटी बुद्धि और बलका बड़ा घमण्ड था। अरे, ओ दुराचारी राजाओ! तुमलोग प्रजाका सर्वनाश करनेवाले हो। अरे, थोड़े समयतक रहनेवाले राज्यके लिये तुमने पाप क्यों किया? राज्यके लोभमें पड़कर मोहवश बलपूर्वक अन्यायसे जो तुमने प्रजाजनोंको दण्ड दिया है, इस समय उसका फल भोगो। कहाँ है वह राज्य और कहाँ गयी वह रानी, जिसके लिये तुमने पापकर्म किया था? अब तो सबको छोड़कर तुम अकेले ही यहाँ खड़े हो। यहाँ वह बल नहीं दिखायी देता, जिससे तुमने प्रजाओंका विध्वंस किया। इस समय यमदूतोंकी मार पड़नेपर कैसा लग रहा है?' इस तरह नाना प्रकारके वचनोंद्वारा यमराजके उलाहना देनेपर वे राजा अपने-अपने कर्मोंको सोचते हुए चुपचाप खड़े रह जाते हैं।

इस प्रकार राजाओंसे धर्मकी बात कहकर धर्मराज उनके पापपंककी शुद्धिके लिये अपने दूतोंसे इस प्रकार कहते हैं—'ओ चण्ड! ओ महाचण्ड! तुम इन राजाओंको पकड़कर ले जाओ और क्रमशः नरककी आगमें डालकर इन्हें पापोंसे शुद्ध करो।' तब वे दूत शीघ्र ही उठकर राजाओंके पैर पकड़ लेते हैं और उन्हें बड़े वेगसे आकाशमें घुमाकर ऊपर फेंकते हैं। तत्पश्चात् उन्हें पूरा बल लगाकर तपायी हुई शिलापर बड़े वेगसे पटकते हैं, मानो किसी महान् वृक्षपर वज्रसे प्रहार करते हों। शिलापर गिरनेसे उनका शरीर चूर-चूर हो जाता है, रक्तके स्रोत बहने लगते हैं और जीव अचेत एवं निश्चेष्ट हो जाता है। तदनन्तर वायुका स्पर्श होनेपर वह धीरे-धीरे फिर साँस लेने लगता है। उसके बाद पापकी शुद्धिके लिये उसे नरकके समुद्रमें डाल दिया जाता है। इस पृथ्वीके नीचे नरककी अट्ठाईस कोटियाँ हैं। वे सातवें तलके अन्तमें भयंकर अन्धकारके भीतर स्थित हैं। उनमें पहली कोटिका नाम घोरा है। उसके नीचे सुघोराकी स्थिति है। तीसरी अतिघोरा, चौथी महाघोरा और पाँचवीं कोटि घोररूपा है। छठीका नाम तरलतारा, सातवींका भयानका, आठवींका कालरात्रि और नवींका भयोत्कटा है। उसके नीचे दसवीं कोटि चण्डा है। उसके भी नीचे महाचण्डा है। बारहवींका नाम चण्डकोलाहला है। उसके बाद प्रचण्डा, नरनायिका, कराला, विकराला और वज्रा है। [तीन अन्य नरकोंके साथ] वज्राकी बीसवीं संख्या है। इनके सिवा त्रिकोणा, पंचकोणा, सुदीर्घा, परिवर्तुला, सप्तभौमा, अष्टभौमा, दीप्ता और माया—ये आठ और हैं। इस प्रकार नरककी कुल अट्ठाईस कोटियाँ बतायी गयी हैं।

उपर्युक्त कोटियोंमेंसे प्रत्येकके पाँच-पाँच नायक हैं। उनके नाम सुनो। उनमें पहला रौरव है, जहाँ देहधारी जीव रोते हैं। दूसरा महारौरव है, जिसकी पीड़ाओंसे बड़े-बड़े जीव भी रो देते हैं। तीसरा तम, चौथा शीत और पाँचवाँ उष्ण है। ये प्रथम कोटिके पाँच नायक माने गये हैं। इनके सिवा सुघोर, सुतम, तीक्ष्ण, पद्म, संजीवन, शठ, महामाय, अतिलोम, सुभीम, कटंकट, तीव्रवेग, कराल, विकराल, प्रकम्पन, महापद्म, सुचक्र, कालसूत्र, प्रतर्दन, सूचीमुख, सुनेमि, खादक, सुप्रदीपक, कुम्भीपाक, सुपाक, अतिदारुणकूप, अंगारराशि, भवन, असृक्पूयह्रद, विरामय, तुण्डशकुनि, महासंवर्तक, क्रतु, तप्तजतु, पंकलेप, पूतिमांस, द्रव, त्रपु, उच्छ्वास, निरुच्छ्वास, सुदीर्घ, कूटशाल्मलि, दुरिष्ट, सुमहानाद, प्रभाव, सुप्रभावन, ऋक्ष, मेष, वृष, शल्य, सिंहानन, व्याघ्रानन, मृगानन, सूकरानन, श्वानन, महिषानन, वृकानन, मेषवरानन, ग्राह, कुम्भीर, नक्र, सर्प, कूर्म, वायस, गृध्र, उलूक, जलूका, शार्दूल, कपि, कर्कट, गण्ड, पूतिवक्त्र, रक्ताक्ष, पूतिमृत्तिक, कणाधूम, तुषाग्नि, कृमिनिचय, अमेय, अप्रतिष्ठ, रुधिरान्न, श्वभोजन, लालाभक्ष, आत्मभक्ष, सर्वभक्ष, सुदारुण, संकष्ट, सुबिलास, सुकट, संकट, कट, पुरीष, कटाह, कष्टदायिनी वैतरणी नदी, सुतप्त लोहशंकु, अय:शंकु, प्रपूरण, घोर, असितालवन, अस्थिभंग, प्रपीड़क, नीलयन्त्र, अतसीयन्त्र, इक्षुयन्त्र, कूट, अंशप्रमर्दन, महाचूर्णी, सुचूर्णी, तप्तलोहमयी शिला, क्षुरधाराभपर्वत, मलपर्वत, मूत्रकूप, विष्ठाकूप, अन्धकूप, पूयकूप, शातन, मुसलोलूखल, यन्त्रशिला, शकटलांगल, तालपत्रासिवन, महामशकमण्डप, सम्मोहन, अतिभंग, तप्तशूल, अयोगुड, बहुदु:ख, महादु:ख, कश्मल, शमल, हालाहल, विरूप, भीमरूप, भीषण, एकपाद, द्विपाद, तीव्र तथा अवीचि। यह

अवीचि अन्तिम नरक है। इस प्रकार ये क्रमशः पाँच-पाँचके अट्ठाईस समुदाय माने गये हैं। एक-एक समुदाय एक-एक कोटिका नायक है।

रौरवसे लेकर अवीचितक कुल एक सौ चालीस नरक माने गये हैं। इन सबमें पापी मनुष्य अपने-अपने कर्मोंके अनुसार डाले जाते हैं और जबतक भाँति-भाँतिकी यातनाओंद्वारा उनके कर्मोंका भोग समाप्त नहीं हो जाता तबतक वे उसीमें पड़े रहते हैं। जैसे सुवर्ण आदि धातु जबतक उनकी मैल न जल जाय तबतक आगमें तपाये जाते हैं, उसी प्रकार पापी पुरुष पापक्षय होनेतक नरकोंकी आगमें शुद्ध किये जाते हैं। इस प्रकार क्लेश सहकर जब ये प्रायः शुद्ध हो जाते हैं तब शेष कर्मोंके अनुसार पुनः इस पृथ्वीपर आकर जन्म ग्रहण करते हैं। तृण और झाड़ी आदिके भेदसे नाना प्रकारके स्थावर होकर वहाँके दुःख भोगनेके पश्चात् पापी जीव कीड़ोंकी योनिमें जन्म लेते हैं। फिर कीटयोनिसे निकलकर क्रमशः पक्षी होते हैं। पक्षीरूपसे कष्ट भोगकर मृगयोनिमें उत्पन्न होते हैं। वहाँके दुःख भोगकर अन्य पशुयोनिमें जन्म लेते हैं। फिर क्रमशः गोयोनिमें आकर मरनेके पश्चात् मनुष्य होते हैं।

माताओ! हमने यमलोकमें इतना ही देखा है। वहाँ पापीको बड़ी भयानक यातनाएँ होती हैं। वहाँ ऐसे-ऐसे नरक हैं जो न कभी देखे गये थे और न कभी सुने ही गये थे। वह सब हमलोग न तो जान सकती हैं और न देख ही सकती हैं।

माताएँ बोलीं—बस, बस, इतना ही बहुत हुआ। अब रहने दो। इन नरक-यातनाओंको सुनकर हमारे सारे अंग शिथिल हो गये हैं। हृदयमें भय छा गया है। बारम्बार उनकी

याद आ जानेसे हमारा मन सुध-बुध खो बैठता है। आन्तरिक भयके उद्रेकसे हमलोगोंके शरीरमें रोमांच हो आया है।

कन्याओंने कहा—माताओ! इस परम पवित्र भारतवर्षमें जो हमें जन्म मिला है, यह अत्यन्त दुर्लभ है। इसमें भी हजार-हजार जन्म लेनेके बाद पुण्यराशिके संचयसे कदाचित् कभी जीव मनुष्ययोनिमें जन्म पाता है; परन्तु जो माघस्नानमें तत्पर रहनेवाले हैं, उनके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है। उन्हें यहाँ ही परम मोक्ष मिल जाता है और पर्याप्त भोगसामग्री भी सुलभ होती है। भारतवर्षको कर्मभूमि कहा गया है। अन्य जितनी भूमियाँ हैं वे भोगभूमि मानी जाती हैं। यहाँ यति तपस्या और याजक यज्ञ करते हैं तथा यहीं पारलौकिक सुखके लिये श्रद्धापूर्वक दान दिये जाते हैं। कितने ही धन्य पुरुष यहीं माघस्नान करते तथा तपस्या करके अपने कर्मोंके अनुसार ब्रह्मा, इन्द्र, देवता और मरुद्गणोंका पद प्राप्त करते हैं। यह भारतवर्ष सभी देशोंसे श्रेष्ठ माना गया है; क्योंकि यहीं मनुष्य धर्म तथा स्वर्ग और मोक्षकी सिद्धि कर सकते हैं। इस पवित्र भारतदेशमें क्षणभंगुर मानवजीवनको पाकर जो अपने आत्माका कल्याण नहीं करता, उसने अपने-आपको ठग लिया। मनुष्योंमें भी अत्यन्त दुर्लभ ब्राह्मणत्वको पाकर जो अपना कल्याण नहीं करता, उससे बढ़कर मूर्ख कौन होगा। कितने ही कालके बाद जीव अत्यन्त दुर्लभ मानवजीवन प्राप्त करता है; इसे पाकर ऐसा करना चाहिये जिससे कभी नरकमें न जाना पड़े। देवतालोग भी यह अभिलाषा करते हैं कि हमलोग कब भारतवर्षमें जन्म लेकर माघमासमें प्रातःकाल किसी नदी या सरोवरके जलमें गोते लगायेंगे। देवता यह गीत गाते हैं कि जो लोग देवत्वके पश्चात् स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्तिके मार्गभूत भारतवर्षके

भूभागमें मनुष्य-जन्म धारण करते हैं, वे धन्य हैं। हम नहीं जानते कि स्वर्गकी प्राप्ति करानेवाले अपने पुण्यकर्मके क्षीण होनेपर किस देशमें हमें पुनः देह धारण करना होगा। जो भारतवर्षमें जन्म लेकर सब इन्द्रियोंसे युक्त हैं—किसी भी इन्द्रियसे हीन नहीं हैं, वे ही मनुष्य धन्य हैं; अतः माताओ! तुम भय मत करो, भय मत करो। आदरपूर्वक धर्मका अनुष्ठान करो। जिनके पास दानरूपी राहखर्च होता है, वे यमलोकके मार्गपर सुखसे जाते हैं; अन्यथा उस पाथेयरहित पथपर जीवको क्लेश भोगना पड़ता है। ऐसा जानकर मनुष्य पुण्य करे और पाप छोड़ दे। पुण्यसे देवत्वकी प्राप्ति होती है और अधर्मसे नरकमें गिरना पड़ता है। जो किंचित् भी देवेश्वर भगवान् श्रीहरिकी शरणमें गये हैं, वे भयंकर यमलोकका दर्शन नहीं करते।

बान्धवो! यदि तुमलोग संसार-बन्धनसे छुटकारा पाना चाहते हो तो सच्चिदानन्दस्वरूप परमदेव श्रीनारायणकी आराधना करो। यह चराचर जगत् आपलोगोंकी भावना—संकल्पसे ही निर्मित है, इसे बिजलीकी तरह चंचल—क्षणभंगुर समझकर श्रीजनार्दनका पूजन करो। अहंकार विद्युत्की रेखाके समान व्यर्थ है, इसे कभी पास न आने दो। शरीर मृत्युसे जुड़ा हुआ है, जीवन भी चंचल है, धन राजा आदिसे प्राप्त होनेवाली बाधाओंसे परिपूर्ण है तथा सम्पत्तियाँ क्षणभंगुर हैं। माताओ! क्या तुम नहीं जानतीं, आधी आयु तो नींदमें चली जाती है? कुछ आयु भोजन आदिमें समाप्त हो जाती है। कुछ बालकपनमें, कुछ बुढ़ापेमें और कुछ विषय-भोगोंके सेवनमें ही बीत जाती है; फिर कितनी आयु लेकर तुम धर्म करोगी। बचपन और बुढ़ापेमें तो भगवान्के पूजनका अवसर नहीं प्राप्त होता; अतः इसी अवस्थामें अहंकारशून्य होकर धर्म

करो। संसाररूपी भयंकर गड्ढेमें गिरकर नष्ट न हो जाओ। यह शरीर मृत्युका घर है तथा आपत्तियोंका सर्वश्रेष्ठ स्थान है; इतना ही नहीं, यह रोगोंका भी निवासस्थान है और मल आदिसे भी अत्यन्त दूषित रहता है। माताओ! फिर किसलिये इसे स्थिर समझकर तुम पाप करती हो। यह संसार निःसार है और नाना प्रकारके दुःखोंसे भरा है। इसपर विश्वास नहीं करना चाहिये; क्योंकि एक दिन तुम्हारा निश्चय ही नाश होनेवाला है। बान्धवो! तुम सब लोग सुनो। हम बिलकुल सच्ची बात बता रही हैं। शरीरका नाश बिलकुल निकट है; अतः श्रीजनार्दनका पूजन अवश्य करना चाहिये। सदा ही श्रीविष्णुकी आराधना करते रहो। यह मानव-जीवन अत्यन्त दुर्लभ है। बन्धुओ! स्थावर आदि योनियोंमें अरबों-खरबों बार भटकनेके बाद किसी तरह मनुष्यका शरीर प्राप्त होता है। मनुष्य होनेपर भी देवताओंके पूजन और दानमें मन लगना तो और भी कठिन है। माताओ! योगबुद्धि सबसे दुर्लभ है। जो दुर्लभ मनुष्य-शरीरको पाकर सदा ही श्रीहरिका पूजन नहीं करता, वह आप ही अपना विनाश करता है। उससे बढ़कर मूर्ख कौन होगा? तुमलोग दम्भका आचरण छोड़कर चक्रसुदर्शनधारी भगवान् विष्णुकी पूजा करो। हमलोग बारम्बार भुजाएँ उठाकर तुम्हारे हितकी बात कहती हैं। सर्वथा भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुका पूजन करना चाहिये और मनुष्योंके साथ ईर्ष्याका भाव छोड़ देना चाहिये। सबके धारण करनेवाले जगदीश्वर भगवान् अच्युतकी आराधना किये बिना संसार-सागरमें डूबे हुए तुम सब लोग कैसे पार जाओगे? माताओ! अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता? हमारी यह बात सुनो, जो प्रतिदिन तन्मय होकर भगवान् गोविन्दके गुणोंका गान तथा नामोंका संकीर्तन सुनते हैं, उन्हें वेदोंसे, तपस्यासे,

शास्त्रोक्त दक्षिणावाले यज्ञोंसे, पुत्र और स्त्रियोंसे, संसारके कृत्योंसे तथा घर, खेत और बन्धु-बान्धवोंसे क्या लेना है? इसलिये तुमलोग भय छोड़कर श्रीकेशवकी आराधना करो। शालग्रामशिलाका निर्मल एवं शुद्ध चरणामृत पीओ तथा भगवान् विष्णुके दिन— एकादशीको उपवास किया करो।

जब सूर्य मकर राशिपर स्थित हों, उस समय प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान करो; साथ ही पतिकी सेवामें लगी रहो। नरकका भय तो तुम्हें दूरसे ही छोड़ देना चाहिये; क्योंकि सब पापोंका नाश करनेवाली परम पवित्र एकादशी तिथि प्रत्येक पक्षमें आती है। फिर तुम्हें नरकसे भय क्यों हो रहा है? घरसे बाहरके जलमें स्नान करनेसे पुण्य प्रदान करनेवाला माघ-मास भी प्रतिवर्ष आया करता है। फिर तुम्हें नरकसे भय क्यों होता है।

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! वे कन्याएँ अपनी माताओंसे इस प्रकार कहकर पुनः माघस्नान, उपवास आदि व्रत, धर्म तथा दान करने लगीं।

❑❑

महात्मा पुष्करके द्वारा नरकमें पड़े हुए जीवोंका उद्धार

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! माघस्नान और उपवास आदि महान् पुण्य करनेवाले मनुष्य इसी प्रकार दिव्य लोकोंमें जाते-आते रहते हैं। पुण्य ही सर्वत्र आने-जानेमें कारण है। पूर्वकालमें विप्रवर पुष्कर भी यमलोकमें गये थे और वहाँ बहुत-से नारकीय जीवोंको नरकसे निकालकर फिर यहीं आ पूर्ववत् अपने घरमें रहने लगे। त्रेतायुगमें जब भगवान् श्रीरामचन्द्रजी राज्य करते थे,

तभी एक समय किसी ब्राह्मणका पुत्र मरकर यमलोकमें गया और पुनः वह जी उठा। क्या यह बात तुमने नहीं सुनी है? देवकीनन्दन श्रीकृष्णने अपने गुरु सान्दीपनिके पुत्रको, जिसे बहुत दिन पहले ही ग्राहने अपना ग्रास बना लिया था, पुनः यमलोकसे ले आकर गुरुको अर्पण किया था। इसी प्रकार और भी कई मनुष्य यमलोकसे लौट आये हैं। इस विषयमें सन्देह नहीं करना चाहिये। अच्छा बताओ, अब और क्या सुनना चाहते हो?

दिलीपने पूछा—मुने! पुष्कर नामक श्रेष्ठ ब्राह्मण कहाँके रहनेवाले थे? वे कैसे यमलोकमें आये और किस प्रकार उन्होंने नरकसे पापियोंका उद्धार किया?

वसिष्ठजी बोले—राजन्! मैं महात्मा पुष्करके चरित्रका वर्णन करता हूँ। वह सब पापोंका नाश करनेवाला है। तुम सावधान होकर सुनो। बुद्धिमान् पुष्कर नन्दिग्रामके निवासी थे। वे सदा अपने धर्मके अनुष्ठानमें लगे रहनेवाले और सब प्राणियोंके हितैषी थे। सदा माघस्नान और स्वाध्यायमें तत्पर रहते तथा समयपर अनन्य भावसे श्रीविष्णुकी आराधना किया करते थे। महायोगी पुष्कर अपने कुटुम्बके साथ रहते और नित्य अग्निहोत्र करते थे। राजन्, वे अप्रमेय! हरे! विष्णो! कृष्ण! दामोदर! अच्युत! गोविन्द! अनन्त! देवेश्वर! इत्यादि रूपसे केवल भगवन्नामोंका कीर्तन करते थे। महामते! देवताका आराधन छोड़कर और किसी काममें उन ब्राह्मण देवताका मन स्वप्नमें भी नहीं लगता था। एक दिन सूर्यनन्दन यमराजने अपने भयंकर दूतोंको आज्ञा दी—'जाओ, नन्दिग्राम-निवासी पुष्कर नामक ब्राह्मणको यहाँ पकड़ ले आओ।' यह आदेश सुनकर और यमराजके बताये हुए पुष्करको न पहचानकर वे इन महात्मा पुष्करको ही यमलोकमें पकड़ लाये। ब्राह्मण

पुष्करको आते देख यमराज मन-ही-मन भयभीत हो गये और आसनसे उठकर खड़े हो गये। फिर मुनिको आसनपर बिठाकर उन्होंने दूतोंको फटकारा—'तुमलोगोंने यह क्या किया? मैंने तो दूसरे पुष्करको लानेके लिये कहा था। तुमलोगोंके कितने पापपूर्ण विचार हैं। भला, इन सब धर्मोंके ज्ञाता, विशेषतः भगवान् विष्णुके भक्त, सदा माघस्नान करनेवाले और उपवास-परायण महात्मा पुरुषको यहाँ मेरे समीप क्यों ले आये?'

दूतोंको इस प्रकार डाँट बताकर प्रेतराज यमने पुष्करसे कहा—'ब्रह्मन्! तुम्हारे पुत्र और स्त्री आदि सब बान्धव बहुत व्याकुल होकर रो रहे हैं; अतः तुम भी अभी जाओ।' तब पुष्करने यमसे कहा—'भगवन्! जहाँ पापी पुरुष यातनामय शरीर धारण करके कष्ट भोगते हैं, उन सब नरकोंको मैं देखना चाहता हूँ। यह सुनकर सूर्यकुमार यमने पुष्करको सैकड़ों और हजारों नरक दिखलाये। पुष्करने देखा, पापी जीव नरकोंमें पड़कर बड़ा कष्ट भोगते हैं। कोई शूलीपर चढ़े हैं, किन्हींको व्याघ्र खा रहा है जिससे वे अत्यन्त दुःखित हैं। कोई तपी हुई बालूपर जल रहे हैं। किन्हींको कीड़े खा रहे हैं। कोई जलते हुए घड़ेमें डाल दिये गये हैं। कोई कीड़ोंसे पीड़ित हैं। कोई असिपत्रवनमें दौड़ रहे हैं, जिससे उनके अंग छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। किन्हींको आरोंसे चीरा जा रहा है। कोई कुल्हाड़ोंसे काटे जाते हैं। किन्हींको खारी कीचड़में कष्ट भोगना पड़ता है। किन्हींको सूई चुभो-चुभोकर गिराया जाता है और कोई सर्दीसे पीड़ित हो रहे हैं। उनको तथा अन्य जीवोंको नरकमें पड़कर यातना भोगते देख पुष्करको बड़ा दुःख हुआ। वे उनसे बोले—'क्या आपलोगोंने पूर्वजन्ममें कोई पुण्य नहीं किया था, जिससे यहाँ यातनामें पड़कर आप सदा दुःख भोगते हैं?'

नरकके जीवोंने कहा—विप्रवर! हमने पृथ्वीपर कोई पुण्य नहीं किया था। इसीसे इस यातनामें पड़कर जलते और बहुत कष्ट उठाते हैं। हमने परायी स्त्रियोंसे अनुराग किया, दूसरोंके धन चुराये, अन्य जीवोंकी हिंसा की, बिना अपराध ही दूसरोंपर लांछन लगाये, ब्राह्मणोंकी निन्दा की और जिनके भरण-पोषणका भार अपने ऊपर था, उनके भोजन किये बिना ही हम सबसे पहले भोजन कर लेते थे। इन्हीं सब पापोंके कारण हमलोग इस नरकाग्निमें दग्ध हो रहे हैं। प्यासी गौएँ जब जलकी ओर दौड़ती हुई जातीं तो हम सदा उनके पानी पीनेमें विघ्न डाल दिया करते थे। गौओंको कभी खिलाते-पिलाते नहीं थे, तो भी उनका दूध दुहकर पेट पालनेमें लगे रहते थे। याचकोंको दान देनेमें लगे हुए धार्मिक पुरुषोंके कार्यमें रोड़े अटकाया करते थे। अपनी स्त्रियोंको त्याग दिया था। व्रतसे भ्रष्ट हो गये थे। दूसरेके अन्नमें ही सदा रुचि रखते थे। पर्वोंपर भी स्त्रियोंके साथ रमण करते थे। ब्राह्मणोंको देनेकी प्रतिज्ञा करके भी लोभवश उन्हें दान नहीं दिया। हम धरोहर हड़प लेते थे, मित्रोंसे द्रोह करते तथा झूठी गवाही देते रहते थे। इन्हीं सब पापोंके कारण आज हम दग्ध हो रहे हैं।

पुष्करने कहा—क्या आपलोगोंने भगवान् जनार्दनका एक बार भी पूजन नहीं किया? इसीसे आप ऐसी भयानक दशाको पहुँचे हैं। जिन्होंने समस्त लोकोंके स्वामी भगवान् पुरुषोत्तमका पूजन किया है, उन मनुष्योंका मोक्षतक हो सकता है; फिर पापक्षयकी तो बात ही क्या है? प्रायः आपलोगोंने श्रीपुरुषोत्तमके चरणोंमें मस्तक नहीं झुकाया है। इसीसे आपको इस अत्यन्त भयंकर नरककी प्राप्ति हुई है। अब यहाँ हाहाकार करनेसे क्या लाभ? निरन्तर भगवान् श्रीहरिका स्मरण कीजिये। वे श्रीविष्णु समस्त पापोंका

नाश करनेवाले हैं। मैं भी यहाँ जगदीश्वरके नामोंका कीर्तन करता हूँ। वे नाम निश्चय ही आपका कल्याण करेंगे।

नरकके जीवोंने कहा—ब्रह्मन्! हमारा अन्तःकरण अपवित्र है। हम अपने पापसे सन्तप्त हैं। ऐसे समयमें आपके शरीरको छूकर बहनेवाली वायु हमें परम आनन्द प्रदान करती है। धर्मात्मन्! आप कुछ देरतक यहाँ ठहरिये, जिससे हम दुःखी जीवोंको क्षणभर भी तो सुख मिल सके। ब्रह्मन्! आपके दर्शनसे भी हमें बड़ा सन्तोष होता है। अहो! हम पापी जीवोंपर भी आपकी कितनी दया है।

यमराजने कहा—धर्मके ज्ञाता पुष्कर! तुमने नरक देख लिये। अब जाओ। तुम्हारी पत्नी दुःख और शोकमें डूबकर रो रही है।

पुष्कर बोले—भगवन्! जबतक इन दुःखी जीवोंकी आवाज कानोंमें पड़ती है तबतक कैसे जाऊँ। जानेपर भी वहाँ मुझे क्या सुख मिलेगा? आपके किंकरोंकी मार खाकर जो आगके ढेरमें गिर रहे हैं, उन नारकीय जीवोंकी यह दिन-रातकी पुकार सुनिये। कितने ही जीवोंके मुखसे निकली हुई यह ध्वनि सुनायी देती है—'हाय! मुझे बचाओ, मेरी रक्षा करो, रक्षा करो।' समस्त भूतोंके आत्मा और सबके ईश्वर सर्वव्यापी श्रीहरिकी मैं नित्य आराधना करता हूँ। इस सत्यके प्रभावसे नारकीय जीव तत्काल मुक्त हो जायँ। भगवान् विष्णु सबमें स्थित हैं और सब कुछ भगवान् विष्णुमें स्थित है। इस सत्यसे नारकीय जीवोंका तुरंत क्लेशसे छुटकारा हो जाय। हे कृष्ण! हे अच्युत! हे जगन्नाथ! हे हरे! हे विष्णो! हे जनार्दन! यहाँ नरकके भीतर यातनामें पड़े हुए इन सब जीवोंकी रक्षा कीजिये।

पुष्करके द्वारा उच्चारित भगवान्‌के नाम सुनकर वहाँ नरकमें पड़े हुए सभी पापी तत्काल उससे छुटकारा पा गये। वे सब बड़ी प्रसन्नताके साथ पुष्करसे बोले—'ब्रह्मन्! हम नरकसे मुक्त हो गये। इससे संसारमें आपकी अनुपम कीर्तिका विस्तार हो।' यमराजको भी इस घटनासे बड़ा विस्मय हुआ। वे पुष्करके पास जा प्रसन्नचित्त होकर वरदानके द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करने लगे। वे बोले—'धर्मात्मन्! तुम पृथ्वीपर जाकर सदा वहीं रहो। तुम्हें और तुम्हारे सुहृदोंको भी मुझसे कोई भय नहीं है। जो मनुष्य तुम्हारे माहात्म्यका प्रतिदिन स्मरण करेगा, उसे मेरी कृपासे अपमृत्युका भय नहीं होगा।'

वसिष्ठजी कहते हैं—यमराजके यों कहनेपर पुष्कर पृथ्वीपर लौट आये और यहाँ पूर्ववत् स्वस्थ हो भगवान् मधुसूदनकी पूजा करते हुए रहने लगे। राजन्! मेरे द्वारा कहे हुए महात्मा पुष्करके इस माहात्म्यको जो सुनता है, उसके सारे पापोंका नाश हो जाता है। भगवान् विष्णुका नाम-कीर्तन करनेसे जिस प्रकार नरकसे भी छुटकारा मिल जाता है, वह प्रसंग मैंने तुम्हें सुना दिया। आदिपुरुष परमात्माके नामोंकी थोड़ी-सी भी स्मृति संचित पापोंकी राशिका तत्काल नाश कर देती है, यह बात प्रत्यक्ष देखी गयी है। फिर उन जनार्दनके नामोंका भलीभाँति कीर्तन करनेपर उत्तम फलकी प्राप्ति होगी, इसके लिये तो कहना ही क्या है।*

❑❑

* स्वल्पापि नामस्मृतिरादिपुंसः क्षयं करोत्याहितपापराशेः।
प्रत्यक्षतः किं पुनरत्र दृष्टं संकीर्तिते नाम्नि जनार्दनस्य॥ (२२९। ८३)

माघस्नानके लिये मुख्य-मुख्य तीर्थ और नियम

राजा दिलीपने पूछा—मुने! आप इक्ष्वाकुवंशके गुरु और महात्मा हैं। आपको नमस्कार है। माघस्नानमें संलग्न रहनेवाले पुरुषोंके लिये कौन-कौन-से मुख्य तीर्थ हैं? उनका विस्तारके साथ वर्णन कीजिये। मैं सुनना चाहता हूँ।

वसिष्ठजीने कहा—राजन्! माघमास आनेपर बस्तीसे बाहर जहाँ-कहीं भी जल हो, उसे सब ऋषियोंने गंगाजलके समान बतलाया है; तथापि मैं तुमसे विशेषतः माघस्नानके लिये मुख्य-मुख्य तीर्थोंका वर्णन करता हूँ। पहला है—तीर्थराज प्रयाग। वह बहुत विख्यात तीर्थ है। प्रयाग सब तीर्थोंमें कामनाकी पूर्ति करनेवाला तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला है। उसके सिवा नैमिषारण्य, कुरुक्षेत्र, हरिद्वार, उज्जैन, सरयू, यमुना, द्वारका, अमरावती, सरस्वती और समुद्रका संगम, गंगा-सागर-संगम, कांची, त्र्यम्बकतीर्थ, सप्त-गोदावरीका तट, कालंजर, प्रभास, बदरिकाश्रम, महालय, ओंकारक्षेत्र, पुरुषोत्तमक्षेत्र—जगन्नाथपुरी, गोकर्ण, भृगुकर्ण, भृगुतुंग, पुष्कर, तुंगभद्रा, कावेरी, कृष्णा-वेणी, नर्मदा, सुवर्णमुखरी तथा वेगवती नदी—ये सभी माघमासमें स्नान करनेवालोंके लिये मुख्य तीर्थ हैं। गया नामक जो तीर्थ है, वह पितरोंके लिये तृप्तिदायक और हितकर है। ये भूमिपर विराजमान तीर्थ हैं, जिनका मैंने तुमसे वर्णन किया है। राजन्! अब मानसतीर्थ बतलाता हूँ, सुनो। उनमें भलीभाँति स्नान करनेसे मनुष्य परम गतिको प्राप्त होता है। सत्यतीर्थ, क्षमातीर्थ, इन्द्रिय-निग्रहतीर्थ, सर्वभूतदयातीर्थ, आर्जव (सरलता)-तीर्थ, दानतीर्थ, दम (मनोनिग्रह)-तीर्थ, सन्तोषतीर्थ, ब्रह्मचर्यतीर्थ, नियमतीर्थ, मन्त्र-जपतीर्थ,

प्रियभाषणतीर्थ, ज्ञानतीर्थ, धैर्यतीर्थ, अहिंसातीर्थ, आत्मतीर्थ, ध्यानतीर्थ और शिवस्मरणतीर्थ—ये सभी मानसतीर्थ हैं। मनकी शुद्धि सब तीर्थोंसे उत्तम तीर्थ है। शरीरसे जलमें डुबकी लगा लेना ही स्नान नहीं कहलाता। जिसने मन और इन्द्रियोंके संयममें स्नान किया है, वास्तवमें उसीका स्नान सफल है; क्योंकि वह पवित्र एवं स्नेहयुक्त चित्तवाला माना गया है।*

जो लोभी, चुगलखोर, क्रूर, दम्भी और विषय-लोलुप है, वह सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करके भी पापी और मलिन ही बना रहता है; केवल शरीरकी मैल छुड़ानेसे मनुष्य निर्मल नहीं होता, मनकी मैल धुलनेपर ही वह अत्यन्त निर्मल होता है। जलचर जीव जलमें ही जन्म लेते और उसीमें मर जाते हैं; किन्तु इससे वे स्वर्गमें नहीं जाते, क्योंकि उनके मनकी मैल नहीं धुली रहती। विषयोंमें जो अत्यन्त आसक्ति होती है, उसीको मानसिक मल कहते हैं। विषयोंकी ओरसे वैराग्य हो जाना ही मनकी निर्मलता है। दान, यज्ञ, तपस्या, बाहर-भीतरकी शुद्धि और शास्त्र-ज्ञान भी तीर्थ ही हैं। यदि अन्तःकरणका भाव निर्मल हो तो ये सब-के-सब तीर्थ ही हैं। जिसने इन्द्रिय-समुदायको काबूमें कर लिया है वह मनुष्य जहाँ-जहाँ निवास करता है, वहीं-वहीं उसके लिये कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य और पुष्कर आदि तीर्थ प्रस्तुत हैं। जो ज्ञानसे पवित्र, ध्यानरूपी जलसे परिपूर्ण और राग-द्वेषरूपी मलको धो

---

* सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः॥
सर्वभूतदया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च । दानं तीर्थं दमस्तीर्थं संतोषस्तीर्थमेव च॥
ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं नियमस्तीर्थमुच्यते। मन्त्राणां तु जपस्तीर्थं तीर्थं तु प्रियवादिता॥
ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थमहिंसा तीर्थमेव च। आत्मतीर्थं ध्यानतीर्थं पुनस्तीर्थं शिवस्मृतिः॥
तीर्थानामुत्तमं तीर्थं विशुद्धिर्मनसः पुनः। न जलाप्लुतदेहस्य स्नानमित्यभिधीयते॥
स स्नातो यो दमस्नातः शुचिस्निग्धमना मतः। (२३७। १२—१७)

देनेवाला है, ऐसे मानसतीर्थमें जो स्नान करता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। राजन्! यह मैंने तुम्हें मानसतीर्थका लक्षण बतलाया है।

अब भूतलके तीर्थोंकी पवित्रताका कारण सुनो। जैसे शरीरके कुछ भाग परम पवित्र माने गये हैं, उसी प्रकार पृथ्वीके भी कुछ स्थान अत्यन्त पुण्यमय माने जाते हैं। भूमिके अद्भुत प्रभाव, जलकी शक्ति और मुनियोंके अनुग्रहपूर्वक निवाससे तीर्थोंको पवित्र बताया गया है; इसलिये भौम और मानस सभी तीर्थोंमें जो नित्य स्नान करता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। प्रचुर दक्षिणावाले अग्निष्टोम आदि यज्ञोंसे यजन करके भी मनुष्य उस फलको नहीं पाता जो उसे तीर्थोंमें जानेसे प्राप्त होता है। जिसके दोनों हाथ, दोनों पैर और मन भलीभाँति काबूमें हों तथा जो विद्या, तप और कीर्तिसे सम्पन्न हो, वह तीर्थके फलका भागी होता है। जो प्रतिग्रहसे निवृत्त, जिस-किसी वस्तुसे भी सन्तुष्ट रहनेवाला और अहंकारसे मुक्त है, वह तीर्थके फलका भागी होता है। श्रद्धापूर्वक एकाग्रचित्त हो तीर्थोंकी यात्रा करनेवाला धीर पुरुष कृतघ्न हो तो भी शुद्ध हो जाता है; फिर जो शुद्ध कर्म करता है, उसकी तो बात ही क्या है? वह मनुष्य पशु-पक्षियोंकी योनिमें नहीं पड़ता, बुरे देशमें जन्म नहीं लेता, दुःखका भागी नहीं होता, स्वर्गलोकमें जाता और मोक्षका उपाय भी प्राप्त कर लेता है। अश्रद्धालु, पापात्मा, नास्तिक, संशयात्मा और केवल युक्तिवादका सहारा लेनेवाला—ये पाँच प्रकारके मनुष्य तीर्थफलके भागी नहीं होते। जो शास्त्रोक्त तीर्थोंमें विधिपूर्वक विचरते और सब प्रकारके द्वन्द्वोंको सहन करते हैं वे धीर मनुष्य स्वर्गलोकमें जाते हैं। तीर्थमें अर्घ्य और आवाहनके बिना ही श्राद्ध करना

चाहिये। वह श्राद्धके योग्य काल हो या न हो, तीर्थमें बिना विलम्ब किये श्राद्ध और तर्पण करना उचित है; उसमें विघ्न नहीं डालना चाहिये। अन्य कार्यके प्रसंगसे भी तीर्थमें पहुँच जानेपर स्नान करना चाहिये। ऐसा करनेसे तीर्थयात्राका नहीं, परन्तु तीर्थस्नानका फल अवश्य प्राप्त होता है। तीर्थमें नहानेसे पापी मनुष्योंके पापकी शान्ति होती है। जिनका हृदय शुद्ध है, उन मनुष्योंको तीर्थ शास्त्रोक्त फल प्रदान करनेवाला होता है। जो दूसरेके लिये तीर्थयात्रा करता है, वह भी उसके पुण्यका सोलहवाँ अंश प्राप्त कर लेता है। कुशकी प्रतिमा बनाकर तीर्थके जलमें उसे स्नान करावे। जिसके उद्देश्यसे उस प्रतिमाको स्नान कराया जाता है, वह पुरुष तीर्थस्नानके पुण्यका आठवाँ भाग प्राप्त करता है। तीर्थमें जाकर उपवास करना और सिरके बालोंका मुण्डन कराना चाहिये। मुण्डनसे मस्तकके पाप नष्ट हो जाते हैं। जिस दिन तीर्थमें पहुँचे, उसके पहले दिन उपवास करे और दूसरे दिन श्राद्ध एवं दान करे। तीर्थके प्रसंगमें मैंने श्राद्धको भी तीर्थ बतलाया है। यह स्वर्गका साधन तो है ही, मोक्षप्राप्तिका भी उपाय है।

इस प्रकार नियमका आश्रय ले माघमासमें व्रत ग्रहण करना चाहिये और उस समय ऐसी ही तीर्थयात्रा करनी चाहिये। माघमासमें स्नान करनेवाला पुरुष सब जगह कुछ-न-कुछ दान अवश्य करे। बेर, केला और आँवलेका फल, सेरभर घी, सेरभर तिल, पान, एक आढक (सोलह सेर) चावल, कुम्हड़ा और खिचड़ी—ये नौ वस्तुएँ प्रतिदिन ब्राह्मणोंको दान करनी चाहिये। जिस किसी प्रकार हो सके, माघमासको व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिये। किंचित् सूर्योदय होते-होते माघस्नान करना चाहिये। तथा माघस्नान करनेवाले पुरुषको यथाशक्ति शौच-सन्तोष आदि

नियमोंका पालन करना चाहिये। विशेषतः ब्राह्मणों और साधु-संन्यासियोंको पकवान भोजन कराना चाहिये। जाड़ेका कष्ट दूर करनेके लिये बोझ-के-बोझ सूखे काठ दान करे। रूईभरा अंगा, शय्या, गद्दा, यज्ञोपवीत, लाल वस्त्र, रूईदार रजाई, जायफल, लौंग, बहुत-से पान, विचित्र-विचित्र कम्बल, हवासे बचानेवाले गृह, मुलायम जूते और सुगन्धित उबटन दान करे। माघस्नानपूर्वक घी, कम्बल, पूजनसामग्री, काला अगर, धूप, मोटी बत्तीवाले दीप और भाँति-भाँतिके नैवेद्यसे माघस्नानजनित फलकी प्राप्तिके लिये भगवान् माधवकी पूजा करे। माघमासमें डुबकी लगानेसे सारे दोष नष्ट हो जाते हैं और अनेकों जन्मोंके उपार्जित सम्पूर्ण महापाप तत्काल विलीन हो जाते हैं। यह माघस्नान ही मंगलका साधन है, यही वास्तवमें धनका उपार्जन है तथा यही इस जीवनका फल है। भला माघस्नान, मनुष्योंका कौन-कौन-सा कार्य नहीं सिद्ध करता? वह पुत्र, मित्र, कलत्र, राज्य, स्वर्ग तथा मोक्षका भी देनेवाला है।

❑❑

माघमासके स्नानसे सुव्रतको दिव्यलोककी प्राप्ति

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! सुनो, मैं तुमसे सुव्रतके चरित्रका वर्णन करता हूँ। यह शुभ प्रसंग श्रोताओंके समस्त पापोंको तत्काल हर लेनेवाला है। नर्मदाके रमणीय तटपर एक बहुत बड़ा अग्रहार—ब्राह्मणोंको दानमें मिला हुआ गाँव था। वह लोगोंमें अकलंक नामसे विख्यात था, उसमें वेदोंके ज्ञाता और धर्मात्मा ब्राह्मण निवास करते थे। वह धन-धान्यसे भरा था और वेदोंके गम्भीर घोषसे सम्पूर्ण दिशाओंको मुखरित किये रहता था। उस गाँवमें एक श्रेष्ठ ब्राह्मण थे, जो सुव्रतके नामसे विख्यात थे। उन्होंने सम्पूर्ण वेदोंका अध्ययन किया था। वेदार्थके वे अच्छे ज्ञाता थे, धर्मशास्त्रोंके अर्थका भी पूर्ण ज्ञान रखते थे, पुराणोंकी व्याख्या करनेमें वे बड़े कुशल थे। वेदांगोंका अभ्यास करके उन्होंने तर्कशास्त्र, ज्यौतिषशास्त्र, गजविद्या, अश्वविद्या, चौंसठ कलाएँ, मन्त्रशास्त्र, सांख्यशास्त्र तथा योगशास्त्रका भी अध्ययन किया था। वे अनेक देशोंकी लिपियाँ और नाना प्रकारकी भाषाएँ जानते थे। यह सब कुछ उन्होंने धन कमानेके लिये ही सीखा था तथा लोभसे मोहित होनेके कारण अपने भिन्न-भिन्न गुरुओंको गुरुदक्षिणा भी नहीं दी थी। उपायोंके जानकार तो थे ही, उन्होंने उक्त उपायोंसे बहुत कुछ धनका उपार्जन किया। उनके मनमें बड़ा लोभ था; इसलिये वे अन्यायसे भी धन कमाया करते थे। जो वस्तु बेचनेके योग्य नहीं है, उसको भी बेचते और जंगलकी वस्तुओंका भी विक्रय किया करते थे; उन्होंने चाण्डाल आदिसे भी दान लिया, कन्या बेची तथा गौ, तिल, चावल, रस और तेलका भी विक्रय किया। वे दूसरोंके लिये तीर्थमें जाते,

दक्षिणा लेकर देवताकी पूजा करते, वेतन लेकर पढ़ाते और दूसरोंके घर खाते थे; इतना ही नहीं, वे नमक, पानी, दूध, दही और पक्वान्न भी बेचा करते थे। इस तरह अनेक उपायोंसे उन्होंने यत्नपूर्वक धन कमाया। धनके पीछे उन्होंने नित्य-नैमित्तिक कर्म तक छोड़ दिया था। न खाते थे, न दान करते थे। हमेशा अपना धन गिनते रहते थे कि कब कितना जमा हुआ। इस प्रकार उन्होंने एक लाख स्वर्णमुद्राएँ उपार्जित कर लीं। धनोपार्जनमें लगे-लगे ही वृद्धावस्था आ गयी और सारा शरीर जर्जर हो गया। कालके प्रभावसे समस्त इन्द्रियाँ शिथिल हो गयीं। अब वे उठने और कहीं आने-जानेमें असमर्थ हो गये। धनोपार्जनका काम बन्द हो जानेसे स्त्रीसहित ब्राह्मण देवता बहुत दुःखी हुए। इस प्रकार चिन्ता करते-करते जब उनका चित्त बहुत व्याकुल हो गया, तब उनके मनमें सहसा विवेकका प्रादुर्भाव हुआ।

सुव्रत अपने-आप कहने लगे—मैंने नीच प्रतिग्रहसे, नहीं बेचने योग्य वस्तुओंके बेचनेसे तथा तपस्या आदिका भी विक्रय करनेसे यह धन जमा किया है; फिर भी मुझे शान्ति नहीं मिली। मेरी तृष्णा अत्यन्त दुस्सह है। यह मेरु पर्वतके समान असंख्य सुवर्ण पानेकी अभिलाषा रखती है। अहो! मेरा मन महान् कष्टदायक और सम्पूर्ण क्लेशोंका कारण है। सब कामनाओंको पाकर भी यह फिर दूसरी-दूसरी नवीन कामनाओंको प्राप्त करना चाहता है। बूढ़े होनेपर सिरके बाल पक जाते हैं, दाँत टूट जाते हैं, आँख और कानोंकी शक्ति भी क्षीण हो जाती है; किन्तु एक तृष्णा ही ऐसी है, जो उस समय भी नित्य तरुण होती जाती है। जिसके मनमें कष्टदायिनी आशा मौजूद है, वह विद्वान् होकर भी अज्ञानी है, अशान्त है, क्रोधी है और बुद्धिमान् होकर भी

अत्यन्त मूर्ख है। आशा मनुष्योंको नष्ट करनेवाली है, उसे अग्निके समान जानना चाहिये; अतः जो विद्वान् सनातन पदको प्राप्त करना चाहता हो, वह आशाका परित्याग कर दे। बल, तेज, यश, विद्या, सम्मान, शास्त्रज्ञान तथा उत्तम कुलमें जन्म— इन सबको आशा शीघ्र ही नष्ट कर देती है। मैंने भी इसी प्रकार बहुत क्लेश उठाकर यह धन कमाया है। वृद्धावस्थाने मेरे शरीरको भी गला दिया और सारा बल भी हर लिया। अबसे मैं श्रद्धापूर्वक परलोक सुधारनेके लिये प्रयत्न करूँगा।

ऐसा निश्चय करके ब्राह्मण देवता जब धर्मके मार्गपर चलनेके लिये उत्सुक हुए, उसी दिन रातमें कुछ चोर उनके घरमें घुस आये। आधी रातका समय था; आततायी चोरोंने ब्राह्मणको खूब कसकर बाँध दिया और सारा धन लेकर चंपत हुए। चोरोंके द्वारा धन छिन जानेपर ब्राह्मण अत्यन्त दारुण विलाप करने लगा— 'हाय! मेरा धन कमाना धर्म, भोग अथवा मोक्ष—किसी भी काममें नहीं आया। न तो मैंने उसे भोगा और न दान ही किया। फिर किसलिये धनका उपार्जन किया? हाय! हाय! मैंने अपने आत्माको धोखेमें डालकर यह क्या किया? सब जगहसे दान लिया और मदिरातकका विक्रय किया। पहले तो एक ही गौका प्रतिग्रह नहीं लेना चाहिये। यदि एकको ले लिया तो दूसरीका प्रतिग्रह लेना कदापि उचित नहीं है। उस गौको भी यदि बेच दिया जाय तो वह सात पीढ़ियोंको दग्ध कर देती है। इस बातको जानते हुए भी मैंने लोभवश ऐसे-ऐसे पाप किये हैं। धन कमानेके जोशमें मैंने एक दिन भी एकाग्रचित्त होकर अच्छी तरह सन्ध्योपासना नहीं की। अगर्भ (ध्यानरहित) या सगर्भ (ध्यानसहित) प्राणायाम भी नहीं किया। तीन बार जल पीकर और दो बार ओठ पोंछकर

भलीभाँति आचमन नहीं किया। उतावली छोड़कर और हाथमें कुशकी पवित्री लेकर मैंने कभी गायत्रीमन्त्रका वाचिक, उपांशु अथवा मानस जप भी नहीं किया। जीवोंका बन्धन छुड़ानेवाले महादेवजीकी आराधना नहीं की। जो मन्त्र पढ़कर अथवा बिना मन्त्रके ही शिवलिंगके ऊपर एक पत्ता या फूल डाल देता है, उसकी करोड़ों पीढ़ियोंका उद्धार हो जाता है; किन्तु मैंने कभी ऐसा नहीं किया। सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाले भगवान् विष्णुको कभी सन्तुष्ट नहीं किया। पाँच प्रकारकी हत्याओंके पाप शान्त करनेवाले पंचयज्ञोंका अनुष्ठान नहीं किया। स्वर्गलोककी प्राप्ति करानेवाले अतिथिके सत्कारसे भी वंचित रहा। संन्यासीका सत्कार करके उसे अन्नकी भिक्षा नहीं दी। ब्रह्मचारीको विधिपूर्वक अतिथिके योग्य भोजन नहीं दिया।

मैंने ब्राह्मणोंको भाँति-भाँतिके सुन्दर एवं महीन वस्त्र नहीं अर्पण किये। सब पापोंका नाश करनेके लिये प्रज्वलित अग्निमें घीसे भीगे हुए मन्त्रपूत तिलोंका हवन नहीं किया। श्रीसूक्त, पावमानी ऋचा, मण्डल ब्राह्मण, पुरुषसूक्त और परमपवित्र शतरुद्रिय मन्त्रका जप नहीं किया। पीपलके वृक्षका सेवन नहीं किया। अर्कत्रयोदशीका व्रत त्याग दिया। वह भी यदि रातको अथवा शुक्रवारके दिन पड़े, तो तत्काल सब पापोंको हरनेवाली है; किन्तु मैंने उसकी भी उपेक्षा कर दी। ठंढी छायावाले सघन वृक्षका पौधा नहीं लगाया। सुन्दर शय्या और मुलायम गद्देका दान नहीं किया। पंखा, छतरी, पान तथा मुखको सुगन्धित करनेवाली और कोई वस्तु भी ब्राह्मणको दान नहीं दी। नित्य श्राद्ध, भूतबलि तथा अतिथि-पूजा भी नहीं की। उपर्युक्त उत्तम वस्तुओंका जो लोग दान करते हैं, वे पुण्यके भागी मनुष्य

यमलोकमें यमराजको, यमदूतोंको और यमलोककी यातनाओंको नहीं देखते; किन्तु मैंने यह भी नहीं किया। गौओंको ग्रास नहीं दिया। उनके शरीरको कभी नहीं खुजलाया, कीचड़में फँसी हुई गौको, जो गोलोकमें सुख देनेवाली होती है, मैंने कभी नहीं निकाला। याचकोंको उनकी मुँहमाँगी वस्तुएँ देकर कभी सन्तुष्ट नहीं किया। भगवान् विष्णुकी पूजाके लिये कभी तुलसीका वृक्ष नहीं लगाया। शालग्रामशिलाके तीर्थभूत चरणामृतको न तो कभी पीया और न मस्तकपर ही चढ़ाया। एक भी पुण्यमयी एकादशी तिथिको उपवास नहीं किया। शिवलोक प्रदान करनेवाली शिवरात्रिका भी व्रत नहीं किया। वेद, शास्त्र, धन, स्त्री, पुत्र, खेत और अटारी आदि वस्तुएँ इस लोकसे जाते समय मेरे साथ नहीं जायँगी। अब तो मैं बिलकुल असमर्थ हो गया; अतः कोई उद्योग भी नहीं कर सकूँगा। क्या करूँ, कहाँ जाऊँ। हाय! मुझपर बड़ा भारी कष्ट आ पड़ा। मेरे पास परलोकका राहखर्च भी नहीं है।'

इस प्रकार व्याकुलचित्त होकर सुव्रतने मन-ही-मन विचार किया—'अहो! मेरी समझमें आ गया, आ गया, आ गया। मैं धन कमानेके लिये उत्तम देश काश्मीरको जा रहा था। मार्गमें भागीरथी गंगाके तटपर मुझे कुछ ब्राह्मण दिखायी दिये, जो वेदोंके पारगामी विद्वान् थे। वे प्रातःकाल माघस्नान करके बैठे थे। वहाँ किसी पौराणिक विद्वान्‌ने उस समय यह आधा श्लोक कहा था—

माघे निमग्नाः सलिले सुशीते
विमुक्तपापास्त्रिदिवं प्रयान्ति॥

(२३८।७८)

'माघमासमें शीतल जलके भीतर डुबकी लगानेवाले मनुष्य पापमुक्त हो स्वर्गलोकमें जाते हैं।'

पुराणमेंसे मैंने इस श्लोकको सुना है। यह बहुत ही प्रामाणिक है; अतः इसके अनुसार मुझे माघका स्नान करना ही चाहिये।

मन-ही-मन ऐसा निश्चय करके सुव्रतने अपने मनको सुस्थिर किया और नौ दिनोंतक नर्मदाके जलमें माघमासका स्नान किया। उसके बाद स्नान करनेकी भी शक्ति नहीं रह गयी। वे दसवें दिन किसी तरह नर्मदाजीमें गये और विधिपूर्वक स्नान करके तटपर आये। उस समय शीतसे पीड़ित होकर उन्होंने प्राण त्याग दिया। उसी समय मेरुगिरिके समान तेजस्वी विमान आया और माघस्नानके प्रभावसे सुव्रत उसपर आरूढ़ हो स्वर्गलोकको चले गये। वहाँ एक मन्वन्तरतक निवास करके वे पुनः इस पृथ्वीपर ब्राह्मण हुए। फिर प्रयागमें माघस्नान करके उन्होंने ब्रह्मलोक प्राप्त किया।

पद्मपुराणान्तर्गत माघमास-माहात्म्य सम्पूर्ण

❑❑